Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तेरे गुन-गौरव सुनाऊँ
आजु भूतल पै।
यातैं मातु सारदे
सुधारि निज वीणा तू॥

श्री मध्यभारत
हिन्दी साहित्य समिति, इन्दौर की
मासिक मुख-पत्रिका

श्री वेंकटाचार्य स्वामी
(प्रधान-मंत्री)
पदेन सम्पादक

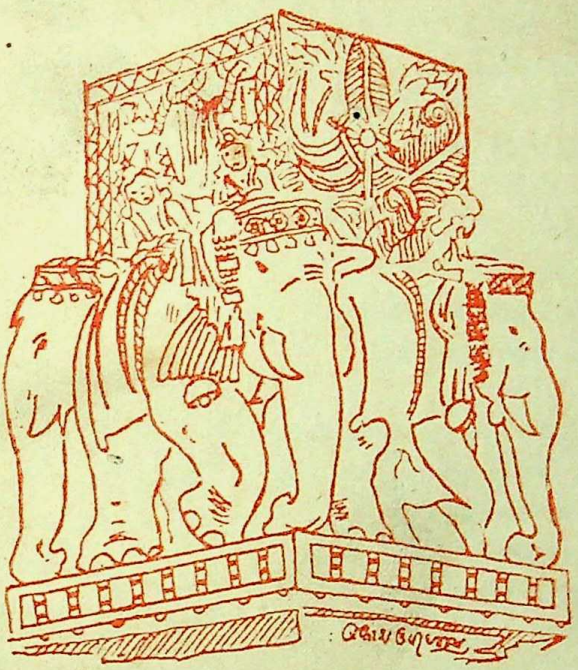

सम्पादक
मोहनलाल उपाध्याय 'निर्मोही'

वार्षिक : दस रुपये
एक प्रति : एक रुपया
इस अंक का : चार रुपये

मालवी-अंक

(पूर्वार्द्ध)

[भाषा एवं साहित्य-खण्ड]

आरम्भ : १९२७ ई०
वर्ष ४४ : अंक ११

सम्पर्क
११, रवीन्द्रनाथ टैगोर मार्ग
दक्षिण तुकोगंज,
इन्दौर-१ (म. प्र.)

आश्विन, कार्तिक वि. सं. २०२८
शक संवत् १८९३
सितम्बर-अक्टूबर १९७१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वीणा

अनुक्रम

सम्पादकीय

भाषा-खण्ड

मालवा की धरती : डॉ० चिन्तामणि उपाध्याय २
मालवी भाषा एक विहंगम दृष्टि : ५६
मालव, मालव जनपद और उसका क्षेत्र विस्तार :
डॉ० सूर्यनारायण व्यास १०
मालव गण : भाषा का व्यापक रूप १७
जिप्सी जन जाति और मालव भाषा : १८
मध्य भारत की बोलियाँ और मालवा : डॉ० श्याम परमार २४
मालवी का भाषा वैज्ञानिक अध्ययन : डॉ० वंशीधर २६
मालवी भाषा क्षेत्र मानचित्र : ३२
मालवी-गद्य कुछ रूप : (i) धक्का को चमत्कार—श्री निवास जोशी ३३
(ii) उज्जैन का पंडा होण की भाषा को लोच : शिव चौरसिया ३५
(iii) केवात की केण्यां : सौ. मनोरमा उपाध्याय ३७
मालवी के कुछ अर्थ व्यंजक शब्द : डॉ० एस. एल. तैनगुरिया ४०
मालवी के संदर्भ में : डॉ० उदयसिंह भटनागर ४१
वर्तमान मालवी भाषा भाषी क्षेत्र : ६०

साहित्य-खण्ड

मालवा का साहित्य और संस्कृति : श्यामू संन्यासी २
मालवा की लोक कथाएँ : प्रहलादचन्द्र जोशी ८
मालवी दोहे (छल्ला) : चिन्तामणि उपाध्याय १९
मालवी के मृत्यु गीत : " ४९
गुजरात मालवा के सेतु हमारे लोकगीत : पुष्कर चन्दरवाकर २०
मत रो (एकांकी) : चन्द्रशेखर दुबे २५
मालवी लोक गीतों में नारी : श्रीमती सुशीला जैन २९
नारी का विराट शृंगार : कन्हैयालाल गौड़ ३३
मालवी कहावतों का तुलनात्मक अध्ययन : श्रीचंद जैन ३५
कतिपय मालवी कहावतें : प्रकाश उपाध्याय ३९
मालवी का प्रहेलिका साहित्य : रूपलाल ग्रामिक ४१
कतिपय मालवी पहेलियाँ : लक्ष्मीनारायण जोशी ४२

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मालवी लोकगीत, विधु गीत, [illegible] : [illegible] ४५
आधुनिक मालवी कविता : डॉ. श्यामसुन्दर व्यास ५१
मालवी के आदि कवि पं. पन्नालाल नायाब : वासुदेव शर्मा ५६
मालवी काव्य में राष्ट्रीय चेतना : बालमुकुन्द गर्ग ६०

कविताएँ :

मालव भूमि : पं. हरिभाऊ उपाध्याय
मालव कवि और पार्वती : वीरेन्द्रकुमार जैन ६४
मालवी मेला : अनन्तकुमार पाषाण ६५
माटी की गंध : म्हारा मालवा की माटी : सौ. पुखराज पाण्डेय ६८
एकलव्य हूँ : मदनमोहन व्यास ६८
जीवन फूल चढ़ई डालो : मोहन जोशी ६९
बरस्यो हे मन हरसावे : आनन्दराव दुबे ६९
(ii) कदी-कदी एसो बी हुई जाय हे : ,, ७१
भाटो फेंकी ने माथो मांड्यो : भावसार 'बा' ७०
पद्मा को पाणी : विक्रम विक्रान्त ७०
म्हारा देश में : मोहन सोनी ७०
मालव महिमा : नटवरलाल स्नेही ७१
पूरब में सूरज उग्यो : नरहरि पटेल ७१
मालवी व्यंग्य कविता : हरीश निगम ७२
चटक म्हारा चम्पा : बालकवि बैरागी ७३
अब आयो उजालो रे : नरेन्द्रसिंह तोमर ७४
परभोगी मालवो : भागीरथ दुबे 'गौतम' ७५
म्हारो प्यारो गाँव : ओमप्रकाश पंड्या ७६
कां वांसली वजाड़ेरे : पूनमचन्द सोनी ७६
विरहण अने बेलड़ी : गिरवरसिंह भँवर ७७
आज चली परदेस : सुलतान मामा ७८

निकष :

मालवी लोक साहित्य की दो
दिशा बोधक कृतियाँ : प्रकाश उपाध्याय ७९
माटी की सोरम : डॉ. श्यामसुन्दर व्यास ८२

मालवी-मेला

मालवी मेला मेरी नजर में : 'निर्मोही' २
रतलाम को मालवी मेलो : जुगलकिशोर द्विवेदी १५
मालवी शोध संस्थान योजना : परमेश्वरदत्त शर्मा १८
मालवी मेले की अन्तरंग झलकियाँ : रामनारायण उपाध्याय २१
मालव-गंगा के भगीरथ डॉ. उपाध्याय : पुरुषोत्तम सत्यप्रेमी २५
: बालमुकुन्द गर्ग, ,,
मालवी मेला कुछ उपलब्धियाँ : मदनकुमार चौबे २८
समिति समाचार : प्राप्ति स्वीकार : ३१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मालव-भूमि

जय सुफल मालव-भूमि !

जय विन्ध्य-शृंग विहारिणी, भारत हृदय उल्लासिनी,
जय आम्र मोर सुहासिनी, श्री प्रकृति मानस ऊर्मि,

जय सुफल मालव-भूमि !

पट-सस्य-श्यामल-शोभिनी, शरदिन्दु नयन विलोकिनी
वैभव-वसन्त समीरिणी, रवि रम्य मंगल मूर्ति ।

जय-जय सुफल मालव-भूमि !

महाकाल-जननी विजयिनी, बल-धर्म-कर्म पयस्विनी,
जय प्रथम-संवत्-प्रसविनी, निज ओज दीपित ज्योति ।

जय सुफल मालव-भूमि !

कलकण्ठ कविता गायिनी, संदेश ईश प्रसारिणी
बल तेज-प्रेम-प्रकाशिनी, तव सुभग सात्विक स्फूर्ति ।

जय सुफल मालव-भूमि !

•

हरिभाऊ उपाध्याय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्पादकीय

मेला एक बोली का

यूं तो हमारे सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, सांस्कृतिक एवं राजनीतिक परिवेश में मेले-ठेलों का आयोजन होता ही रहता है किन्तु किसी बोली के मेले की बात कुछ अजीब सी लगती है। ऐसे मेले की बात जिसमें बड़े से लगाकर छोटा साहित्यकार, मंत्री से लगाकर संत्री-तंत्री तक एक ही जाजम पर बैठ कर अपनी बोली के भविष्य एवं उसके भाषा-साहित्य के सम्बन्ध में कुछ सोचें, कुछ विचारें और उसकी संरक्षा की दिशा में कुछ संकल्प लें। रतलाम में ८, ९ जून को आयोजित मालवी-मेले में यही सब कुछ हुआ।

इस राष्ट्रीयता के युग में क्षेत्रीयता और प्रान्तीयता की कल्पना करना हृदय की संकीर्णता ही का परिचय देना है। यह बड़ी इकाइयों का युग है, छोटी इकाइयों का नहीं। राष्ट्रीय भाषाओं के इस विकसनशील युग में बोलियों से चिपक कर उनकी चर्चा करना कुछ अजीब सा लगता है, किन्तु बोलियों का प्रश्न भी उतना ही ज्वलन्त है, जितना किसी राष्ट्र की संस्कृति का प्रश्न। युग-युग से केवल साहित्यिक भाषाओं ही का अध्ययन होता आया है और बोलियों की निरन्तर उपेक्षा। जिसका परिणाम इतना दूषित हुआ है कि हमारी कई बोलियाँ लुप्त होती जा रही हैं, यहाँ तक कि उनके नामलेवा भी शेष नहीं बचे हैं। यदि वे बोलियां आज हमारे मध्य जीवित होतीं तो हम उनकी सांस्कृतिक यात्रा के परिवेश में उस युग की भाषा का वास्तविक मूल्यांकन कर सकते। ओल्लरी नामकी एक द्राविड़ी बोली जिसके बोलने वालों की संख्या सन् १९४१ में ५४३ थी, वह शनैः शनैः १९५१ तक काल के गाल में समा गई और उसका नामलेवा भी शेष नहीं बचा। इसका मूल कारण है बड़ी-बड़ी भाषाओं की सर्वग्रासिता। जिस प्रकार छोटे-छोटे राज्यों के स्थान पर बड़े बड़े राज्यों का निर्माण हो रहा है, उसी तरह बोलियों का स्थान भाषाएँ लेती जा रही हैं। आज हम देखते हैं कि सामुदायिक विकास एवं कल्याण योजनाओं के फलस्वरूप पहाड़ी और जंगली जातियाँ मैदानों में उतर रही हैं। बड़े-बड़े कल कारखानों का आकर्षण उन्हें भी अपनी ओर खींचने में सफल होता जा रहा है, हजारों लाखों पहाड़ी एवं आदिवासी विकसनशील नगरों को आबाद कर चुके हैं। शिक्षा का व्यापक प्रसार होता जा रहा है। यातायत के साधनों से सामाजिक परिस्थितियाँ बदलती जा रही हैं। ग्राम सिमट रहे हैं, कस्बे, और नगर आबाद हो रहे हैं। आज कोई इस बात का निश्चयात्मक उत्तर भी नहीं दे सकता कि अगले ५० वर्षों में हमारे देश की सांस्कृतिक विरासत ये कितनी ही बोलियाँ इस परिवर्तन, यंत्रवाद और नव्यालोक की आंधी में उड़कर नष्ट हो जाएँगी। ग्रियर्सन ने अपने भाषा सर्वेक्षण में हमारे देश की १७९ भाषाओं और ५४४ बोलियों का विवरण दिया है। आज इस बात का मूल्यांकन करने की आवश्यकता है कि इस उल्लिखित संख्या में से कितनी बोलियाँ बची हैं और कितनी काल के गाल में समा गई हैं। प्रश्न सामान्य ही नहीं गंभीर भी है। दक्षिण में अरुकु घाटी स्थित २० विभिन्न आदिवासी जातियों का पता चला है जो एक ही पीढ़ी में अपनी जंगली (कोल-संथाली) बोली छोड़कर टूटी-फूटी उड़िया या तेलुगु बोलने लगी हैं, अब उनकी अगली पीढ़ी बोली का कौन सा रूप ग्रहण करेगी यह लगभग निश्चत और स्पष्ट सा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ही है । बोलियों पर कार्य करने वाले कतिपय विद्वानों ने हाल ही में हव्याका, कोटा, मालनाड आदि कन्नड़ की अनेक बोलियों का पता लगाया है । अब इन बोलियों को बोलने वाले थोड़े ही परिवार शेष बचे हैं । श्री ग्रियर्सन ने भी इन बोलियों का अपने भाषा-सर्वेक्षण में कहीं उल्लेख नहीं किया है । बिहार राष्ट्रभाषा परिषद् को अपनी बोली विषयक खोज में 'खुडापल्ता' नामक बोली का पता चला है । इसके बोलने वाले इनेगिने हैं । यदि ये आदिवासी रोजगार की तलाश में भिलाई और राउर केला के औद्योगिक केन्द्रों में जा बसते हैं या किसी दैवी विपत्ति के शिकार हो जाते हैं तो हमारे देश की भाषा सम्बन्धी एक मूल्यवान सम्पत्ति नष्ट हो जायगी ।

हमारे देश में परिवर्तन की लहर कितने वेग से प्रवाहित हो रही है । निष्क्रमणार्थियों की भीड़ें लगातार आती जा रही हैं । पाकिस्तान के अनेक प्रान्तों की सीमावर्ती बोलियाँ निश्चित ही एक नया रूपग्रहण करेंगी । वे जहाँ भी जाएँगे वहाँ की स्थानीय बोली पर अवश्य ही प्रभाव डालेंगे । यातायात की सुविधा, अन्तर्प्रान्तीय और अन्तर्जातीय वैवाहिक सम्बन्धों, राजनीतिक, सक्रियता जागृति, अनिवार्य शिक्षा, सामाजिक विघटन भी इन पर अपना प्रभाव डाले बिना न रहेंगे ।

जो ग्रामीण समाज प्राचीनकाल में सहस्राब्दियों में, मध्यकाल में शताब्दियों में बदलता था वह अब हमारे देखते-देखते दशाब्दियों में बदलने लगा है । इस संक्रमणकाल में तो इन बोलियों और इनके साहित्य की रक्षा का प्रश्न और भी ज्वलन्त हो उठा है । समाजशास्त्र, नृतत्वशास्त्र, भाषा-विज्ञान आदि की दृष्टि से इनके अस्तित्व की अभिरक्षा आज की अनिवार्य आवश्यकता बन चुकी है । पराधीनता की दशा में भारत ने अपनी सांस्कृतिक विरासतों का अपने ही हाथों गला घोटा है, और आज उनकी उपेक्षा फिर हमें उसी दशा की ओर ले जा रही है । मानव भूगोल, नृतत्वशास्त्र, इतिहास (आंचलिक), समाजशास्त्र (जिसमें रीतिरिवाज, लोक विश्वास, जन-संस्कृति आदि के कई पक्ष निहित हैं) और लोक मनोविज्ञान के अध्ययन का आधार बोलियों का सूक्ष्म अध्ययन ही हो सकता है । आज 'बोली' भाषा-विज्ञान का महत्वपूर्ण अंग बन चुकी है । किन्तु परिवर्तित परिस्थितियों का प्रवर्तन यदि बोलियों पर निरन्तर प्रहार करता रहा तो निश्चित ही बोलियाँ बिखर जाएँगी और उनका अस्तित्व ही शून्य में विलीन हो जाएगा, जैसा भूतकाल में कई बोलियों का हो चुका है । बोली किसी परिषद् या मेले के माध्यम से, किसी परिषद् के सभापति या लोकसंस्कृति के सम्मेलनों के अध्यक्षों के व्याख्यानों से भाषा नहीं बन जाएगी । बोली को परखने की वैज्ञानिक आँख चाहिए । उनका निरीक्षण, परीक्षण, विश्लेषण और संश्लेषण करने वाली विवेकशील बुद्धि चाहिए । इस क्षेत्र में पक्षपात तथा भावुकता से भी काम नहीं चल सकता । यहाँ हमें बोलियों के कल्याण की चर्चा नहीं करनी है, हमारा चर्चित विषय बोलियों की रक्षा एवं अध्ययन होना चाहिए । इसके लिए अपेक्षा है वस्तुपरक दृष्टिकोण की ।

और मध्यप्रदेश में यदि इस कार्य का श्रीगणेश रतलाम के इस 'मालवी मेले' से होता है तो यह शुभ लक्षण है । बोलियों की दृष्टि से मध्यप्रदेश अत्यन्त ही सम्पन्न है । यहाँ माल्वी, निमाड़ी, बुन्देली, बघेली और छत्तीसगढ़ी जैसी पाँच प्रमुख बोलियाँ बोली जाती हैं । इन बोलियों के अन्तराल में इतिहास, समाज, नृतत्व एवं मानव भूगोल के विकास के अमूल्य तत्व निहित हैं । आज स्वाधीन भारत के प्रबुद्ध नागरिकों का कर्त्तव्य है कि इन बोलियों के अध्ययन को व्यापक दिशा दें, ताकि ये संक्रमण के आवर्तन में अपने मूल रूप ही को न खो दें; शिष्ट समाज में हमारी बोली गँवारू-बोली न कहलावे, हमें उसे बोलते समय किंचित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
भी लज्जा का अनुभव न हो। हमारे सन्त और कवियों ने हमारी इस विरासत की पूर्ण रक्षा की है। कबीर की रचनाओं में तो आपको भारत की अनेक बोलियों के शब्दों का संग्रह मिलेगा। नानक में पंजाबी, दादू में जयपुरी, मीरा में राजस्थानी, केशव में बुन्देली के शब्दों का समावेश तो अवश्य ही मिलेगा। इस समावेश से कहाँ उनके काव्य में भदेसपन आ गया है? जब हमारे शिष्ट शब्दकोश में शब्दों की कमी पड़ जाती है, तभी तो न हम हमारी बोलियों से शब्द उठाकर अपना काम चला लेते हैं? यहीं नहीं साहित्यिक भाषा की कृत्रिमता पर तो कभी-कभी हम खीज भी उठते हैं और कह बैठते हैं—"बन्द करो यह वेद मन्त्रों का पाठ और सीधी सादी बोली में बात करो।" यदि वाल्मीकि रामायण से ही समाज का काम चल जाता तो तुलसी अवधी में रामचरित मानस का निर्माण क्यों करते? यह स्पष्ट है कि बोली ही वह माध्यम है जो साहित्यिक भाषा की कृत्रिमता, रूढ़ि और अप्रेषणीयता से जनमानस को मुक्त करता है। युग का प्रत्येक साहित्यकार बोली के सहज प्रवाह, नैसर्गिक सारस्य, सारल्य और सीधे प्रभाव से लाभ उठाना चाहता है और बोली के शब्दों को शिष्ट साहित्य के शब्दों के साथ रखने में हिचपिचाता नहीं है। इसका प्रमाण, दिनकर, राधिकारमण-प्रसादसिंह, बेनीपुरी, रेणु, शिवपूजन सहाय, वृन्दावनलाल वर्मा, मैथिलीशरण गुप्त, प्रेमचन्द, राहुल सांकृत्यायन, रामनरेश त्रिपाठी आदि अनेक कवियों कथाकारों एवं लेखकों का साहित्य है। अब वह समय आ गया है जब हमें अपनी समालोचनाओं में से यह पिटापिटाया फिरका बदलना पड़ेगा कि अमुक की भाषा में आंचलिक प्रयोग पाया जाता है। अब तो हमें उस कृति से उन शब्दों को चुनकर देखना होगा कि बोली का वह शब्द अपने ठेठ रूप में या घिसपिट कर उस कृतिकार की कृति में कैसे पहुंचा है।

बड़े बड़े मेले और तीर्थ स्थान अनेक बोलियों के संगम-स्थल होते हैं। देश के जिस भाग को कोई धार्मिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक या आर्थिक श्रेष्ठता प्राप्त होती है उस भाग की बोली रेडियो, समाचार-पत्र, डाक-तार, यातायात आदि की सुविधा पाकर अपने साधनों के अनुरूप फैल जाती है। लूथर की मातृ भाषा धार्मिक भावनाओं ही के कारण जर्मनी भर की आदर्श भाषा बनी। अरबी को भी आफ्रिका के अनेक देशों ने इसी कारण अपनाया। सांस्कृतिक श्रेष्ठता के कारण संस्कृत भारत भर में फैली, जिसकी संस्कृति मध्य देश में अनेक तीर्थ स्थलों एवं शिक्षा केन्द्रों के कारण सुरक्षित रही। व्यापारिक प्रसार के साथ अंगरेजी ने प्रसार पाया। मध्य-काल में अरबी के प्रसार में भी यही कारण रहे। राजनीतिक सत्ता के फलस्वरूप हिटलर की जर्मनी का अनेक देशों में बोलबाला रहा। हमारे देश में भी यही कारण है कि अंग्रेजी अभी तक हमारी हिन्दी को अपना स्थान न लेने दे रही है।

यह सत्य है कि भाषा का आधार भी कोई न कोई बोली ही होती है जो अपने विकास और विस्तार की प्रक्रिया में सब बोलियों की महत्तम समापवर्तक बन बैठती है, और एक की होकर भी वह सब की कहलाती है। यही समन्वय उसे भाषापन दे देता है। भाषा तो बोलियों की इकाई ही है। भाषा का विघटन बोलियों की सृष्टि करता है। केन्द्र से सम्पर्क सूत्र टूटने पर भाषा टूटती है। इस टुटन में प्रकृति, क्रांतियाँ, सामाजिक विप्लव या विस्थापन भी कारण बनते हैं। यह यात्रा है बोलियों की भाषा तक किन्तु जब ये बोलियाँ जो भाषा की तन्तुजाल हैं नष्ट हो जाती हैं तो भाषा की प्रगति में जड़ता आ जाती है। अतः इन बोलियों तथा इनके अन्तराल में निहित लिखित अलिखित साहित्य की रक्षा हमारा अनिवार्य कर्तव्य हो जाता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मालवी मेले में प्रबुद्ध साहित्यकारों और मालवी बोली के लेखकों एवं कवियों ने जो संकल्प किए हैं, उन्हें उनकी पूर्ति की दिशा में तत्पर होकर जुट जाना है। अभी मालवी बोली को भाषा बनने के लिए बहुत बड़ी मंजिल तय करनी है। इस प्रदेश के अंचल में बिखरा सम्पूर्ण अलिखित साहित्य सहेजना है, उसे लेखी रूप देना है। फिर उसके स्वरूप का भाषा वैज्ञानिक अन्वेषण करना है। इस दिशा में जहाँ तक मुझे स्मरण आता है मालव जनपद के साहित्य की ओर जनता के ध्यान को आकर्षित करने का कार्य धार के वयोवृद्ध विद्वान् स्व. श्रीलेलेजी ने किया था। इसी के पश्चात श्री भालेरावजी इस दिशा में सक्रिय रहे। पद्मभूषण पंडित सूर्यनारायण व्यास 'विक्रम' के माध्यम से सतत इसमें डूबे ही रहे। मध्यभारत हिन्दी साहित्य सम्मेलन के अध्यक्ष पद से मालवी के सम्बन्ध में दिया गया आपका भाषण अद्भुत है। मालवा के अंचल में उनके इन प्रयत्नों ने मालवी के प्रति जागृति की एक लहर सी उठा दी।

उज्जैन में सन् १९५२ (१९ अप्रेल) को मालव-लोक साहित्य परिषद् की स्थापना हुई, जिसमें साहित्य, कोष, संस्कृति के प्रेरक तत्वों, कलाओं आदि की अभिरक्षा के लिए निर्णय लिये गये। परिषद् की स्थायी समिति के अध्यक्ष स्वयं व्यासजी थे। इसमें स्व. नवीनजी, हरिभाऊजी, कुमार गंधर्व, डॉ. श्याम परमार आदि थे। कार्य संयोजन हेतु जो समिति बनाई गई उसमें अनूप (बड़नगर), त्रिभुवननाथ दवे (शाजापुर), गजानन वर्मा, बसन्तीलाल बंम, बाबूलाल भाटिया (उज्जैन), चिन्तामणि उपाध्याय (रामपुरा) तथा मदनकुमार चौबे (मन्दसौर) को कार्य सौंपा गया। इस परिषद् ने कितना काम किया और कितना नहीं किन्तु डॉ. श्याम परमार और डॉ. चिन्तामणि उपाध्याय ने अवश्य ही मालवी का पथ प्रशस्त किया है। तरुणों में डॉ. मधुर, डॉ. धर्मनारायण, डॉ. बंम, डॉ. बन्शीधर, डॉ. तैनगुरिया के प्रयत्न स्तुत्य हैं। विडम्बना है कि मालवा की मिट्टी की जितनी सेवा होनी चाहिए थी उतनी न हो सकी। अभी भी नवीन परिवेश में मालवी का भाषा सर्वेक्षण अछूता पड़ा है। जो किसी मालवी ग्रियर्सन की बाट जोह रहा है। जो मालवा के अंचल के ग्राम-ग्राम और नगर-नगर भटक कर मालवी का भाषा सर्वेक्षण कर सके। इस दिशा में प्रदेश के सम्बद्ध विश्व विद्यालयों का दायित्व भी कुछ कम नहीं है। अभी इन्दौर विश्व विद्यालय ने डॉ. नेमीचन्द जैन के शोधग्रंथ भीली का भाषा शास्त्रीय अध्ययन' प्रकाशित कर स्तुत्य कार्य किया है। अभी डॉ. बन्शीधर का 'मालवी भाषा सर्वेक्षण' तथा डॉ. तैनगुरिया की 'कृषक जीवन की शब्दावली' अमुद्रित हैं। प्रदेश के भाषा-विभाग को इन कृतियों के मुद्रण का कार्य अपने हाथ में तत्काल ही लेना चाहिए।

हर्ष की बात हैं कि मेलों की इस कड़ी में दिनांक २६,२७ दिसम्बर को बघेली-मेला रींवा में आयोजित हो रहा है। निमाड़ी-मेला (खण्डवा) की भी तैयारियाँ हो चुकी हैं। यह शुभ लक्षण है। हमारे प्रदेश की बोलियों के ये मेले हमारी भावात्मक एकता की कड़ियों को जहाँ जोड़ेंगे, वहाँ राष्ट्र भाषा हिन्दी के कोश को भी सम्पन्न करेंगे ऐसा विश्वास है।

'वीणा' का यह अंक

'मालवी-अंक' के प्रकाशन की योजना को हाथ में लेकर 'वीणा' अपने क्रम से तीन मास पिछड़ गई है। जिसके लिए हमें खेद हैं। सामग्री जुटाने आदि में हमें अकारण ही विलम्ब का सामना करना पड़ा है किन्तु हमें हर्ष है कि हम इस अंक के लिए पर्याप्त

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सामग्री जुटा सके हैं। 'वीणा' के इस अंक को भाषा, साहित्य कला एवं संस्कृति-खंडों में प्रकाशित करने की योजना थी। तद्नुसार 'वीणा' के इस खण्ड में जो मालवी-अंक का पूर्वार्द्ध है, केवल भाषा और साहित्य की सामग्री ही दी जा सकी है। इस अंक का एक आकर्षण रतलाम में ८,९ जून को आयोजित मालवी मेले का विवरण भी है।

'वीणा' का अगला अंक

मालवी-अंक (उत्तरार्द्ध-खण्ड) के रूप में प्रकाशित हो रहा है, इसमें कला एवं संस्कृति-खण्डों का समावेश किया गया है। यह खण्ड 'पूर्वार्द्ध' ही की तरह कई दृष्टियों से अद्वितीय होगा। इसमें मालवा की कला, संस्कृति, इतिहास एवं पुरातत्व के अनेक पृष्ठों का उद्घाटन होगा। इस अंक के लेखादि की संभावित रूप रेखा पृथक दी जा रही है।

अंत में बोली के एक मेले की बात जो मालवी से प्रारंभ हुई है, जिसकी पृष्ठ भूमि में मालव मिट्टी की रस गंध लिपटी है। आने वाले मेलों को वही सरसता, सौहार्द और मनस्विता दे जो रतलाम के मालवी मेले को प्राप्त हुई थी। यही हमारी मंगल कामना है।

दूर भाष : ३१२०७

श्रेष्ठ साहित्य से

अपने वाचनालयों को सम्पन्न करने हेतु हमसे सम्पर्क साधिये।

साहित्य, कहानी, उपन्यास एवं हिन्दी गद्य-विधा की नवीनतम कृतियाँ उचित कमीशन पर प्राप्त कीजिए।

सभी प्रकार की स्टेशनरी, मेगनेट गम, इंक तथा टिकाऊ पेनो के लिए सदैव याद रखें!

भैया स्टोर्स

खजूरी बाजार, इन्दौर

आपके शोध प्रबन्धों तथा अन्य सुन्दर, आकर्षक एवं शुध्द टंकण सेवा हेतु सदैव स्मरण रखें?

नवयुग कमर्शियल इन्स्टीट्यूट

२७, शक्कर बजार, इन्दौर (म. प्र.)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिसम्बर में प्रकाश्य ! वीणा अभिनव अंक !!

मालवी-अंक

(उत्तरार्द्ध)

[कला एवं संस्कृति-खण्ड]

—: प्रमुख आकर्षण :—

कला-खण्ड

- मालवा की लोकपरक कलाभिव्यक्ति —डॉ. श्याम परमार
- मालवे की चादरों के पल्लों पर बने मांडने —श्री ईशकुमार जोशी
- मालवा की चित्र चर्चित दीवारें —श्री मधुसूदन जोशी
- मालव कला क्रमिक विकास और स्वरूप —श्री विष्णु भटनागर
- मालवी कला —डॉ. मंगल मेहता
- मालवी लोक संगीत की धुनें —श्री नरहरि पटेल
- मालव राग —श्री प्यारेलाल श्रीमाल

माँडनें, संजा, मेंहदी-भाँत आदि पर अन्य लेख

संस्कृति-खण्ड

- मालवा की लोक संस्कृति एवं लोक नाट्य
- माच में लोक संस्कृति —डॉ. शिवकुमार मधुर
- तुर्राकिलंगी सम्प्रदायों का योगदान —डॉ. धर्मनारायण
- मालवा और राजस्थान का लोक नाट्य माच —डॉ. भानावत
- मालवी लोक नाट्य माच —श्री सिद्धेश्वर सेन
- मालव अवन्ति जनपद का इतिहास —श्री वीरेन्द्रकुमार चौरे
- मालव भूमि का प्रागैतिहास —श्री वाकणकर
- पूर्वी मालवा का इतिहास —श्री जे. एस. दुबे
- मालव भूमि की भूख —श्री काशिनाथ त्रिवेदी
- मालवा : ऐतिहासिक यात्रा विवरणों में —श्री शरद पगारे
- मालवगण की मुद्राएँ —डॉ. मंडन त्रिवेदी
- मालवा से प्राप्त शिलालेख एवं ताम्रलेख —श्री रामसेवक गर्ग
- मालवा की परमार कालीन स्थापत्य कला —श्रीमती मायारानी आर्य
- विन्ध्य के दो तेजस्वी पुत्र मालवा और निमाड़ —श्री रामनारायण उपाध्याय

प्रकीर्णक

मालवी भाषा विषयक प्रश्नों के उत्तर : डॉ. सत्येन्द्र, डॉ. देवेन्द्रकुमार, आचार्य नर्मदेश्वर चतुर्वेदी, बोली की बात, मालव की सांस्कृतिक चेतना के विकास में पत्र-पत्रिकाएँ, प्रवासी मालवीय, मेघदूत वर्णित मालव प्रदेश, भक्त कवि चन्द्रसखी, मालवी सेवी कोष।

आदि अनेक सचित्र लेखों से समन्वित !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

आज ही ग्राहक बनकर इस अंक की प्रति सुरक्षित कराइए !!

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शीघ्र प्रकाश्य !

बुन्देली लोक साहित्य

(समस्त लोक साहित्य का नवनीत)

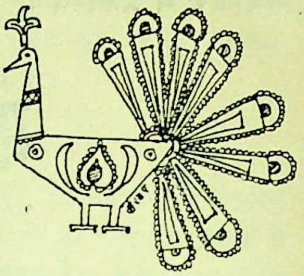

भूमिका–लेखक डॉ. सत्येन्द्र, एम. ए., डी. लिट्

लेखक–श्री श्रीचन्द्र जैन

प्राचार्य

सांदीपनि महाविद्यालय, उज्जैन

प्रकाशक : स्मृति प्रकाशन, ५५ अहिल्यापुरा इन्दौर

(आज ही अग्रिम आर्डर बुक कराइए)

दीपावली के महान पुनीत पर्व पर

दि देवास सेंट्रल को-आपरेटिव्ह बैंक लिमिटेड, देवास अपने अमानतदारान, सदस्यगण, शुभ चिन्तक एवं जनता जनार्दन को अपना हार्दिक अभिनन्दन प्रेषित करता है।

यह वर्ष समस्त मानवता के लिये समृद्धि, प्रगति और उज्ज्वलता प्रदान करे ऐसी कामना यह अधिकोष करता है।

अपने अतिरिक्त धन के सदुपयोग के लिये कृपया हमारी सेवायें जिले की निम्न शाखाओं एवं प्रधान कार्यालय, देवास से प्राप्त कीजिएगा।

देवास, सोनकच्छ, कन्नौद, बागली, हाटपीपल्या, खातेगांव, विजयागंज मंडी डबल चौकी, भोरासा, सतवास, टोंकखुर्द

अम्बाराम चौधरी	मोड़सिंह चावड़ा	सुरेन्द्रसिंह	तारणसिंह पाण्डे
मानसेवी सचिव	व्हाईस चेअरमेन	चेअरमेन	प्रबंधक

वाचनालय हेतु

हिन्दी एवं अंग्रेजी का श्रेष्ठ साहित्य

सदैव तत्पर

स्वरूप ब्रदर्स,
खजूरी बाजार, इन्दौर
फोन नं. ३१३२०

भोपाल साहित्य-सदन
३८, ललवानी प्रेसरोड़ भोपाल
फोन नं. ३२३५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आर्थिक उन्नयन के लिये किये गये प्रयत्नों की सफलतायें समाजवाद की स्थापना के लिये

मध्य प्रदेश

गरीबी और पिछड़ेपन की चुनौती का उत्तर दे रहा है।

	१९६८	१९७१ (अक्टू.)
० अनाज की पैदावार (लाख मी. टन में)	८९.४०	१०७
० सिंचित क्षेत्र (लाख एकड़ में)	२८ (६.४ प्र. श.)	३९.५० (८.६ प्र. श.)
० विपुल उत्पादन का क्षेत्र (हजार एकड़ में)	६३५	१,४३८
० उर्वरक की खपत (टन में)	१,७३,४१८	४,२३,०००
० सिंचाई पम्पों को बिजली दी गयी	३१,४६९	१,११,१६९
० विद्युतीकृत ग्राम	३,९७३	६,२६९
० बिजली की लाइनों की लम्बाई (कि. मी. में)	१,१४०	३,६५३
० किसानों को सहकारी कर्ज (करोड़ रुपयों में)	४०.३६	५०.५९
० दुग्ध प्रदाय योजना	४	२६

प्राकृतिक वरदानों के अधिकाधिक दोहन में विश्वास पूर्वक सहयोग दें।

(संचालक, सूचना तथा प्रकाशन, मध्य प्रदेश, भोपाल द्वारा प्रसारित)

सूप्रसं १६८७।७१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

म० प्र० की कल्याणकारी

बहुमुखी प्रगति में संलग्न

पंचायत एवं समाज सेवा संचालनालय, म. प्र.

* पंचायती राज की १२,८१५ ग्राम पंचायतें तथा ३९० जनपद-पंचायतें कार्यरत हैं।
* लोकतंत्र के मूलाधार नागरिकों को समाज शिक्षा के माध्यम से दायित्व बोध कराया जा रहा है।
* बाल, युवक एवं महिला कल्याण के विविध उपक्रमों को अपनाया गया है।
* व्यावहारिक पोषण आहार के विभिन्न पहलुओं पर ग्राम जनों को मार्ग-दर्शन देने की दिशा में कार्यरत हैं।
* मासिक समाज सेवा, मासिक समाचार, भितिपत्र, त्रैमासिक दीपक तथा नवसाक्षरोपयोगी पुस्तिकाएं नियमित रूप से ग्रामीण साक्षरों तक पहुंच रही हैं।

पंचायत एवं समाज सेवा संचालनालय म. प्र. भोपाल द्वारा प्रसारित

सू०प्र०सं० १६८७–क/७१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भोजन में पौष्टिक पदार्थों की कमी की पूर्ति के लिए अपने तालाब में,

मत्स्य पालन कीजिए,

१—मछली में वे सभी पदार्थ विद्यमान हैं जो शारीरिक बनावट एवं स्वास्थ्य के लिये आवश्यक हैं।

२—इसमें उपलब्ध प्रोटीन सरलता से पचने वाली होती है।

३—बच्चों में व्याप्त कुपोषणता (Mal Nutrition) को दूर करने में मछली सहायक हो सकती है।

प्रति एकड़ उत्पादन बढ़ाने के लिए—

१—कतला, रोहू, नरेन के साथ कामन कार्प मछली के बीज का संचय करें।

२—खेती के समान तालाब में अमोनियम सल्फेट, सुपर फास्फेट एवं सीवेज खाद दें।

३—मांसाहारी मछलियों एवं जलीय वनस्पतियों की सफाई अच्छी प्रकार से करें।

(संचालक मत्स्योद्योग म. प्र. द्वारा प्रसारित)

सू०प्र०स०-१६८७-स/७१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कृषि उत्पादन में वृद्धि

और

किसानों की समृद्धि के लिए

राज्य की चतुर्थ योजना के लक्ष्य—

१—१४.३१ लाख हेक्टेयर से बढ़ाकर २२ लाख हेक्टेयर भूमि पर सिंचाई।

२—२.५५ लाख हेक्टेयर से बढ़ाकर १४.४० लाख हेक्टेयर भूमि पर विपुल उत्पादन कार्यक्रम।

३—१.६० लाख टन से बढ़ाकर ९.४० लाख टन खाद का उपयोग।

४—१०.२६ लाख हेक्टेयर क्षेत्र से बढ़ाकर ५२.८० लाख हेक्टेयर क्षेत्र में पौध संरक्षण।

५—४ लाख हेक्टेयर क्षेत्र में बहुफसली खेती का विस्तार।

६—छोटे किसानों को यथा सम्भव सभी प्रकार की अधिक सुविधाएं।

उपर्युक्त प्रयासों के अधिक उत्पादन में निम्नलिखित परिणामों की आशा है:—

खाद्यान्नों का अधिक उत्पादन	२८ लाख टन
तिलहन	०.७७ लाख टन
कपास	६९ लाख गांठें
गन्ना	०.२० लाख टन (गुड़)

मध्यप्रदेश शासन कृषि उत्पादन में वृद्धि के लिए
राज्य के किसानों को सभी सम्भव सहायता दे रहा है
कृषि उत्पादन में वृद्धि ही
राष्ट्र को समृद्ध बनाने का मार्ग है।

कृषि संचालनालय, मध्यप्रदेश द्वारा प्रसारित

सू०प्र०सं० १६८७अ/७१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

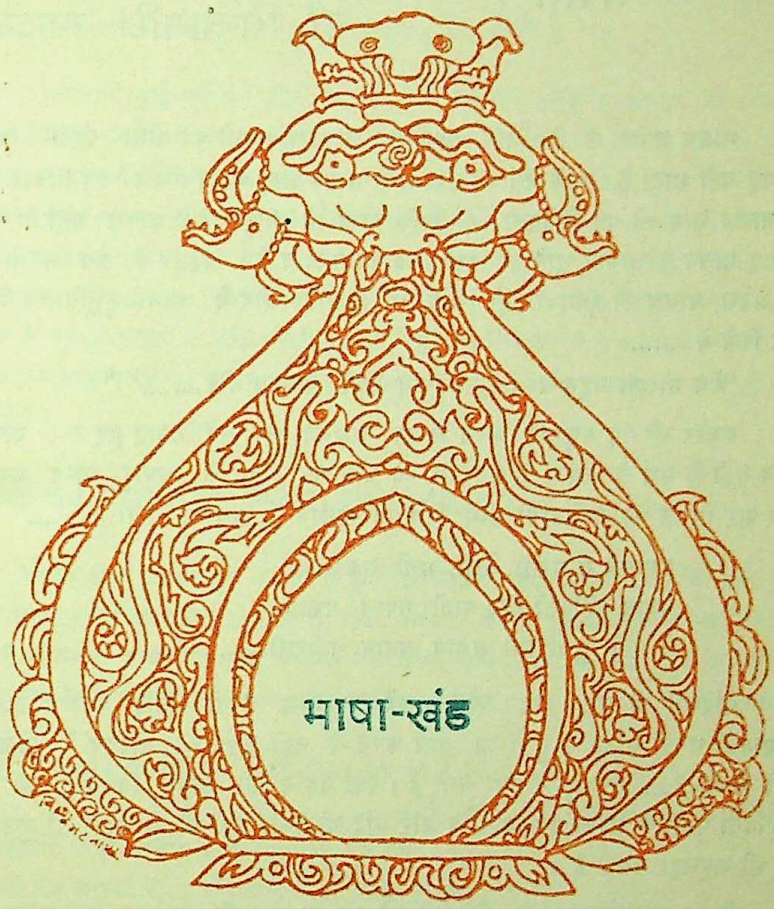

मालवी-अंक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मालवा की धरती

देस मालवा गहन गम्भीर,
डग-डग रोटी पग-पग नीर...

डॉ. चिन्तामणि उपाध्याय

मालव जनपद के लोग अन्य पृथ्वीपुत्रों की तरह धरती को माता कहकर पुकारते हैं। यह वही माता है जिसके धैर्य की तपस्या से मानव शिशुओं का पोषण एवं विकास होता है। मालव भूमि की यह विशेषता रही है कि धान्य की विपुलता के कारण यहाँ के लोगों के लिए मालव की उर्वरा भूमि ही इस प्रदेश का वरदान है। प्रकृति के इस हरे-भरे एवं रम्य प्रदेश, मालव की भूमि पर ही तो प्रसन्न होकर कबीर ने अपने अनुभूतिजन्य विचार व्यक्त किये थे.....

"देश मालवा गहन गम्भीर, डग-डग रोटी पग-पग नीर....." [1]

कबीर की यह अनुभूति अपने में एक शाश्वत सत्य को छिपाए हुए है। रत्नगर्भा मालव मही के गर्भ से पत्थरों के अंतराल को चीर कर जीवन के आधार धान्य कणों को बटोर कर मालव का आदिवासी भील आज भी उल्लास के साथ गा उठता है.....

"मालवे न धरती, सेली, भली, गूजर
महान महोरती बिन पानी, मक्का पकावे
ने पानी जुआरियो पाकावे, महान महोरती.....

परिश्रम से चूर होकर भी मालवे का भील अपनी महान् महोरती—महान् महिमावती धरती माता के गुणों का गान करने से नहीं अघाता। वास्तव में मालव की धरती 'सेली' है.... उपजाऊ है बड़ी भली है। क्या यह उसकी महान् विशेषता नहीं है कि जहाँ बिना पानी के मक्का पक जाती है और यदि थोड़ी-सी वर्षा भी हो जाय तो जुआर की खेती भी लहलहा उठती है।

विन्ध्य की पर्वतमाला के आँचल में बसे इस भू-भाग की सम्पन्नता एवं उर्वरा शक्ति प्रतीक बन कर मालव शब्द में समा गई है। जहाँ भूमि का वैभव एवं धन-धान्य की विपुलता का भाव प्रकट करना होता है, वहाँ मालव को तुलनात्मक दृष्टि से प्रस्तुत किया जाता है। महाकवि तुलसी ने मरुभूमि की नीरसता एवं शुष्कता के विपरीत हरियाली एवं धरती के शस्य श्यामल स्वरूप को प्रस्तुत करने के लिए मालव का प्रतीक रूप में उल्लेख किया है[2]। मालवे की धरती में प्रकृति प्रदत्त विशेषताओं के कारण अनन्त वैभव एवं महिमा का समावेश हो गया है। यहाँ की मिट्टी की श्यामता ही उसकी विशेषता है। काली मिट्टी के साथ ही मानो मालवा का नाम जुड़ा हुआ है। काले रंग के अतिरिक्त विविध रंग की

---

१ कबीर ग्रंथावली [नागरी प्रचारिणी सभा, काशी] पृष्ठ १०९
२ कासी मग सुरसरि क्रमनासा, मरु मालव महिदेव गवासा। (रामचरितमानस-बालकाँड)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मिट्टी भी यहाँ अप्राप्य नहीं है किन्तु उसमें भी एक विशेष गुण विद्यमान है कि सील [Moisture] को सुरक्षित रखने की क्षमता उसमें है। इस कारण उपज के लिए सिंचाई की उतनी आवश्यकता नहीं होती जितनी रेतीली एवं अनुपजाऊ भूमि के लिए वांछनीय है। भूमि की गहनता उसको उर्वरा बना देती है और खाद आदि कृत्रिम शक्ति को प्रदान करने की आवश्यकता नहीं रहती।[3]

लोक भावनाओं में भी मालव भूमि की महत्ता को स्वीकार किया गया है। मालवा की मिट्टी में उपजने वाली मेंहदी का रंग गुजरात तक पहुँच जाता है[४]। इसी तरह गुजराती ग्राम वधु को मालव देश देखने की लालसा निरन्तर बनी रहती है[५]।

राजस्थानी महिलाएँ वर और वधु के लिए विवाह आदि के अवसर पर उबटन आदि के निमित्त मालवे में उत्पन्न होने वाली अच्छे रंग की हल्दी का उल्लेख करती हैं[१]। मालव के सम्बन्ध में केवल एक स्थान पर ऐसी उक्ति आती है, जहाँ हृदय का आवेश रागात्मक ईर्ष्या के रूप में प्रकट होता है। किन्तु वहाँ भी मरुप्रदेश के संबंध में किये गये कटाक्ष के उत्तर देने की प्रवृत्ति के साथ ही अपने प्रियतम को लुभानेवाली स्त्री के प्रति रोष की भावना है, मालव प्रदेश के प्रति नहीं[२]। ढोला की प्रियतमा जिस प्रकार अपने प्रियतम के कारण मालव के प्रति अच्छी भावना नहीं रखती। मालव के माँडवगढ़ में प्रियतम का सामीप्य प्राप्त करने की कामना के कारण रूपमती का मन सदा मालवे की ओर ही लगा रहता है[३]।

मालवा की भौगोलिक स्थिति एवं सीमाएँ

मालव शब्द उन्नत भूमि का सूचक है[४] विन्ध्यप्रदेश के उत्तरी आंचल में फैला हुआ विस्तृत पठार संपूर्ण मध्यभारत में उन्नत खंड बनकर अपनी भौगोलिक सीमा निर्धारण करता है। 'मलय' शब्द की तरह मालवा की उच्च भूमि अथवा पहाड़ी क्षेत्र के भाव को प्रकट करता है[५] यही पठार मालवा की स्वाभाविक सीमा का बोध कराता है, फिर भी

---

३. Physical basis af Geography of India, Vol II.
—By H.L. Chhibber Page 208

४ मेंदी तो वावी मालवे, ऐनो रंग गयो गुजरात
मेंदी रंग लाग्यो रे.... रढियाली रात, भाग १ पृष्ठ १५।

५ दादे नो जोयो देश मालवो रे.... चूंदड़ी, भाग २, पृष्ठ ५०।

१. म्हारी हल्दी रो रंग सुरंग
निपजे मालवे...राजस्थानी लोकगीत, पृष्ठ १६।

२. बाळूं बाबा देसड़उ, जहाँ पाणी सेवार
ना पणियारी झूलरउ ना कूवइ लैकार,....ढोला मारु रा दूहा, संख्या ६६४।

३. रूपमति एवं बाजबहादुर की प्रणय कथा के संबंध में लोक प्रचलित दोहा.....
'चित चंदेरी मन मालवे हियो हाड़ोती माय
पलंग बिछाऊ रणत भंवर में पोढूं माँडव माँय...."

४. मालमुन्नत भूतले।

५. The Age of Imperial unity, page 163.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समय समय पर राजनीतिक हलचलों के कारण मालव की सीमाएं बदलती रही हैं। प्रसिद्ध इतिहासकार स्मिथ ने आधुनिक मालव के विस्तार एवं सीमाओं के सम्बन्ध में विचार प्रकट करते हुए लिखा है कि मध्य-भारतीय एजेंसी के संपूर्ण भूभाग के साथ ही मालवा का क्षेत्र-विस्तार दक्षिण में नर्मदा तक, उत्तर में चम्बल, पश्चिम में गुजरात एवं पूर्व में बुन्देल-खंड तक माना जावेगा [६]। स्मिथ महोदय द्वारा मालव-प्रदेश की सीमाओं का जो उल्लेख किया गया है वह अंग्रेजों द्वारा राजनीतिक एवं प्रशासकीय दृष्टि से निर्मित मध्य-भारत क्षेत्र की व्यापकता को लिए हुए है किन्तु मालव की भौगोलिक स्थिति का यहाँ केवल स्थूल रूप से ही परिचय होता है—इंसाइक्लोपीडिया ब्रिटेनिका में मालव की सीमा के सम्बन्ध में कुछ स्पष्टीकरण होता है। पठार के अतिरिक्त विन्ध्याचल और नर्मदा उपत्यका के प्रदेश निमाड़ को भी मालवा में सम्मिलित कर लिया गया है। [७] वस्तुतः निमाड़ ही मालव की दक्षिण सीमा रेखा है। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद सन् १९४८ में जब भारत का निर्माण हुआ तब राजनीतिक सुविधा की दृष्टि से अंग्रेजों द्वारा सीमित मध्य भारत की प्रादेशिक स्थिति को ही स्वीकार कर लिया गया। भोपाल आदि मालव से सम्बन्धित प्रदेश राजनीतिक दृष्टि से अपना अलग महत्व रखते थे, किन्तु यहाँ ऐतिहासिक एवं साँस्कृतिक परम्पराओं को ध्यान में रख कर मालव प्रदेश के क्षेत्र विस्तार सीमाओं पर विचार करना आवश्यक है, क्योंकि राजनीतिक धरातल पर निर्धारित की गई सीमा की महत्ता स्वाभाविक होने के कारण प्रदेश की एकात्मकता के साथ ही विकास की प्रेरणा को लेकर चलती है।

मालव की सांस्कृतिक सीमाओं की कुछ निश्चित मान्यताएं रही हैं। परन्तु ये सीमाएं समय-समय पर बदलती रही हैं। मुगलकाल के समय की सीमाओं की रूपरेखा और उसका निश्चित् विवरण तो प्राप्त होता है किन्तु मराठों के आधिपत्य काल में मालव की राजनीतिक एकता समाप्त हो गई और उसकी सीमाएं भी पूर्णतया अनिश्चित् बनी रहीं। यहाँ अंग्रेजों के आगमन के पश्चात् सीमाओं की सही जानकारी प्रस्तुत करना अनिवार्य है। डॉ० यदुनाथ सरकार ने मुगलकालीन मालवा की सीमाओं के सम्बन्ध में लिखा है कि यह प्रदेश उत्तर में यमुना नदी से लेकर दक्षिण में नर्मदा नदी तक फैला हुआ है। इसके पश्चिम में चम्बल के पार राजपूताना था और पूर्व में बुन्देलखण्ड की सीमा मालवा से लगी हुई थी। बेतवा इसकी सीमा रेखा थी।[१]

---

६. Malwa the extensive region now included the formost part in the Central India Agencey, and lying between Narbada on the south, the Chambal on the north Gujrat on the west and Bundel-Khand on the east.

—Oxford History of India, Page 265.

७. Strictly, the name is confirmed to the hilly table-land bounded south by Vindhya-ranges which drain north in to the river Chambal but it has been extended to include Narbada valley further in south.

—Encyclopaedia Britanica. (Page-747.)

१. शार्ट हिस्ट्री ऑफ औरंगजेब का हिन्दी रूपान्तर, पृष्ठ—५४३।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राजनीतिक सीमाएं तो बदलती रहती हैं, परन्तु भौगोलिक और लौकिक सीमाएं उतनी सरलता से नहीं। जहाँ तक जन, भाषा और संस्कृति का प्रश्न है, आज मालव की उत्तरी सीमा न तो यमुना नदी ही हो सकती है, और न पश्चिम में स्थित चम्बल ही। मध्य-भारत एवं उसके संलग्न प्रदेशों के मानचित्रों पर दृष्टिपात करने से स्पष्ट समझा जा सकेगा कि मालव की प्रकृत स्थिति का स्वरूप कैसा है। नवीन मध्य-प्रदेश में मध्य-भारत के १६ जिलों में से शिवपुरी, गुना, भेलसा, राजगढ़, शाजापुर, देवास, इन्दौर, उज्जैन, मन्दसौर, रतलाम, झाबुआ, धार, आदि १२ जिले मालवा के पठार पर स्थित हैं। भोपाल राज्य भी मालवा का अविभाज्य अंग है। होशंगाबाद का जिला सन् १८१३ तक भोपाल राज्य का ही अंग था। और वस्तुतः यह भाग भी नर्मदा की घाटी में स्थित मालव का ही भू-भाग है। विन्ध्याचल के दक्षिण में स्थित नर्मदा नदी की उपत्यका का एवं सतपुड़ा के बीच का प्रदेश मालव के पठार के नीचे होते हुए भी सांस्कृतिक दृष्टि से दक्षिण मालव की परिसीमा में सम्मिलित होगा। शिवपुरी जिले का उत्तरी भाग मालवे में सम्मिलित नहीं किया जाना चाहिए। वैसे शिवपुरी नगर की स्थिति मालवा पठार की उत्तरी सीमा पर है, किंतु नगर एवं उसके उत्तर का सम्पूर्ण क्षेत्र ग्वालियर और आगरा से ही शासित रहा है। शिवपुरी जिले के कोलारस एवं पिछोर आदि तहसील के क्षेत्र मालव की उत्तरी सीमा के अन्तर्गत आते हैं। इसी तरह मन्दसौर जिले के उत्तरी क्षेत्र में सिंगौली एवं रतनगढ़ के घाट के उत्तर का क्षेत्र मेवाड़ का अविभाज्य अंग है। गुंजाल नदी के पश्चिमोत्तर में स्थित भू-भाग एवं जावद तहसील के अठाना का उत्तरी हिस्सा भी मालवा में सम्मिलित नहीं किया जा सकता। मध्य-भारत के क्षेत्र में जिस तरह राजस्थान के कुछ भू-भाग सम्मिलित हैं, राजस्थान में भी मालव का हिस्सा मिला हुआ है। राजस्थान की भूत-पूर्व टोंक रियासत का सिरोंज, पिड़ावा और छबड़ा आदि क्षेत्र मालवा का ही एक भाग है। इसी तरह मन्दसौर और शाजापुर जिले के मध्य में स्थित भूतपूर्व झालावाड़ राज्य एवं कोटा राज्य मालव की निजामतें मालवी क्षेत्र के अन्तर्गत आती हैं।[1]

मालव की प्रमुख नदियों में चम्बल, क्षिप्रा, बेतवा, छोटी काली सिंध, बड़ी काली सिंध, शिवना, एवं महानदी आदि प्रमुख हैं किंतु सीमाओं के निर्धारण में बेतवा, नर्मदा और चम्बल ही महत्वपूर्ण स्थान रखती हैं। बेतवा नदी मालव की पूर्वी सीमा को बनाती है। बेतवा के पश्चिमीय तट पर बसे हुए भेलसा, गुना और शिवपुरी जिले के पिछोर का क्षेत्र मालवा का भू-भाग है। बेतवा के पूर्व में बुन्देलखण्ड स्थित है। यही नदी मालवा और बुन्देलखण्ड के मध्य-सीमा-रेखा का कार्य करती है और इसीलिए मध्ययुग के इतिहास में इस नदी का नाम कहीं-कहीं पर 'मालव नदी' दिया गया है।[2] नर्मदा मांधाता ओंकारेश्वर से लेकर भोपाल राज्य के उदयपुरा क्षेत्र तक दक्षिण की सीमा निर्धारित करती है। चम्बल और पार्वती मालव के कुछ पश्चिमोत्तर क्षेत्र को राजस्थान से अलग करती हैं। पश्चिम में माही नदी बांसवाड़ा और मालवी क्षेत्र के बीच की सीमा बनाती है।

---

१. मालवा की भौगोलिक सीमाओं पर महाराज कुमार डॉ० रघुवीरसिंह द्वारा सीमा कमीशन को प्रस्तुत किए गए स्मृति पत्र The Geographical boundries of the Malwa states में विस्तार के साथ विचार किया गया है।

२. The age of Imperial kanauj, page–95.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मालवा नाम की प्राचीनता :

वर्तमान मालव की स्थापना कब हुई, यह निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता, प्राचीन ग्रन्थों में इस प्रदेश के विभिन्न भागों के लिये अवन्ती, उज्जयिनी, आकर अवन्ती एवं दशपुर आदि नामों का उल्लेख मिलता है। सिकन्दर के समय से लेकर छठी शताब्दी तक इस प्रदेश का नाम मालवा नहीं था, यह निश्चित है। मालव गणों की एक शाखा औलीकरों का शासन आधुनिक मालवा के दशपुर प्रदेश पर सन् ४०४ ई० के लगभग स्थापित हो चुका था। गंगानगर से प्राप्त नरवर्मन के शिलालेख से यह पता चलता है कि औलीकरों की यह शाखा पुष्कर्ण (जोधपुर के निकट का क्षेत्र) से यहाँ आई थी।[१] हूणों को परास्त करने वाला प्रसिद्ध नृपति यशोधर्मन इसी परम्परा का व्यक्ति था। किन्तु उस समय भी अवन्ती, दशपुर एवं मालव भिन्न प्रदेश ही माने जाते रहे। सम्भवतः उस समय मारवाड़ एवं ढूंढाड़ क्षेत्र ही मालव कहलाता था। क्योंकि 'मालवानां जयः' के सिक्के प्राचीन कर्कोटक नगर एवं नगरी आदि उसी क्षेत्र में प्राप्त हुए हैं।[२] अवन्ती प्रदेश के शासक के लिये मालवपति की संज्ञा सर्वप्रथम वाकाटक राजा, पृथ्वीसेन द्वितीय के बालाघाट से प्राप्त शिलालेख में मिलती है। पृथ्वीसेन द्वितीय का समय ५८० ईसवी के लगभग रहा है।[3] इसके पश्चात् सम्राट हर्ष के समकालीन बाणभट्ट ने देवगुप्त के लिये भी मालवपति शब्द का प्रयोग किया है।[४] मुंज और भोज के समय से अर्थात् नवीं शताब्दी से लेकर तेरहवीं शताब्दी के बीच यह प्रदेश मालव नाम से प्रसिद्ध हो गया था, यह गुजरात प्रदेश के विभिन्न भागों में प्राप्त शिलालेखों से सिद्ध हो जाता है।[५]

मालवा की जन जातियां :

मालव की भूमि प्राचीन काल से ही अनेक संस्कृतियों के संगम की क्रीड़ास्थली रही है। भूमि की उर्वरा शक्ति एवं रत्नगर्भा महिमा ने अनेक जातियों को अपने क्रोड में आकर्षित किया है। प्रागेतिहासिक काल से लेकर वैदिक, जैन एवं बौद्धकालीन इतिहास की परम्परा एवं सांस्कृतिक धाराओं के उद्गम एवं सहविलीनीकरण का आज अलग से विश्लेषण करना असम्भव है। विभिन्न युगों के सांस्कृतिक आदान प्रदान का लेखा जोखा देकर मालवा में बसने वाली अनेक जातियों का विस्तृत परिचय प्राप्त कर लेना अत्यन्त ही कठिन है। वर्तमान मालवा के क्षेत्र में बसने वाली जातियों की परम्परा में प्राचीन युग की जन जातियों का इतिहास भले ही अप्राप्य हो किन्तु जो कुछ भी लिखित प्रमाण उपलब्ध

---

(१) New history of the Indion people; vol. 11 page 181 (Bhartiye Itihas parishad. Publicataion)

(२) The Age of Imperial Unity, Pag 165.

(३) कोशलमेकलमालवाधिपतिर अभ्यर्चित शासनस्य, E. I. IX, NO 36, P. 271

(४) हर्ष चरित पृष्ठ १७८।

(५) –(१) अपरन्च अत्रा गमन्मालवदेशे तो s मी.....खम्भात के चिन्तामणि पार्श्वनाथ मन्दिर में प्राप्त शिलालेख वि. स. १३५२।

(२) Historical. Inscriptions of Gujrat; Part III, Pag 93

(३) मालवपति बल्लालमाव्ववान् वि० सं० १२९७ : आबू के परमार राजा यशोधवल ने मालव राज बल्लाल को बन्दी बनाया था। देलवाड़ा मन्दिर में प्राप्त शिलालेख; वही लेख २०६, पृष्ठ ६।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं, उनसे यह सहज ही सिद्ध होता है कि आज की अधिकांश जातियां मालव के संलग्न प्रदेश गुजरात, मेवाड़, मारवाड़ से आकर बसी हैं, मॉलकम के अनुसार ब्राह्मण वर्ग की उपजाति के 'छन्याती' (६ जाति के ब्राह्मण दायमा, पारीख, गुर्जरगौड़, सारस्वत, सखवाल, खंडेलवाल) लोग अपने को मालवी ब्राह्मण कह कर इस प्रदेश के शाश्वत निवासी होने का दावा करते हैं। [१] किन्तु ये ब्राह्मण जातियां भी अन्य जातियों की तरह गुजरात और राजस्थान से आई हैं।

गुजरात से आने वाली जाति का प्रथम प्रमाण हमें वत्सभट्टी की प्रशस्ति से प्राप्त होता है। रेशमी वस्त्रों का व्यवसाय करने वाली बुनकरों की यह पटवा जाति थी। मन्दसौर में सम्राट यशोधर्मन् के समय में पटवा व्यापारियों ने सूर्य का एक विशाल मन्दिर बनवाया था। [२] पटवाओं के पश्चात् गुजरात से आकर मालवा में बसने वाली दूसरी जाति नागर ब्राह्मणों की है। भोज के समय से ही इस जाति ने मालवा में आकर बसना आरम्भ कर दिया था। गुजरात के सोलंकी एवं चालुक्यों के राज्य के समय राज कारण से नागर ब्राह्मण आकर बस गये। रामपुरा (मन्दसौर जिला) की बावड़ी में से गुजराती भाषा का एक शिलालेख मिला था, जिसमें यह उल्लेख है कि नड़ियाद से आए हुए नागर ब्राह्मणों ने यह बावड़ी बनवाई थी। सिद्धराज जयसिंह ने विक्रम संवत् १०९० में महादेव नाम के एक नागर ब्राह्मण को मालवा का सूबेदार बनाया। चालुक्यों के राज्य के समय बड़नगर नागर ब्राह्मणों की बसावट का एक प्रमुख केन्द्र था। [३] सम्भव है कि नागर ब्राह्मणों के साथ ही गुजरात की अन्य जातियां भी इसी समय मालवा में आकर बस गई हों। आज भी मालवा में गुजरात से आई हुई निम्नलिखित मध्यमवर्गीय जातियां निवास करती हैं:— नागर (ब्राह्मण एवं बनिया), मोड़ (ब्राह्मण एवं बनिया), श्रीमाली (ब्राह्मण एवं बनिया), पारख (ब्राह्मण एवं बनिया), औदीच्य (ब्राह्मण) एवं नीमा (बनिया) एवं पटवा, नाई, माली, दर्जी (सोलंकी), दर्जी (मकवाना) आदि।

इसी तरह माहेश्वरी, ओसवाल, पोरवाल, मोड़ एवं श्रीमाल आदि वणिक् वर्ग की परम्परा भी गुजरात के श्रीमाली एवं मोढ़ेरा प्रदेश से जोड़ी जा सकती है। [१] हिन्दुओं के शासन के पश्चात मुसलमानों के राज्य में भी यहां अनेक जातियों का आगमन हुआ, मालवा पर मराठों का अधिकार हो जाने के पश्चात दक्षिण से भी महाराष्ट्रीय ब्राह्मण एवं कुछ निम्नवर्गीय जातियां यहां आकर बस गईं। तामिल और तेलगु की अपभ्रष्ट भाषा बोलने वाले बरगुंडे एवं बंसफोड़ भी मराठों के साथ इसी समय आकर बसे हैं।

पेशवा ने जिस समय मालवा पर प्रथम बार आक्रमण किया, नागर ब्राह्मणों का शासन में अधिक वर्चस्व था। मुगल बादशाह की ओर से लड़ने वाले मालवा के सूबेदार गिरधर बहादुर तथा दयाबहादुर नागर ब्राह्मण ही थे[२]। गुजराती ब्राह्मणों के अतिरिक्त रजिस्थान एवं उत्तर भारत से आई हुई ब्राह्मण एवं वैश्यों की अनेक उपजातियाँ मालव में विद्यमान हैं। मॉलकम ने मालव की ब्राह्मण जातियों के सम्बन्ध में विस्तृत परिचय देते हुए

---

१. Memoirs of Sir John malcolm, part II, Page 122 (O. E.)
२. Fleet, G. I. I., vol. I I P. P. 81.
३. मालवा ऊपर गुजराती प्रभाव शीर्षक लेख, बुद्धि प्रकाशनों, त्रैमासिक सन् १९३६।
१. The Glory that was Curjar desa, part III, page 22
२. ई. सन् १७२८ के लगभग।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिखा है कि जोधपुर के ब्राह्मण व्यापार करते हैं। उदयपुरी ब्राह्मण कृषि एवं गुजराती ब्राह्मण पूजा और व्यवसाय कर सम्पन्न जीवन व्यतीत करते हैं। इन ब्राह्मणों के अतिरिक्त अन्य ब्राह्मणों की ८४ उपजातियाँ हैं, जो पन्द्रह पीढ़ियों से पूर्व गुजरात, उदयपुर, जोधपुर, जयपुर एवं कन्नौज आदि प्रदेशों से आकर बसी हैं।[3] ब्राह्मण एवं व्यापारी वर्ग की जातियों के अतिरिक्त कृषि जीवन से संबंधित अनेक जन जातियाँ हैं, जिन्होंने अकाल पड़ने के कारण जीविकोपार्जन के हेतु यहाँ की भूमि को अपना चिर निवास स्थान बना लिया। विभिन्न धन्धों में लगी हुई जातियों के अतिरिक्त निम्नलिखित जन जातियाँ भी उल्लेखनीय हैं:—

- अहीर, आँजना, रजपूत, जाट, गूजर, मीना, देसवाली, मोघिया, सोन्धिया, कंजर एवं बनजारा आदि।
- बलई, बागरी, खटीक, लोधा, चमार, आदि।
- भील, भीलाला, बारेला, मानकर आदि।
- खाती, कुलमी, (पाटीदार)
- माली (गुजराती मेवाड़ी मारवाड़ी एवं पुरविया)
- नाईता, नायक, बनजारा, मुसलमान, मेवाती, मुल्तानी, पठान
- काछी, कीर, कोरी, महार, कहार आदि।
- भोई, पारघी, धीमर, केवटिया, नावटिया आदि।[4]

इनमें अहीर आँजना आदि जातियाँ अपने को राजपूती वंश परम्परा से सम्बद्ध मानती है, किन्तु इनमें गोप जीवन एवं कृषि सभ्यता के अंकुर आज भी विद्यमान हैं, जिन्हें प्राचीन काल की आभीर–संस्कृति से सम्बद्ध किया जा सकता हैं। जाट, कलोता, गूजर, मोघिया, सोंधिया आदि राजपूतों की उपजातियां हैं। कंजर गूजरों पर आश्रित मँगतों की एक घुमन्तु जाति है। वैसे बन्जारे भी घुमन्तु जीवन की जन जातियों के अंतर्गत आते हैं किन्तु अब ये व्यवस्थित होकर कृषि जीवन व्यतीत करने लगे हैं। मोघिया, सोंधिया एवं कंजर आदि साहसी जातियाँ हैं। लूटपाट धाड़े डाके डालना इनकी आजीविका का प्रमुख साधन रहा है मध्य-भारत बनने से पूर्व इन जातियों की गणना जरामय पेशा के रूप में होती थी। भील एवं कंजरों में यह प्रवृत्ति आज भी विद्यमान है फिर भी बदलते युग के साथ इन जातियों की अपराध प्रवृत्ति में सुधार आ गया हैं और अधिकांश लोग कृषि कर्म में रत होकर शांत एवं व्यवस्थित जीवन बीताने लगे हैं। भील-भिलालों को सरजान मालकम ने राजपूतों की श्रेणी में रखा है। भिलाले तो स्पष्ट राजपूत ही है[1]। भीलों की भाषा को देखकर शायद मालकम ने उन्हें राजपूत मान लिया है किन्तु भील मालव की वनवासी आदिम जाति के अन्तर्गत ही मा ने जावेंगे, भीलालों के सम्पर्क में आने के कारण उनकी भाषा में अनुकूल परिवर्तन होकर उनकी मूल बोली सर्वथा लुप्त हो गई है[2]। बलाई, बागरी भी मालव की मूलनिवासी जातियाँ है क्योंकि अन्य सजातियों के सम्बन्ध में तो भाट परम्परा में उनके बाहर से आने का उल्लेख मिलता हैं

---

३. Memoirs of sir John Malcolm, II, p. p. 122
४. Census of Central India, 1901, vol, XVI, Tabe. 17–18
1. Memoirs of Sir John Malcolm, II, P. P. 155
2. देखें, बाग क्षेत्र में भील भिलाले, प्रतिभा निकेतन, उज्जैन की सर्वे रिपोर्ट पृष्ठ ११।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किन्तु उक्त दोनों जातियों के सम्बन्ध में किसी प्रकार के प्रमाण उपलब्ध नहीं है। खाती और कुलमी पाटीदार मालवा की सम्पन्न एवं परिश्रमी कृषक जातियाँ है। इन्दौर, मन्दसौर एवं निमाड़ जिले में पाटीदारों की संख्या अधिक है। पाटीदार गुजरात से आये हैं। खाती जाति के कृषक पंजाब के खत्रियों एवं काश्मीर से अपना सम्बन्ध जोड़ते हैं। नायता आदि राजपूत जातियां हैं जो मुस्लिम शासन में मुसलमान बन गई थीं। इस्लाम की सामान्य प्रवृत्तियां अपनाने के बाद भी इन जातियों ने यहाँ के लोक जीवन की रूढ़ियों को नहीं छोड़ा है पिंजारा, छीपा, रंगरेज कुंजड़ा एवं बन्जारा जाति की स्त्रियां आज भी इजार चुस्त पायजामा के ऊपर घाघरा, लहँगा पहनती हैं। ग्रामीण क्षेत्र के पुरुष हिन्दुओं जैसी पोशाख ही धारण करते हैं। मुल्तानी मुसलमानों की दो शाखाएँ हैं। लोधा एवं बन्जारा पशु व्यापार कृषि करते है [3]। काछी, कीर, कहार आदि जातियाँ बुन्देलखण्ड से आई हैं। पशुपालन से अपनी आजीविका चलाने वाली गवली जाति बुन्देलखण्डी संस्कृतियों को लेकर मालव की संस्कृति में घुल मिल गई हैं। भोई, पारधी, धीमर एवं केवटिया आदि मत्स्य व्यवसायी जातियां भी अपनी आदिम संस्कृति के सौन्दर्य को सुरक्षित रखे हुए है। इस प्रकार वैदिक शैव, शाक्त एवं तांत्रिक परम्पराओं के आधार पर विकसित, अन्ध-विश्वास, जादू टोने, पूजा अनुष्ठान, आचार विचार एवं लोक मान्यताओं के साथ ही गुजरात, राजस्थान, बुन्देलखण्ड एवं दक्षिण आदि निकटवर्ती क्षेत्रों से आई हुई जातियों की परम्परा और संस्कारों का एक विचित्र सहयोग लेकर मालव की लोक संस्कृति एवं भाषा ने एक नवीन रूप धारण कर लिया है। संस्कृति समागम की मनोरम भूमि मालवा में प्राचीन काल से लेकर आज तक न जाने कितनी जातियां एवं परम्पराएं आकर इतनी घुल मिल गई हैं कि लोक-जीवन में व्याप्त उनकी व्यक्तिगत विशेषताओं को विच्छिन्न कर अलग से देखना असम्भव है। व्यक्तिगत आचरण व्यवहार एवं प्रवृत्तियां लोक जीवन के महासमुद्र में इतनी विलीन हो गई हैं कि बूंदों के रूप में उनके अस्तित्व का महत्व ही नहीं रह जाता। मालवा के हरे भरे विस्तृत मैदानों एवं खेतों में सोने से गेहूं और मक्का एवं चांदी सी जुवार की लहलहाती फसलों ने यहां जनजीवन को एक विशिष्ट संस्कृति में ढाल दिया है। सम्पूर्ण भू भाग का सामान्य जीवन संघर्षों से बहुत कम टकराया है। अतः शान्ति प्रियता एवं सौजन्य यहां के लोकजीवन का शाश्वत स्वभाव बन गया है और कृषि कर्म मानव जीवन का सुन्दर शिल्प एवं लोकगीत उस जीवन की अभिव्यक्ति का साकार रूप।

● ●

हिन्दी-विभाग
माधव महाविद्यालय, उज्जैन

3. Memoirs of Sir John malcolm, II, P. P. 113

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मालव, मालव जनपद और उसका क्षेत्र विस्तार

डॉ० सूर्यनारायण व्यास

महा मालव और अवन्ती-जनपद की सीमा के विषय में पुरातन ग्रन्थों और इतिहासकारों में मत पार्थक्य प्रतीत होता है। जिस आक्रांता महान् सिकन्दर का मालव-गणों ने पंजाब-प्रदेश में शौर्य के साथ मुकाबला किया था, तब वे मालव पंजाब में कहाँ से आए थे ? क्या वे वहीं के थे ? तो आज के मालव में उनका अस्तित्व कब और कैसे हुआ, और कब से इस प्रदेश का मालव नाम-संस्कार हुआ, यह प्रश्न विचार और अनुशीलन की अपेक्षा रखता है। पुराण के मालव और मल्लों की संगति लगाने की भी आवश्यकता है। इसी प्रकार अवन्ती के विषय में वराहमिहिर, राजशेखर तथा कुछ अन्य विद्वानों ने देश वर्णन में उल्लेख किया है, वह विचारणीय हो जाता है, उन्होंने अवन्ती और मालव को स्वतन्त्र रूप से अलग-अलग माना है, जबकि आज अवन्ती और मालव में किसी प्रकार द्वैत नहीं माना जाता-कि मालव-प्रदेश और अवन्ती-प्रदेश एक ही समझे जाते हैं, और इनकी सीमाएँ विन्ध्य के अंचल से लेकर नर्मदा उपत्यका और वेत्रवती तथा बूंदी की पर्वत शृंखला के अन्तर्गत सीमित मानी जाती है, भाषा तथा संस्कार भी इसे समर्थन देते हैं। अवश्य ही सीमा के कुछ भाग मध्य.प्रदेश एवं राजस्थान में संयुक्त है किंतु जिस प्रकार अंग्रेजी शासन-काल में अप्राकृतिक-विभाजन हुआ था, आज भी अज्ञ-अधिकारियों ने बिना किसी इतिहास-संस्कृति के समझे यह कर डाला है।

वात्स्यायन के कामसूत्रकार ने अवन्ती के रहने वालों को उज्जयिनी देश का निवासी माना है—

'आवन्तिका उज्जयिनी देश भवाः' और उन्हीं को 'अपरमालवीय' (ता एवापर-मालव्यः) माना है। और अपर मालवा के पश्चिम में लाट (गुजरात) को सूचित किया है। (अपर मालव-पश्चिमेन लाट विषयः) उन्हींने नर्मदा के दक्षिण-भाग में दक्षिणापथ कहा है। यह सही है, स्वयं नर्मदा मालव और दक्षिणापथ की प्राकृतिक विभाजक-रेषा है, परन्तु बुद्धकाल में माहिष्मती के भाग को पश्चिम मालवा कहा गया है। विदिशा के भाग को पूर्व-मालव तथा आकर-अवन्ती सूचित किया है, और दशपुर को उत्तर मालवा, अवन्ती मध्य-मालव के नाम से ज्ञापित हुई है। विष्णुपुराण ने 'मालव' शब्द में समस्त मालव-प्रदेश की एकता स्वीकार की है।

'कारुषा मालवाश्चैव पारियात्र निवासिनः'

स्कन्दपुराण, महाभारत और भागवत-काल में भी अवन्ती और मालव को प्रथक् नहीं माना गया। अवन्ती को केन्द्र-बिन्दु मानकर ही मालव कहा है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

काव्यशिक्षा-कार विनयचन्द्र ने देश वर्णन में ८४ देशों की चर्चा की है उसमें "मालव-लोहित" में मालव प्रयुक्त कर—

'कुरु काहल कामरूप कांच्यवन्ती' में अवन्ती को स्वतन्त्र सूचित किया है और उसकी जनसंख्या—

'अष्टादश लक्षाणि द्विनवत्यधिकानि मालवो देशः' अठारह लाख ९२ की बतलाई है। ❀

परन्तु अभिधान चिन्तामणिकार ने—'मालवास्युरवन्तयः' मालवीयों को आवन्तिक ही स्पष्ट कहा है।

वराहमिहिर ने बृहत्संहिता में—'आवन्तोऽथानर्ता'—३३ कह कर—'प्रस्थल-मालव कैकय'—२६—मालवा का पृथक् उल्लेख किया है और इस प्रदेश की नदियों के नाम इस प्रकार दिए हैं :—

'शोणस्य नर्मदायाः भीमरथायाश्च पश्चिमार्धस्थाः ।
निर्विन्ध्या—वेत्रवती, सिप्रा—गोदावरी—वेणा । ९

और राजशेखर ने—अवन्ती पारियात्र, एवं दशपुरियों को भूत भाषा के जानकार कहा है। (आवन्त्याः पारियात्राः सह दशपुरजै भूतभाषां भजन्ते) उसने भाषा दृष्टि से इस प्रदेश को एक, और आवन्तिक ही कहा है।

भरत नाट्य-शास्त्र के १३ वें अध्याय में—

आवन्तिक और मालव के दाशार्णों और वैदिशिक (भेलसा) को भी अलग बतलाया है, पर उन सबको एक आवन्ती-रीति मानने वाले कहा है, यथा—

"आवन्तिका, वैदिशिका, सौराष्ट्रा मालवास्तथा ।
सैन्धवास्त्वथ सौवीरा आनर्तास्सार्बुदेयकाः ।
दाशार्णास्त्रैपुराश्चैव तथा वैमातिकामताः ।
कुर्वन्यावन्तिकी मेते प्रवृत्ति नित्यमेवतु ।'

यह नाट्य प्रवृत्ति—'आवन्ती' उक्त देशों में नित्य प्रचलित है। यह कहते हुए भी "आवन्तिक, मालव, वैदेशिक" (भेलसा के) तथा दशार्णों के एक प्रदेश स्थित रहते हुए भी स्वतन्त्रता सूचित की है।

जिस प्रकार भौगोलिक और प्राकृतिक कारणों से हमारे देश और दिशा-विभाजन की मान्यता है, उसी प्रकार खगोल की दृष्टि से भी तारों से दिग्विभाजन भी होता है। जैसे चित्रा और स्वाति के तारे के बीच का प्रदेश प्राची है। उसी के अनुसरण से प्रतीची ध्रुव के कारण उदीची (उत्तर) और उसके अन्तर में विदिशा (भेलसा) आदि। इसमें केवल विदिशा को गृहीत किया गया, और भाग का उल्लेख नहीं है। हाँ, राजशेखर ने पृष्ठ ९ पर 'काव्य-मीमांसा' में जनपदों की चर्चा की है, वहाँ पुनः अवन्ती और मालव को दो स्वतन्त्र जनपदों के रूप में प्रदर्शित किया है और विदिशा को भी भिन्न बतलाया है—

"—ततः सोऽवन्तींप्रत्युच्चचाल ।
यत्राऽवन्ती वैदिशि सुराष्ट्र मालवाऽर्बुद भृगु कच्छादयो जनपदाः।"

अवश्य ही इस प्रथकता में भी यही स्पष्ट कहा है कि उनका कहना और आचरण दोनों एक दूसरे से भिन्न हैं—

❀ स्कन्दपुराण में मालवे के ग्रामों की संख्या ११८१-८० है (कुमारखण्ड ३४-३९)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"यज्जल्पितं यच्चरितादिकंत दन्योन्य सम्भिन्न मवन्ति देशे"

बहुत समय पूर्व डॉ०सिल्वन लेवी ने एक प्राकृत पद्य प्रकाशित किया था, पता नहीं उसका आधार क्या है ? परन्तु उसमें अवन्ती की केन्द्रीय भूमि 'माहिष्मती' बतलाई है।

'दन्तपुरं कलिङ्गानि अस्सकानांच पोटनम् ।
माहिष्मती अवन्तीनां सौवीरानां च रोरुकम् । ❀

और हेमचन्द्र ने अभिधान चिंतामणि में एक 'कुमालव' शब्द अंकित किया है (भूमि काण्ड २६) संभव है—

पं० भगवद्दत्तजी के अनुसार यह छोटा मालव होगा। परन्तु यह सौवीर गणराज्य के अन्तर्गत था, अलबेरूनी इसे मुलतान के पाल प्रदेश में सूचित करता है। वैसे सौवीर का स्वतन्त्र वर्णन अष्टाध्यायी की काशिका वृत्ति, भास के अविमारक आदि में, तथा आयुर्वेद ग्रन्थों में भी है। वहाँ मालव की कहीं चर्चा नहीं है। इसी तरह वाल्हिक-देश में क्षुद्रक और मालवों को आयुधजीवी कहा गया है। (काशिका वृत्ति ५।३। ११४) महाभारत कर्णपर्व में वाल्हिक में अनार्य निवास बतलाया है। सम्भव है इन अनार्यों के उच्छेदन के लिए आयुधजीवी (सैनिक) मालवों को रखा गया हो। क्षुद्रक मालवों का वर्णन प्रायः महाभारत में कई स्थल पर आया है। पातंजलि ने भी (महाभाष्यमें) इनकी चर्चा की है। मालव का वर्णन सभापर्व (७८-७०) में भी आया है। ये गेहूं के पात्र भर कर युधिष्ठिर को अर्पण करने के लिए लाये थे, और यह सभी जानते हैं कि मालव-भूमि गेहूँ के लिए प्रख्यात् है, ये वहां से यह उपहार ले गए हों ! इससे यह प्रतीत होता है कि महाभारत युद्धकाल में जो मालव योद्धा गए थे, वे उत्तर-भारत में कुछ समय रहे हैं। परन्तु कुछ इतिहासज्ञ आधुनिक फिरोजपुर (पंजाब) से लगे हुए भाग को उस प्रदेश का मालव मानते हैं। और इन्हीं पर से पंजाब के मालव उदीच्य-मालव कहे गए हों, और सौराष्ट्र से संलग्न प्रतीच्य मालव। अवश्य ही उदीच्य और प्रतीच्य मालव महाभारत में (भीष्म पर्व ११७।३३।११९।८५और द्रोणपर्व ७।१५) युद्धकाल में संयुक्त थे और कर्ण पर्व के इस श्लोक—

'मालवा मद्रकाश्चैव द्राविड़ाश्चोग्र कर्मिणः। (५० अ. २)

के अनुसार भी महाभारत युद्ध में उनका सहयोग था।

किन्तु उज्जैन के विन्द और अनुविन्द ने भी पाण्डव-युद्ध में भाग लिया है। यह महाभारत—भागवत स्पष्ट बतलाता है। इससे यही खयाल होता है कि—अवन्ती से जाकर ही इनकी सैन्य ने उदीच्य में संघर्ष किया शौर्य किया। उन्हें पंजाब के मालव समझने या मानने की आवश्यकता नहीं।

एक समस्या यह भी सामने आती है कि दशार्ण-देश मालव से संयुक्त रहा है। ऊपर हम बतला चुके हैं कि अवन्ती—या मालव जनपद के एक भाग को दशार्ण कहा है। परन्तु महाभारत तथा कुछ पुराणों में उसे मध्यदेश में (भीष्मपर्व—९।३९-४२ वायु ४५—१०९—१११ ब्रह्मांड पू० भा० २।१६ मत्स्य ११४।३४।३६ आदि) रखा है। ❀

❀ नोटस् इण्डियन्स, जन. माट्स, १९२५ पृष्ठ ४८

❀ दशार्ण देश पर हम स्वतन्त्र-रूप से लिखेंगे, विदिशा के पास के प्रदेश का नाम ही दशार्ण है। —लेखक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

११ वीं शति में राजशेखर ने मध्यदेश की व्याख्या–'योमध्यें मध्यदेशे निवसति सतत' की है। इससे आज जिस प्रदेश का नाम मध्यदेश कहा जाता है, वह न होकर मध्य-भारत होना चाहिए। जिस प्रकार चेदी के लिए विद्वानों में मतभेद है, कुछ बुंदेलखण्ड को चेदी मानते हैं और कुछ त्रिपुरी को। परन्तु कलचुरियों के समय में यह विस्तार ठेठ मालवा तक हो गया था। उनकी राजधानी 'अनर्घराघव' के मतानुसार (७।११५) माहिष्मति हो गई थी। इसीके शासक शूर की कन्या राजाधिदेवी की शादी आवन्त्यराज से हुई थी और उसी के पुत्र विन्द—अनुविन्द थे। ये ही महा भारतयुद्ध में अवन्ती से जाकर सम्मिलित हुए थे और इन्हींके घर आकर भगवान श्रीकृष्ण ठहरे थे, उज्जैन में विद्याध्ययन किया था और इनकी बहन मित्रविन्दा से विवाह किया था।

पं० भगदत्तजी ने विंध्य पृष्ठवर्ती जनपदों को पुराणों के आधार पर (वायु–४५।१३१, १३४ ब्रह्मांड २।१६।६३।६६ मत्स्य–११४।५१–५४) निम्नरूप में माना है—

१ मालव, २ करुष, ३ दशार्ण,.४ भोज ५ तोसल, ६ कोसल, ७ त्रिपुर, ८ विदिशा, ९ तुहिण्ड, १० तुण्डिकेर, ११ निषध, १२ वीतिहोत्र।

हम ऊपर इसी प्रकार पुराणों के अतिरिक्त साधनों से भी मालव दशार्ण, विदिशा आदि विभक्त जनपदों का उल्लेख कर चुके हैं। उज्जैन के उत्तर–पश्चिम का प्रदेश मालव कहलाता था। अपरमालव भी इसे ही कहते थे, और महाभारत (भीष्मपर्व—११७।३३, ११९।८५) में इसे प्रतीच्य और पश्चिमी-मालव कहा है। ऐसी स्थिति में पंजाब के स्वतंत्र मालव होने का कुछ अर्थ नहीं रहता। इसी तरह महाभारत और गीता में जिस कुन्ति भोज का उल्लेख है वह भी मालव सीमा में था। जहाँ सहदेव, पाण्डव चम्बल के तट पर आया था। ऐसी अवस्था में महाभारतकार प्रधानरूप से इसी मध्य-मालवा को महत्व देता है, और निषध देश भी अवन्ती के निकट ही कहा गया है। महाभारत समर में इसका शासक भी लड़ाई के लिए गया था (द्रोणपर्व २८।१३) अवश्य ही उस समय ये छोटे-छोटे जनपद रहे होंगे और इसी भूमि में होंगे, जब विन्द, अनुविन्द दोनों भ्राता इसी जगह द्वैराज्य- पद्धति से रहते थे।

पं० भगवद्दत्त ने मत्स्यपुराण के अनुसार (४३.४६.४८) कार्तिवीर्यार्जुन के कुल में उत्पन्न अवन्ती नामक राजकुमार से इस प्रदेश का नाम अवन्ती सूचित किया है। किन्तु स्कन्दपुराण (जिसका नाम ही कार्तिकेय के नाम से ज्ञापित है) में अवन्ती की उत्पत्ति स्वतंत्र प्रकार से की है. और विभिन्न नामों की स्वतंत्र गाथा प्रस्तुत की हैं, अन्य पुराणों में भी इसी प्रकार की चर्चा है। उधर ब्रह्माण्ड पुराण में अवन्तियों को 'वीतिहोत्राह्यवन्तयः'—'वीतिहोत्र ही आवन्तिक थे' कहा है। किन्तु मत्स्य में अवन्ती और वीतिहोत्र को भिन्न २ जनपद कहा गया है। (११४।५४) जो भी हो ये निकटवर्ती अवश्य रहे हैं। क्योंकि माहिष्मती के सहस्रार्जुन कुल में वीतिहोत्र एवं अवन्ती दीर्घकाल तक संयुक्त बने रहे हैं। जैन पण्डित मल्लिषेण ने उज्जैन को अवन्ती देशान्तर्गत लिखा है। भास, कालिदास, बाण, शूद्रक ये अवन्ती और उज्जैन में कोई अन्तर नहीं मानते हैं। अवश्य ही कालिदास आज से २००० हजार वर्ष पूर्व विदिशा को शुंगों की राजधानी मानता है। मालविकाग्निमित्र से स्पष्ट प्रमाणित होता है, परन्तु जब वह मेघदूत के द्वारा अपने मेघ को उज्जैन में भेजता हैं, तब लगता है विदिशा राजधानी नहीं रही थी। इसीलिए 'वक्रपन्था यदपि भवतः' कह कर वह 'प्राप्यावन्ती' और 'मास्म भू रूज्जयिन्याः'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
में कोई अन्तर नहीं करता, दोनों में एक ही नगर अवन्ती—(उज्जैन) ही स्वीकार करता है। इसी प्रकार भास की वासवदत्ता, प्रतिज्ञा यौगन्धरायण में भी ई० स० पूर्व अवन्ती-उज्जैन में कोई भेद लक्षित नहीं होता। हाँ, हम एकदम शक एवं कुषाणकाल में मालवों को पंजाब छोड़ पश्चिमोत्तर राजस्थान के उर्वर अंचल में पाते हैं। जो पंजाब में दिखाई देते थे, अब वे राजस्थान में मिलते हैं। पुष्कर वन उनका स्थान प्रतीत होता है।

नहपान ने अपने जामातृ उषवदात को एक सबल सेना के साथ मालवों पर प्रभाव डालने के लिए भेजा था। जिसने उन्हें अधीन करके पुष्कर में स्नान किया था। यह उल्लेख नासिक के दशम् शिलालेख में नहपान ने किया हैं। फिर भी मालवों ने राजपूताना में स्वतंत्र जनपद स्थापित कर लिया था। यह पिछले पौराणिक जनपदों में अवन्ती के अन्तर्गत जनपदों की सूची से भी प्रमाणित होता है। यहाँ से वे अवन्ती में आये होंगे यह भ्रामक है, क्योंकि वे अवन्ती-जनपद के ही व्यापक-रूप में रहने के कारण--तथा आयुध-जीवी होने के कारण विभिन्न भागों में गए, रहे, और फैले हैं, उनका मूल-स्रोत अवन्ती ही रहना चाहिए। जिन मालवा-गणों की मुद्राओं से नाम-भ्रम के कारण उन्हें कुछ विद्वान् विदेशी होने की भ्रांत-धारणा बनाते हैं। वे मुद्रायें ३ या ४ थी शती की हैं और इनके निर्माण में विदेशी प्रभाव है। इस काल के पूर्व मालवों का अनेक ग्रन्थों में, अनेक स्थानों में उल्लेख मिलता है, और स्वयं सिकन्दर ने इन्हें इसी देश के गणतन्त्री स्वीकार कर इनका लोहा माना है, इसलिए इनके विदेशी होने की बात निरर्थक ही नहीं, गलत भी है। महाभारत में कीचक की भगिनी सुदेष्णा एवं कीचक को मालव-कुमारी से उत्पन्न कहा गया है।

'पुत्रास्तस्य कुरु श्रेष्ठ मालव्यां जज्ञिरे तदा।'

और अश्वपति कैकय की कन्या सावित्री (जो सत्यवान् के कारण प्रसिद्ध है) का विवाह द्युमत्सेन के सुत सत्यवान् से हुआ था। यह सावित्री मालवी थी, इससे शत संतति हुई थी।

'पितुश्चते पुत्रशतं भविता तव मातरि।
मालव्यां मालवा नाम शाश्वता पुत्र पौत्रिणः। (वनपर्व २७०)

सम्भवतः सैनिक-मालव कुछ पांचाल में रह गए हों, और वे बाद में सिख हो गए हों। आज फिरोजपुर, पटियाला, जिन्द आदि के कुछ सिख मालवी माने जाते हैं। इसी तरह नकुल की पश्चिमी देशों की विजय यात्रा के प्रसंग पर मालवों की विजय की चर्चा है।

शिवीं स्त्रिगर्तानंवष्टान् मालवान् पंच कर्पटान्।

यह विजय माध्यमिका नगरी एवं पुष्कर-वन की है, और स्पष्ट ही उन्हें 'गण' सूचित किया है। (गणानुत्सव संकेतान्) और कर्ण ने दिग्विजय के समय मद्र-रोहितक में विजय की थी। (मद्रान् रोहितकाश्चैव आग्नेयान मालवकानपि। (२० वन.) इस प्रसंग में शुद्रकों के साथ इन्हें संयुक्त बतलाया है। इससे प्रतीत होता है कि मालवक–और क्षुद्रकों में पारस्परिक सौहार्द रहा है। संयुक्त संघर्ष-रत रहते थे, यह सिकन्दर के समय भी हुआ है। अर्जुन ने इन्हें परास्त किया था—तब भी ये 'गण' ही रहे हैं।

प्राच्यश्च सौवीर गणाश्च सर्वे
विपातिताः क्षुद्रक मालवाश्च (आ० ५९)

स्पष्ट है कि मालवों के जनपद देश के उत्तर, पश्चिम, पूर्व दिशा में विस्तृत रहे है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'प्राच्याः प्रतीच्योदीच्य मालवाः' (अ० १०६)

भार्गव-राम (परशुराम) ने मालवे में जमदग्नि वध के कारण संग्राम घोषणा की थी, तब भी मालव ही प्रमुख थे, उनके साथ भी क्षुद्रकों का सहयोग था। ये गणतंत्र बहुत सबल और बहुत विशाल थे यह स्पष्ट है। कुछ लोग 'मालव' को गोत्र समझने लगे थे, इसका स्पष्टीकरण महाभाष्यकर को करना पड़ा--

'नच क्षुद्रक-मालव शब्दो गोत्रम्'

और क्षुद्रक-मालव की विभिन्नता बतलाते हुए, तथा विशुद्ध-सैनिक संगठन सूचित करते हुए कात्यायन ने महाभाष्य के सूत्र की व्याख्या विशद कर संदेह निरसन किया है—

'सेनायाँ नियमार्थवा, अथवा नियमार्थोऽयमारम्भः।
क्षुद्रक-मालव शब्दात् सेनायामेव कमाभूत् क्षौद्रक मालव मन्यत्

इस वार्तिक से बहुत बड़ा संदेह समाप्त हो जाता है। ये मालक कहीं विदेश या प्रदेश के निवासी नहीं हो सकते, किन्तु सैन्य-संगठन के कारण ही विभिन्न-भागों में थे, और क्षुद्रकों के साथ संधि द्वारा जुड़े हुए थे। वस्तुतः इनका मूल-स्थान महाभारत में भी अवंती रहा है जो अनेक उल्लेखों से स्पष्ट है। अवश्य ही ये विभिन्न भागों में विस्तृत हुए थे, अनेक स्थानों पर सत्ता हो गई थी इस कारण वहाँ उनका रहना सुरक्षा और शासन के लिए स्वाभाविक भी था। परन्तु इससे यह नहीं प्रतीत होता कि मालवे में भी ये कहीं बाहर से आए हैं। महाभारत और वाल्मीकि में अनेक जगह इन्हें इसी प्रदेश का स्वीकार किया है। महाभारत समर में इनके वीरों का सहयोग स्पष्ट ही मिलता है, और जिस 'नरोवा कुंजरोवा' की घटना जन-जीवन में उदाहरण बनी हुई है, वह भी मालवे से ही सीधी सम्बन्धित है। मालवे के राजा इन्द्रवर्मा के हाथी का नाम 'अश्वत्थामा' था उसे भीम ने मारा था जो इन्हीके पक्ष का था घोषित कर दिया गया था कि—'अश्वत्थामा हतः'

(पर प्रमथनं घोर मालवेन्द्रस्य वर्मणः। जघान गरया राजन् अश्वत्थामानमित्युत ११६....अश्वत्थामाहत इति शब्द मुच्चैश्चकारसः। अ.१९०)

यह सारा साहित्य प्रमाणित करता है कि मालव इसी अवंती भूमि के थे, न तो वे बाहर के थे, न बाहर से आए ही।

वस्तुतः मालव शब्द जिसका मल्व के रूप में अथर्ववेद के (२० काण्ड सू. १८-१९-२०-२१) अंदर भी उल्लेख आया है उसकी व्याख्या, कालिदास ने 'मालं-मालव-देशेच' और (क्षेत्र मारुह्य मालम्)—में 'उन्नतभूतल' के रूप में की है।❖ यह इस प्रदेश का एक प्रकार से चित्र ही है, अवश्य ही मालवों का देश के विभिन्न-भागों पर पर्याप्त प्रभाव था,

❖ जन साधारण में भी 'माल' शब्द ऊँचे भाग को कहा जाता है। किसानों का 'माल' श्री खेत का टीला, या उस पर बाँधा गया मचान' (मंच) होता है। आज भी गुजरात बम्बई आदि में मकान के दूसरे तीसरे खण्ड को--दूसरा माला, तीसरा माला कह कर सम्बोधित किया जाता है। इस प्रकार सारे देश का मालव मध्य-भाग और 'प्लेटो' होने के कारण ऊँचाई पर स्थित है, इस कारण उसे – माल-उन्नत-भूतल (मालमुन्नत भूतलम्) ज्ञापित किया है। --लेखक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
अतएव विभिन्न-भागों में मालवों का अस्तित्व समय-समय पर दिखाई पड़ता है। ये गण-प्रधान थे, ऐसी अनेक शाखाओं का उल्लेख यूनानी लोगों ने भी किया है। व्यापक प्रभाव के कारण फैलना सम्भव है, परन्तु इससे उन्हें बाहर के मानना तो तथ्य का उपहास करना या अज्ञता प्रकट करना ही होगा।

हाँ, मालवों ने जयपुर के निकटस्थ कर्कोटक को राजधानी बना ली थी, यह कर्कोटक के नाम पर स्थापित किया गया नगर था। परंतु यह मालव पर नाग-वंशियों के प्रभावकाल की घटना है। नागों का मालवे से सम्बन्ध नया नहीं। मत्स्य और विष्णु-पुराणों में स्पष्ट इस कर्कोट विजय का मालव से सम्बन्ध है और माहिष्मती उसका स्थान रहा है।

एपनागः मनुष्येषु माहिष्मत्यां महाद्युतिः ।
कर्कोटक सुतं जित्वा पुर्यांतत्र न्यवेशयत् । मत्स्य—४३ अ.

तथा—

सहि नाग सहस्त्रेषु माहिष्मत्यां नराधिपः ।
कर्कोटकं सभां जित्वा पुरीं तत्र न्यवेशयत् । ब्रम्हा० पा० ३ अ० ६९

अर्थात् माहिष्मती (महेश्वर) के कार्तवीर्यार्जुन ने कर्कोटक नाग को उत्तर में, पातालस्थ नागों को दक्षिण में परास्त किया था और अपना अधिकार प्रतिष्ठित किया था। जयपुर के कर्कोटक नगर के मालव भी यहीं से गए थे। हमें इतिहास को पुराण से सुसंगत बनाए बिना तथ्य पाना कठिन है। डॉ० जायसवालजी ने जिन नागों को अंधकार युग में खोजा, उनकी संगति में पुराण प्रकट कर रहे हैं।

सारे मालव जनपद में आज भी सर्प के निकलने पर कार्तिवीर्य का मंत्र पढ़ने की प्रवृत्ति सीधे कर्कोटक नाम से सम्बन्धित है, जो मालवों के कर्कोटक नगर पर प्रभाव को ही परम्परा से पोषित करती है।

(कर्कोटकस्य नागस्य दमयन्त्या नलस्यच,
ऋतु पर्णस्य राजर्षे कीर्तनं कलि नाशनम्)

यह कथा कितनी इतिहास संगत और मालव-प्रभाव को प्रमाणित करती है! इसलिए कर्कोटक के मालवों को भी हम बाहरी मानने का कोई कारण नही देखते। उनका सीधा माहिष्मती से सम्बन्ध प्रमाणित हो जाता है।

हमने पुराणों की उपेक्षा की है, 'पुराण' शब्द ही 'पुरातन' गाथा का प्रतीक है। भारत में इसी रोचक-रूप में इतिहास वर्णन की प्रवृत्ति रही है। यदि हम उसे सावधानी और सतर्कतापूर्वक देखें तो आधुनिक इतिहास की अनेक उलझने सहज और सरलता से हल हो सकती हैं। मालव के विषय में पुराणों का उल्लेख बहुत प्रकाश प्रदान करता है। उनके व्यापक प्रभाव और विस्तार अधिकार की सगति भी सूचित करता है। महाभारत, ब्रह्माण्ड पुराण, रामायण, भास, कालिदास, बाण, भारवी, शूद्रक, राजतरंगिणी, कथा सरित सागर, अनर्घराघव, पाणिनी आदि ने मालव का मध्य-स्थान अवंती को ही माना है। कुछ ग्रंथ जैसे गोविन्द सुत और दीघ-निकाय (१९।३६) में माहिष्मती को मालव राजधानी कहा गया है। तथा कुछ आधुनिक इतिहासकारों ने विक्रम की ७ वीं सदी में अवंती को मालव कहने की चर्चा की है। विदिशा का नाम भी आकर–अवंती कहा गया है। वसिष्ठ-पुत्र पुलमायी और रुद्रदामा के गिरनार के अभिलेखों में भी आकर-अवंती का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उल्लेख है। वह पूर्व और अपर-अवंती का संकेत करते हैं। ये सम्भवतः तत्कालीन शासन के केन्द्र नगर को लक्ष्य करके ही कहे गये हैं। दोनों भेदों से अवन्ती के मध्य भाग में होने में कोई अन्तर नहीं आता। आकर शब्द 'खदान' का सूचक है और कालिदास के उस संकेत के अनुसार जिसमें उज्जैन के बाजार के विद्रुम आदि रत्नों के ढेर को देखकर कहा है कि मालूम होता है 'रत्नाकर' (नाम से) रत्न समस्त उज्जैन में ही ढेर हो गए हैं और अब सागर केवल जल मात्र रह गया है। यही लगता है कि इस भाग में रत्नों की खदाने थीं और उसीको ध्यान में रखकर इसे 'आकर-अवन्ती' नाम दिया गया गया होगा। पेरिप्लस ने इसे व्यापारिक महत्व के कारण इस नाम के दिए जाने की चर्चा की है। पूर्व और पश्चिम की अवंती या विदिशा तथा माहिष्मती के ऊर्जस्वित काल में ये दिग्भेद भी समझे गए हों। परन्तु अतन्तः ये भेद मालव की व्यापक एकता में बाधक नहीं हो सकते। ये प्रदेश इसीके अंग रहे हैं और आज तक विद्यमान हैं। यह सत्य है कि अवन्ती का विस्तार बहुत दूर-दूर तक था। मालवों का प्रभुत्व भी देश के विभिन्न भागों पर था। और अनेक जनपदों के समूह उनके प्रभाव-क्षेत्र में रहते थे। इसलिए विभिन्न भागों में मालवों को मिलता देख सहसा भ्रम की आशंका हो सकती है। किन्तु मालवों का मूल-स्थान अवन्ती ही रहा है, और इसी प्रदेश जनपद के मालव रहे हैं। यह अनेक ग्रन्थों प्रमाणों से स्पष्ट प्रमाणित होता है। भारतीय गणतन्त्रों के इतिहास में भी मालवों का महत्व सर्वोपरि और पुरातन-तम है यह निर्विवाद है। मालव ने इतिहास-साहित्य-पुराण-कथा-गाथा आदि को अपने शौर्य-वैभव से सुसमृद्ध बनाया है।

मालव गण : भाषा का व्यापक रूप

मालव-गणों के शौर्य की कथा गाथाओं से पुराण महाभारत के अनेक स्थल भरे हुए हैं। महाभारत के कुरुक्षेत्र में, तथा अन्य समरों में मालव-गणों का महत्वपूर्ण योग रहा है। सिकन्दर के साथ संघर्ष करके मालव-गणों ने अपनी कीर्ति अमर कर ली है। आज से ३ हजार वर्ष पूर्व मालव-गणों की महत्ता मान कर व्याकरणकर्ता पाणिनी ने उनके गणतन्त्र की व्याख्या भी की है। ये मालव पंजाब में समर काल में गए, अपने अधिकृत-प्रदेशों की रक्षा के लिये रहे, और कुछ वहीं बस गए। इसी प्रकार राजस्थान के कुछ प्रदेशों पर भी हैहय-मालव-गणों ने अधिकार किया और वहाँ सूत्र संचालन के लिये रहे, इसी तरह उत्तर प्रदेश के बहुत बड़े भूभाग में मालव-गणों ने शासन किया। इस अवसर पर जो मालव-जन वहाँ रहे परस्पर सम्बन्ध स्थापित किया और सांस्कृतिक आदान-प्रदान किया, वे अपनी भाषा, संस्कृति-संस्कार और सभ्यता की छाप उन प्रदेशों में सुरक्षित कर गए। आज पंजाब में जिस जिंद-प्रदेश और सरहिंद-मालव भाग में 'मालवी सिख' नामधारी जन बसे हुए हैं उनकी भाषा में यद्यपि सदियों के संस्कारों के कारण पंजाबीपन पनप गया है, परन्तु उनके संस्कारों में मालव-भूमि और मालवे के मध्य भाग में प्रचलित रीतियों के स्पष्ट दर्शन होते हैं। उनके लोक गीतों में वही भाव हैं, वही विषय हैं जो यहाँ के संस्कारों में अद्यावधि समवेत हैं। अनेक गीत ऐसे प्राप्त होते हैं जो पंजाबी आवरण हटा दिये जाने पर मूलतः मालवीय मिलते हैं। इससे स्पष्ट है कि पंजाब के सुदूर अन्तरिम भाग में मालवी-सिख नाम से अभिहित लोग किसी काल में मालवे से गए हुए ही हैं।

लोक गीत, गृह-जीवन-संस्कार उनके मूल रूप को नहीं छोड़ते। यही उनके संस्कृति के स्रोत बन कर शतियों तक उनके असली रूप को बनाए रखते हैं और उनके परिचायक बन जाते हैं। राजस्थान की भाषा में मिलने वाले मालवी शब्द भी उसी प्रकार शतियों पूर्व

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
पड़े प्रभाव और संस्कारों-सम्बन्धों के परिचायक हैं। फिर राजस्थान तो इस मालव प्रदेश का पड़ोसी भाग है। वहाँ संस्कारों का प्रभाव पड़ता रहे और आदान-प्रदान होता रहे तो आश्चर्य नहीं, किन्तु सुदूर राजस्थान के जिन भागों में मालवी भाषा का मेल-जोड़ मिलता है वह मालव गणों के अधिकृत काल के दीर्घ सम्बन्धों के कारण ही है। ११ वीं शती के राजशेखर ने आबू आदि प्रदेशों को मालव जनपद के रूप में ही माना है। माहिष्मती के हैहयों का अधिकार आबू और जयपुर के कर्कोट-नगर आदि पर था, यह महाभारत और मत्स्यपुराण से भी प्रकट है। इधर सुदूर मगध का भी मालव से सम्बन्ध दीर्घ काल पर्यन्त रहा है, मौर्य, शुंग और गुप्त काल में मगध और अवन्ती अनेक शतियों पर्यन्त सम्बन्धित रहे हैं। मालव योधेय गणों का सम्बन्ध इतिहास विदित हैं। बुद्ध काल में भी मालव और मगधों का गहरा सम्बन्ध रहा है, शासक शासित के रूप में भी एक दूसरे के निकट रहे हैं। प्रद्योत, अशोक, चन्द्रगुप्त के सम्बन्धों को कौन नहीं जानता स्वयं सेनापति पुष्यमित्र भी वहीं से आकर विदिशा का शासक रहा; सारा बिहार क्षेत्र भी उसके अधीन था ही, ऐसी स्थिति में सांस्कृतिक सम्बन्धों में निकटता आ जाना स्वाभाविक है। पर यह तो बहुत पुरानी बात हुई, दसवीं ११ वीं शती में धार के भोजराज का भी प्रभाव—अधिकार देश के विभिन्न भागों पर रहा है। भोज के वंश के अनेक जनों ने बिहार के विभिन्न भागों पर अपना प्रभाव स्थापित किया है। आज भी जितने बिहार प्रदेश स्थित परमार क्षत्रिय हैं, वे अपने को 'उज्जैनी राजपूत' ही मानते चले आ रहे हैं। महारानी लक्ष्मीबाई की तरह बिहार का परमवीर क्षत्रिय कुँवरसिंह जिसने विदेशी सत्ता के छक्के छुड़ा दिये थे, विद्रोही के रूप में जिसका स्वातन्त्र्य संघर्ष रोमांचित कर देने वाला हुआ है, वह भी उज्जैनी-राजपूत ही था, जिस प्रदेश का नाम भोजपुर कहा जाता है और जिस प्रदेश की भाषा 'भोजपुरी' के नाम से प्रसिद्ध है और जिसका व्यापक क्षेत्र है वह भोजपुर भी महाराजा भोज (धारा नगरी के) नाम से ही अंकित है। यह भोजपुर-परगना बक्सर के अन्तर्गत गंगा के दक्षिण तटवर्ती भाग पर है। वहां मुंडा जाति के 'चेरो' का वास था, उन पर विजय प्राप्त कर ११ वीं से १४ वीं शताब्दी के अन्दर धारा नगरी के परमारों ने अधिकार प्राप्त कर लिया था। क्योंकि मध्य युग में अवन्ती के मालव परमारों का वर्चस्व बहुत अधिक था, वे देश भर में प्रभावशाली बने हुए थे। परमार वंश का इतिहास बहुत उज्ज्वल रहा है। उनके ज्ञान, शौर्य, औदार्य की कथा-गाथाओं से शतशः रचनाएँ भरी पड़ी हुई हैं, बिहार का भोजपुर उन्हींकी स्मृति है। और भोजपुरी भाषा भी उसी नाम से सम्बन्धित है। भोज-पुरी के लोक साहित्य और संस्कारों में, भाषा में भी मालवी का रूप स्पष्ट लक्षित होता है। आज उसमें जो अन्तर हम देखते हैं, वह मालव से सम्बन्ध विच्छिन्न होने, तथा सुदूरवर्ती प्रदेश की इन भाषाओं के सम्पर्क के प्रभाव के कारण है। परन्तु भोजपुर और भोजपुरी नाम अब तक भी भोज राजा के सम्बन्ध को लिये अपने मालव महत्व को चिर साथी बनाए हुए हैं। इस प्रकार मालवी भाषा और मालव-संस्कृति का प्रभाव देश के विशाल और विभिन्न भूभाग पर प्रतिष्ठित है।

जिप्सी-जन जाति और मालव-भाषा !

किसी भी जाति के मूल को जानने के लिए मानव वंश-शास्त्र और मानव-शास्त्र जानने की आवश्यकता है। इनके स्रोतों का पता उनके संस्कारों, लोक कथाओं और भाषा के मौलिक-रूपों से विदित हो सकता है, जिप्सियों की जाति घुमक्कड़ रही है। उनका टोलियाँ बनाकर इधर से उधर जाना ही कार्यक्रम रहा है, वे कब कहाँ से गए, इस विषय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में विद्वानों में अनेक मतभेद प्रचलित हैं, परन्तु बहुमत यह है कि—वे मूलतः भारतीय हैं। जहाँ-जहाँ यह जाति संघ रूप में दिखाई देती है, उनकी भाषा, वेष-भूषा आदि से सहज यह लक्षित होता है कि उनका अवश्य भारत से सम्बन्ध रहा है । आज जिप्सी-जन यूरोप के विभिन्न भागों में फैले हुए मिलते हैं, जिन लोगों ने इनकी भाषा का सूक्ष्मता से अध्ययन किया है, वे निश्चय ही इस अनुमान पर आए हैं कि उनमें भारतीयता स्पष्ट लक्षित होती है। कुछ विद्वानों का मत है कि जिप्सी लोग छठी शताब्दी में भारत से बाहर चले गए थे, और कुछ लोग पन्द्रहवीं शती में जाने का अनुमान करते हैं, किन्तु इस समय वे पश्चिमी गोलार्द्ध ही में बसे हुए हैं, अवश्य ही उनका कोई एक स्थान नहीं है, परिभ्रमण ही उनका पेशा है। फिर भी हंगेरी में अनेक जिप्सियों ने अपना स्थाई वास बना लिया है, इसके सिवा रूमानिया, वल्गेरिया, टर्की, रुमेलिया, सर्विया, बोनिया, हर्जेगोविना, ग्रीस, आस्ट्रिया, जर्मनी, फ्रांस, इटली, स्पेन, रशिया, पोलेंड, स्वीडन, नार्वे, डेन्मार्क, हॉलेंड, ईरान आदि देशों में मिलाकर इनकी संख्या लगभग दस लाख से ऊपर ही होगी।

विभिन्न देशों में इन्हें अनेक नामों से ज्ञापित किया जाता है । जर्मनी में १६ वीं शती में इन्हें—'इजिप्टेर-स्पेनिश-गितानों' नाम से अभिहित किया गया है । ६ ठीं शती में वाइजन्टाईन के लेखकों ने इनको घूमते हुए देखा है । अनेक लेखकों ने इनके आचरणों की शुद्धता की चर्चा की है, ये इतर जाति से स्पर्श नहीं करते हैं, नियमों का पालन करते हैं, जादूगर, सर्पमान्त्रिक, भविष्यवक्ता, आदि इन्हें बतलाया गया है, इनके आचार-विचार-व्यवहारों में भी भारतीयता स्पष्ट ही लक्षित होती है, आज भी जिप्सियों में अधिकांश जनों को पश्चिम में भविष्य-वक्ता के रूप में जाना जाता है । हम इनके वंश, जन्म, परिभ्रमण, पश्चिम प्रवास के इतिहास, काल क्रम के अनुमानाश्रित-अनुसंधान की गहराई में यहाँ नहीं जाना चाहते। हमें तो यह देखना है कि जिप्सी-जन जिस भाषा का व्यवहार करते हैं, उसमें भारतीयता के सिवा किस प्रदेश का प्रभाव विशेष है, आज तक जिन भाषा शास्त्रियों ने जिप्सियों की व्यवहृत की जाने वाली भाषा का परिशीलन किया है, वे सभी इस तथ्य पर आगए हैं कि अवश्य ही वे भारतीय हैं, और वे भारत से ही बाहर गये हैं। उनकी भाषा में इतर-देशीय भाषा के शब्दों ने प्रवेश किया है, उन शब्दों से उनके प्रवास मार्ग का पता चलता है। उनकी भाषा में फारसी, तुर्की, ग्रीक और स्लाव का पर्याप्त प्रभाव मिलता है। फिर भी उसमें अरबी का कहीं स्पर्श नहीं मिलता, यह विशेष रूप से विचारणीय ही है। जर्मनी और इटली में रहने वाले जिप्सियों में भी ग्रीक और आधुनिक ग्रीक भाषा के शब्द सहज प्राप्त होते हैं, इससे उनकी भाषा पर प्रथम प्रभाव की छाया स्पष्ट प्रतीत होती है।

अवश्य ही उनकी भाषा और भारतीय-प्रादेशिक भाषा से समन्वय साधकर यह निश्चय करना सहज नहीं है कि वह वास्तविक कौन सी भाषा से निकट सम्बन्ध रखती है। क्योंकि जिप्सी भाषा में शताब्दियों पूर्व के प्रवास और विभिन्न-भाषीय-प्रभाव के कारण बहुत कुछ अभिनवता का मिश्रण हो गया है, इसके मूल-रूप का प्रथक्करण करना दुस्साध्य तो नहीं, कष्ट साध्य अवश्य बन गया है । कालस्थल के प्रभाव ने उसमें अनेक विकृतियाँ उत्पन्न करदी हैं। भारतीय-भाषाओं में भी अनेक परिवर्तन हो गए हैं । फिर भी आर्मेनियन् जिप्सी और भारतीय प्राकृत-भाषा में अनेक अंशों में समानता प्राप्त होती है। किन्तु ग्रीअर्सन उसे पैशाची से सम्बन्धित सूचित करते हैं। बहुत समय पूर्व गुजरात के स्व० रमणभाई ने एक प्राच्य भाषा परिषद् में अपना निबन्ध पढ़ते हुए बड़े श्रम और तर्क

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
के साथ यह सिद्ध करने का यत्न किया था कि जिप्सियों की भाषा गुजराती और राजस्थानी के अधिक निकट है। वस्तुतः जिप्सी भाषा संस्कृति के प्रभाव से पुष्ट प्रतीत होती है।

जिप्सियों की ईश्वर विषयक भावना तो स्पष्ट ही देवला (मालवी-देवल) और क्रास को त्रुशुल (त्रिशूल) कहने से प्रकट होती है। यह भारतीय भावना का ही प्रभाव है कि 'क्रास' की पवित्रता में वह 'त्रिशूल' का स्मरण कर उठता है। जिप्सियों की भाषा यदि नागरी लिपि में प्राप्त हो तो उनका तौलनिक अध्ययन सरल बन सकता है, परन्तु जिन जिप्सियों का कोई एक स्थान न हो, जहाँ तहाँ उनके निकाले जाने के नियम बनाए गए हों, गुलामी करने को बाध्य किया गया हो, वहाँ उनके साहित्य-संस्कारों की उपेक्षा होना स्वाभाविक ही है। बहुत समय के पश्चात् मोलदेविआ, और रोमानिया में उनको दासता से मुक्ति मिली, और शिक्षा देकर नागरिक रूप में रहने का अवसर मिला, परन्तु यह ठेठ १८ वीं शती के अन्त में जाकर। एक विद्वान ने यह माना है कि जिप्सी भारतीय जाट जाति के निकल कर दशवीं-शताब्दी में प्रवासी बने हैं। जिप्सियों ने पुराने पात्रों के ठीक करने, लुहारी का काम करने, घोड़ों को नाल बिठाने, अश्व चिकित्सा, नृत्य, गान, बाजा-बजाना, डोरी पर खेल बतलाना आदि कामों में प्रवीणता प्रकट की है। पश्चिम-प्रदेशों में भारतीयों को भविष्य ज्ञान प्रवीण माना जाता है, सम्भव है यही कारण हो कि जिप्सियों ने भी भविष्य कथन और हस्त-सामुद्रिक का प्रयोग भारतीयता के नाते जीविकोपार्जन हेतु किया हो। पर इन धन्धों में भी उनकी भारतीयता रही है, वे परदेश में भी आर्य-भाषी माने गए हैं। रमणभाई ने गुजराती-राजस्थानी से शायद इसलिए उनको जोड़ा होगा कि उधर बाहरबटिये और राजस्थानी जाटों को धुमक्कड़ जाति है। परन्तु मध्यभारत की बनजारे जाति का पता हो तो उन्हें अवश्य विचारना पड़ता कि यह मालव की धुमक्कड़-जाति भी सदियों से प्रवासी ही रही है और उसके संस्कार भी जिप्सियों के व्यवहार से अधिक निकट सम्बन्ध रखते हैं। बंजारों को यूरोप में जिप्सी नाम से ही ज्ञापित किया जाता है। यूरोपीय जिप्सियों की भाषा के अधिकांश शब्द प्रायः हिन्दी हैं, और यह कहें तो अनुचित न होगा कि वे शब्द मध्यभारतीय-मालवी से ही बहुत निकट, या अधिकतर ज्यों के त्यों हैं। उनमें जो शब्द मिश्रित हुए हैं, उन पर ईरानी प्रभाव दिखाई देता है। बहुत समय पूर्व किसी रशियन राजवंशीय ने भारतीय प्रवास किया था, उसने (इन्डियन ऐंटीक्वेरी भाग १०, पृष्ठ ४०-४३) बतलाया है कि जिप्सियों की भाषा का मेल-जोल मध्यभारतीय-भाषा से होता है। परन्तु रमणभाई ने यह प्रतिपादित किया है कि, गुजराती और राजस्थानी में द्वैत स्थापित होने के पूर्व भी साम्य था। उस प्राकृत रूप में ही जिप्सी भाषा प्राप्त होती हैं। निःसंदेह स्व. रमणभाई ने अपना पक्ष प्रस्तुत करने में बड़ा श्रम किया है, सुन्दर तर्क प्रस्तुत किए हैं। उन्होंने गुजराती के प्रचलित 'शूं' शब्द को प्रधानता देकर जिप्सियों को अपना बनाने का प्रयास किया है। जिप्सियों का परदेश प्रवास यदि दसवीं शताब्दी (बहुमत से) मानली जाए तो उनका प्रवास पथ बलूचिस्तान की ओर जाने वाले बोलन घाट से, अथवा उससे उत्तर की ओर खैबर की ओर से हो तो भी जिस प्रदेश में गुजराती या राजस्थानी (प्राकृत रूप में) बोली जाती है उसी राह से भ्रमण का आरम्भ होता है, इससे बनजारों में जाटों का समावेश होना भी स्वाभाविक-सम्भव प्रतीत होता है। परन्तु ठेठ छठी शती पर्यन्त जब पंजाब के बहुत से प्रदेश तक मालवी वीरों का वर्चस्व रहता है, शकों की टोलियों को निकालने के लिए चन्द्रगुप्त-विक्रम से लेकर यशोवर्मन् (दशपुर) तक का प्रभाव इन प्रदेशों पर प्रतिष्ठित रहता है, तब यह सम्भव हो सकता है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कि मालव के धुमक्कड़ों ने इन मार्गों से परिचित होकर अपने प्रभावक्षेत्र द्वारा प्रस्थान किया हो। जहाँ तक गुजराती और राजस्थानी (द्वैत-भाव पूर्ण प्राकृत रूप) में समान रहा, वह प्राकृत-रूप तो अवन्ती-मालवी का ही है। उसका मूल स्वरूप राजशेखर (दसवीं शती) से प्रमाणित है। और उसी का सामान्य स्वरूप जिप्सी जनों की भाषा में स्पष्ट प्रकट होता है। जरा हम यहाँ उदाहरण देखें—

जिप्सी	हिन्दी	मालवी
कोन	कौन	कोन
कोनसी	कौनसी	कोनसी
साव	सर्व	साव (ग्रामीण)
छावे	लड़के	छावा(ग्रामीण)
चिरिक्ले	चिड़िया	चिरकली
मन्	मुझे	मने
तु	तू	तू
तेरो	तेरा	तेरी
पानी	पानी	पानी
वेशं	वर्ष	बरस
श्चाँद	चाँद	चाँद
दिवेस	दिवेस	दिवस
रात	रात	रात
दोगा	दीजिएगा	दोगा
देवे, देवेल, देवोल, देवला, देऊ	देवेला	देव, देवल, देऊ
याग	आग	आग
पानी, पानीयो	पानी	पानी
न्रिशित	वर्षा	बर्सात
बरोपानी	बड़ापानी	बड़ोपानी
सेरो	जलधारा	सेरो
कुनारा	किनारा	किनारो
तल्लो	तालाब	तलाब
अंगार	अंगार	अंगार
बालू	बालुका	बालू
सोनेकी	सोनेकी	सुन्नेकी
बक्रो	बक्रा	बक्रो
कान	कान	कान
नाक	नाक	नाक
मुई	मुंह	मुँ
दाँत	दाँत	दाँत

जिप्सी	हिन्दी	मालवी
सुनिओ	सुनिये	सुनो
सुंग	सूंघनी	सुंग
गोनो	बछड़ा	गोनो
दादे-दादी	दादा	दादा-दादी
राखली	रक्षिता	राखेली
छावो	बालक	छाव
छतेर	तंबू	छत
दुक	दुःख	दुख
बूको	भूख	भूक
बूडा	बूढ़ा	बूढ़ा
खीर	क्षीर	खीर
तुद्	दूध	दूद
बाल	बाल	बाल
गुरुनि	गौ	गोरनी
जुआ	जुंए	जूंआ
किर्मो	कृमि	किरमी
लोहन-लोन	नमक	लोन, लून
गिन्	गणना	गिनती
राति	रात	राति
डोरी	डोरी	डोरी
राजा	राजा	राजा
रानी	राणी	रानी
राझ	राज्य	राज
मनुष	मानव	मनुष्
कुनि	कौन	कोन, कुण
नंगो	नंगा	नंगो
बरो	बड़ा	बडो, बरो
कालो	काला	काळो
इक	एक	इक
दुज्	दो	दो
त्रिन्	तीन	तीन

गिनती का जो रूप जिप्सियों का है वह तो मालवे के अपढ़-ग्रामीणों में आज भी उसी तरह प्रचलित है--जैसे 'पांच बेर दस', (पाँच बार दस) छे बेर दस आदि—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिप्सी	हिन्दी	मालवी	जिप्सी	हिन्दी	मालवी
लैजोना	लेजाना	लैजाना	मे हूं	मैं हूँ	में हूँ
ने सुनेले	नहीं सुनता	नी सुनेरे	मे हाँ	हम हैं	म्हे हाँ
तुके	तुझको	तुखे, तुके	येक	एक	एक, येक
तुमारोही	तुम्हारा	तुमारोही	तेरो	तेरा	तेरो
तुमारो	,,	तुमारो	मते	मत	मत

ऊपर दिए हुए उदाहरणों से स्पष्ट प्रतीत होता है कि जिप्सियों की भाषा में हिन्दी की अपेक्षा मालवी-भाषा से बहुत निकट साम्य है । अधिकांश शब्द ज्यों के त्यों प्रयुक्त हुए हैं, इन शब्दों को गुजराती बनाने के लिए थोड़ा अन्तर करना पड़ेगा, और राजस्थानी के लिए भी । इनके अतिरिक्त अनेक शब्द ऐसे मिलते हैं जो मालवा के अधिकांश-ग्रामों में उसी रूप में ही प्रचलित है । इस भाषा में वे शब्द ही अधिक हैं जो ग्रामों के बनजारों में सुलभ-सहज बोले जाते हैं । इससे विदित होता है कि जिप्सी जाति सम्भव है, मालवा से निकलकर ही शायद बाहर परिभ्रमण करती इधर-उधर बस गई हो, और उनकी भाषा कथा-संस्कारों में अनेक प्रभाव और विकार होते हुए भी मूल रूप के प्रचुर मात्रा में दर्शन होते हैं । मालव के विजेता जनों के उन्नत काल में प्रवास की सुविधा भी उन्हें सरलता से उपलब्ध हो गई हो । जो भी हो इतनी बात स्पष्ट है कि मालवी भाषा शुद्ध प्राकृत की पुत्री है, उसमें तत्सम और तद्भव शब्दों का सरलता से समावेश हुआ है । प्रादेशिक प्रभाव ने उसे प्रभावित अवश्य किया है—जैसे रतलाम से ऊपर के प्रदेश में गुजराती ने, नर्मदा उपत्यका के प्रदेशों में महाराष्ट्री ने, और मन्दसौर-नीमच के भागों में राजस्थानी-मेवाड़ी तथा शाजापुर-भोपाल भेलसा की ओर बुंदेलखण्डी ने । तथापि उन प्रभाव क्षेत्रों में भी उसका मूल रूप सुरक्षित है, जो कि—काव्यमीमांसा और अपभ्रंश काव्यों में उद्धृत मालवी-उदाहरणों से स्पष्ट ही प्रमाणित है, इसी प्रकार शतियों से सुदूर-प्रवास कर लेने पर तथा विभिन्न देशों और संस्कृतियों के प्रभाव से प्रभावित हो जाने पर भी जिप्सियों की भाषा में उसका मालव-जनपदीय-रूप सुरक्षित प्राप्त होता है ।

क्या ही उत्तम हो कि मध्य-काल में हमारे देश से प्रवासी बन जाने वाले जिप्सियों के प्रति भारतीयता जागृत की जाए, और उन्हें प्रवासी स्वीकार कर उनके प्रति आत्मीयता प्रगट की जाय । आज लाखों की संख्या में जिप्सी-जन जाति विदेशों के विभिन्त भागों में बसी हुई है । उनका एक राष्ट्र, एक देश नहीं है, यद्यपि उनमें साधारण-अन्तर के साथ भाषा की एकता विद्यमान है । यदि इन लाखों लोगों में भारतीय भावना जागृत हो गई, संस्कृति निष्ठा का संचार हो गया तो हमारी शक्ति कितनी व्यापक रूप, और क्षेत्र में बढ़ सकती है । हमारे देश के लिए तो वह बहुत बल-प्रद हो जायगी । इन घुमक्कड़ों में एकता स्थापित हो, एक देशीयता का सूत्र पिरोया जावे तो निःसंदेह महत्व का कार्य हो सकता है । आज हमारी उपेक्षा, अज्ञान एवं पराधीनता के कारण जिप्सियों को हमने पहचानने में भूल की है । फलतः यह जाति अनेक देशों में अपना अस्तित्व खोती जा रही है । पश्चिम की विभिन्न घुम्मकड़ जातियों ने इनमें मिलकर इनके मौलिक रूप और भारतीयता में बाधा डालदी है । इसके सिवा कुछ राष्ट्रों ने इन्हें भटकने से रोककर स्थाई बस जाने को भी बाध्य किया है । फलतः इनकी भारतीय-भावना लुप्त होकर पश्चिमीय भावना प्रभावित करती जा रही है । हमें तो यह शंका ही है कि सदियों से भटकते रहने पर, विभिन्न देशों और संस्कृतियों के समागम में रहकर भी जो जिप्सी जाति अपनी भाषा-संस्कार के मौलिक रूप को बनाए रही, वह सहसा परकीय बन जाएगी, यह विश्वास नहीं होता, परन्तु उन्हें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आत्म रूप का भान करवा देने, और मौलिकता के प्रति सजग बना देने की आवश्यकता हमारे सांस्कृतिक-सूत्रों और विदेश विभाग के प्रयत्नों को सतर्क-सक्रिय बनाने की आवश्यकता है। प्रचार प्रयत्नों को उन तक पहुँचाने की आवश्यकता है। उनकी भाषा, संस्कृति और इतिहास का अध्ययन कर उन्हें बतलाया जाना चाहिए। रामायण, महाभारत एवं इतिहास के प्रति उनका अनुराग और आकर्षण किया जाना चाहिए। भारतीय भाषा से उनकी भाषा, व्यवहार और संस्कारों का क्या सम्बन्ध है, यह जानकर वे आत्म-स्वरूप को समझ सकेंगे, उनसे हमारा सम्बन्ध स्थापित होगा, और जहाँ भी वे बसे हों, रहते हों, घूमते हों, उनके हिताहित सुरक्षा की जुम्मेदारी हम ले लें तो अवश्य ही इन भूले हुए भारतीयों को लाखों की संख्या में सहज समाविष्ट करा व्यापक शक्ति को हम प्राप्त कर सकेंगे। वे जहाँ भी रहते हैं, उनमें उस देश-स्थान के प्रति, उन लोगों के प्रति उनका निकट सम्बन्ध तो रहता ही है, यदि वे भारतीय होने की भावना को आत्मसात करलें-जो कि थोड़े प्रयत्न मात्र से सम्भव है, तो दो विभिन्न संस्कृतियों, राष्ट्रों में सहज ही वे स्नेह, सद्भाव एवं सांस्कृतिक सम्बन्ध स्थापित करने में सफलता से सहायक हो सकते हैं। जो कार्य हमारा राजदूत मर्यादित-क्षेत्र में रहने के कारण नहीं कर सकता, वह विभिन्न देशों में बसे इन घुमक्कड़-समुदायों के सहयोग से सरलता से सु-साध्य हो सकता है। केवल उन्हें भारतीयत्व की भावना के प्रति सजग बना देना है, और आत्म-रूप का भान करा देना ही आवश्यक है।

भारती भवन,
उज्जैन

जनश्रुति में 'ऊन' [1]

जनश्रुति प्रचलित है कि 'ऊन' के आसपास के प्रदेश का राजा बल्लाल (सम्भवतः मालवेश्वर बल्लाल) एक बार बाल्यकाल में भूल से एक छोटी नागिन को निगल गया। पेट में रहते हुए, जब वह बढ़ने लगी तब राजा को अत्यन्त कष्ट हुआ। अपने कष्ट के निवारण की आशा न रहने से वह गंगा में प्राण विसर्जन करने के लिए काशी को चला। मार्ग में एक रात को रानी ने राजा के पेट के भीतर की नागिन और बाहर रहने वाले एक नाग का वार्तालाप सुना। नाग ने कहा कि यदि राजा को मालूम हो जाय कि पानी में बुझाया हुआ चूना खा लेने से तेरा अन्त हो सकता है तो तेरा जीना ही असम्भव हो जायगा। नागिन ने उत्तर दिया कि यदि राजा को तेरे बिल में गरम तेल डालने का ज्ञान हो जाय तो तू शीघ्र ही मर जायगा और जिस विशाल धनराशि की तू नित्य रक्षा करता है, वह भी उसके हाथ लग जाएगी। प्रातःकाल रानी ने यह सारा वृतान्त राजा को कह सुनाया। कुछ चूना खा लेने से उसका स्वास्थ्य ठीक हो गया। उसने उक्त सर्प के बिल का पता लगाकर उसे गरम तेल द्वारा मार डाला और विपुल धन प्राप्त कर सौ तालाबों, १०० मन्दिरों और १०० कुओं (बावड़ियों आदि) को बनवाने का संकल्प किया किन्तु दुर्भाग्यवश उनमें से केवल ९९-९९ ही बन सके और प्रत्येक में एक की कमी रह जाने से इसका न्यून 'ऊन' (अर्थात् कम या कमी वाला) नाम पड़ा। (मालवेश्वर बल्लाल : रा० गौ० ओझा)

१ वर्तमान में खरगोन के समीपस्थ ग्राम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मध्य भारत की बोलियां और मालवा

• डॉ. श्याम परमार

लगभग ४६, ७८५ वर्गमील में ७, ९५४, १५४ जनसंख्या वाला मध्य-भारत प्रान्त अनेक बोलियों में विभक्त है। एक ओर उत्तरी क्षेत्र में ब्रज और बुन्देली का प्रभाव है तो दक्षिण क्षेत्र में मालवी, निमाड़ी और आदिवासी बोलियों का प्रचार है। कहना न होगा कि समस्त मध्य भारत के सोलह जिलों में से देवास, धार, इन्दौर, मन्दसौर, राजगढ़, रतलाम, शाजापुर और उज्जैन जिलों में मालवी का प्रभुत्व है जो २८, ७१८ वर्गमील के अन्तर्गत है, निमाड़ी तो निमाड़ और नर्मदा उपत्यका की बोली है। उत्तरी मध्य भारत के भिंड, मुरैना और ग्वालियर जिलों में ब्रज तथा शिवपुरी, गुना और भेलसा में बुन्देली का प्रसार है। झाबुआ और रतलाम के अधिक हिस्सों में तथा सेंधवा की ओर जहाँ आदिवासी बसे हैं, आदिवासी बोलियां प्रचलित हैं। मध्य भारत का कुछ भाग राजस्थानी से भी प्रभावित है जिसमें रामपुरा का चम्बल बीहड़ वाला खण्ड और शिवपुरी का बांया भाग आता है। ब्रज का क्षेत्र ११, ६८१ वर्ग मील, भीली तथा अन्य आदिवासी बोलियों का ४, १४५ वर्गमील तथा निमाड़ी का ५,२०८ वर्गमील अनुमानित किया जा सकता हैं। इन बोलियों के भी उपभेद हैं। मालवी और उसके भेदों के सम्बन्ध में आगे विवेचन किया जा रहा है। शेष बोलियां अनुशीलन के क्षेत्र के बाहर है, अतः उनका विवेचन अप्रासंगिक होगा।

भाषा विज्ञान के अनुसार मध्य भारत की बोलियां आर्य शाखा के अन्तरंग वर्ग से सम्बन्धित हैं। ब्रज और बुन्देली पछाही हिन्दी के अन्तर्गत आती हैं। आदिवासी बोलियां आर्येतर शाखा में मानी जाती हैं। मालवी और निमाड़ी अपना सीधा सम्बन्ध अवन्ती अपभ्रंश से स्थापित करती हैं।

मालवी का क्षेत्र

मध्यवर्ती भारत, भाषा की दृष्टि से एक स्वतन्त्र इकाई नहीं है। फिर भी चूंकि मालवा सांस्कृतिक दृष्टि से मध्यवर्ती भारत का स्वतन्त्र क्षेत्र है, और जैसाकि सदैव से ही स्वीकृत है [1] मालवी उसकी प्रधान भाषा मानी जाती है। राजनीतिक ऊहापोह के बने रहते हुए भी लोग मालवी का माध्यम अपनाए रहे।

मालवी, दक्षिण में नर्मदा नदी के और मध्य में निमाड़, भोपाल, नरसिंहगढ़, राजगढ़, दक्षिण झालावाड़, मन्दसौर, दशपुर, नीमच, रतलाम, पूर्व झाबुआ आदि क्षेत्रों को अपने अन्तर्गत लेती हुई उज्जयिनी, देवास और इन्दौर जिलों में बोली जाती है, जिसका उल्लेख आगामी सारिणी में किया गया है। विशेष रूप से कोटा के डांग प्रदेश में मालवी बोलने वालों की बस्ती है, जिनकी बोली को डंगेसरी कहते हैं [2]। रतलाम मध्य भारत के निकट 'डूंगरी' बोली का स्वरूप इस डंगेसरी के अनुरूप है।

मालवी बोलने वालों की संख्या लाखों में है। यद्यपि शासकीय व्यवहार की भाषा हिन्दी है, पर सामान्यतः ग्रामों में, व्यापार-उद्योगों में तथा नगरों के घरों में मालवी का ही व्यवहार होता है। प्रकृति और स्वभाव के नाते मालवी सरल, धर्मभीरु, सौंदर्यप्रिय, स्वस्थ और भोले लोगों की बोली है। व्हेनसांग ने ७ वीं शताब्दी के अपने भ्रमण वृतान्त में यही बात दूसरे शब्दों में कही है। उसने मालव की उपजाऊ मिट्टी, फसल और लोगों के स्वभाव का उल्लेख करते हुए लिखा है 'इनकी भाषा मनोहर और सुस्पष्ट है।'[3]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मालवी-मानचित्र एवं प्रचलित उपभाषाएं

मध्यभारत की बोलियाँ *

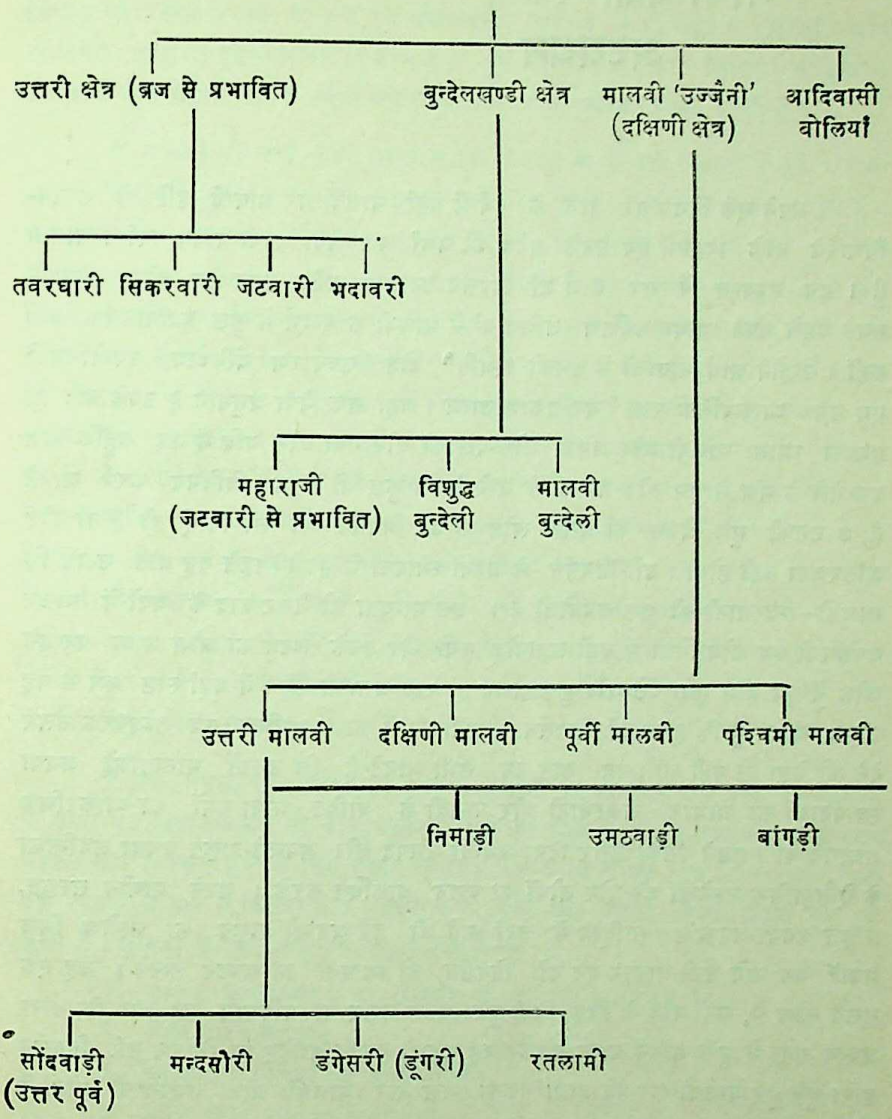

(मालवी भाषा क्षेत्र 'मानचित्र' पृ० ३२ पर)

१. सेन्सस आफ इण्डिया, १९३१, पृष्ठ ४

२. देखिये, रामक्षा द्विवेदी 'समीर' का लेख, 'हिन्दुस्तानी', जनवरी १९३३

३. देखिये, व्हेनसांग का भारत भ्रमण अनु. ठाकुरप्रसाद शर्मा 'सुरेश'

* मालवी लोक साहित्य—डॉ. श्याम परमार, पृ. ७१ से ७४

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मालवी का भाषा वैज्ञानिक अध्ययन

डॉ० बन्शीधर

अपने मूल विषय पर आने के पूर्व मैं यहाँ मालवी पर भाषाई दृष्टि से सोचने-विचारने वाले विद्वानों एवं उनके प्रदेय की चर्चा कर लेना अपना पावन कर्त्तव्य मानता हूँ। इस सम्बन्ध में सर जार्ज डॉ. ग्रियर्सन का नाम सदैव स्मरणीय रहेगा जिन्होंने सबसे पहले अपने 'भाषा सर्वेक्षण अभियान' में मालवी के सन्दर्भ में कुछ ध्यानाकर्षक बातें कहीं। उन्होंने आर्य भाषाओं में उसकी स्थिति[1], क्षेत्र, उच्चारण वैशिष्ट्य, उपबोलियों[2] एवं उसके व्याकरणिक रूपों[3] पर प्रकाश डाला। जहाँ तक मेरा अनुमान है उसके बाद ही हमारा ध्यान मालवी और उसके लोक-पक्ष की ओर गया और यदि मैं यह कहूँकि आज इस मेले के मंच से हम लोग मालवी के बारे में जो कुछ भी विचार विनिमय करने जारहे हैं, * उसकी मूल प्रेरणा का आदि स्रोत भी डॉ. गियर्सन की स्थापनाएँ ही हैं तो कोई अतिरंजना नहीं होगी। डॉ. ग्रियर्सन ने अपनी स्थापना में सबसे पहले यह बात उठाई कि मालवी–राजस्थानी की एक उपबोली है। इस मान्यता को लेकर बाद के वर्षों में मालव मनीषियों एवं शोधार्थियों में बड़ी ऊहापोह मची और इसके खण्डन का जोश जागा पर इस जोश में हम होश गुमा बैठे और कुछ अलग ही राग अलापते रहे। मैं यहाँ स्पष्ट रूप से यह कहना चाहता हूँ कि हमने डॉ. ग्रियर्सन की स्थापनाओं का प्रामाणिक एवं तथ्यपरक उत्तर देने की चेष्टा ही नहीं की। यह बात हम सभी जानते हैं कि उनकी मान्यताओं अथवा स्थापनाओं का आधार राजस्थानी और मालवी के जीवित भाषा रूपों का व्याकरणिक अध्ययन था। हमने इसका उत्तर दिया अवन्ती जनपद और अवन्ती-प्राकृत अथवा अवन्तिजा के ऐतिहासिक उल्लेखों की ओर लोगों का ध्यान आकर्षित करके। अपने प्राचीन संस्कृत, प्राकृत अथवा अपभ्रंश साहित्य में, जहाँ कहीं भी हमें अवन्ती प्राकृत का उल्लेख मिल गया[4] बस लगे उसी आधार पर डॉ. ग्रियर्सन की स्थापना का खण्डन करने। यह एक ग़लत कोंण से, सही बात के लिए, दिया हुआ गलत उत्तर था, परिणाम यह हुआ कि सारा प्रयत्न हवा में घूंसे मारने वाला बनकर रह गया। हमको चाहिए था कि हम डॉ. ग्रियर्सन द्वारा चुने हुए मालवी रूप की प्रामाणिकता परखें और मालवी और राजस्थानी दोनों के प्रतिमित रूपों में व्याकरणिक आधारों पर भिन्नता स्थापित करके मालवी के स्वतंत्र अस्तित्व की बात करते, पर इस प्रकार का एक भी कोई ठोस और प्रामाणिक प्रयत्न सामने नहीं आया। केवल होहल्ला होता रहा और उसमें डॉ. ग्रियर्सन द्वारा स्थापित मान्यताजन्य प्रश्न अनुत्तरित रह गये। दो भिन्न भाषाओं की भेदक रेखा का आधार सदैव उनका भिन्न व्याकरणिक गठन हुआ करता है और इस गठन के अन्तर्गत हमें उनके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विभक्ति प्रत्ययों, परसर्गों, सर्वनामों और क्रियापदों का अध्ययन करना पड़ता है। केवल प्राचीन ग्रंथों में आया हुआ उल्लेख इसके लिए पर्याप्त नहीं होता है।

● हमने बड़ा प्रयत्न किया अवन्ती प्राकृत और मालवी के सम्बन्ध सूत्रों को जोड़ने का। और जब हर प्रकार की कोशिशों के उपरान्त असफल हो गये तो हमारा यह मोह भंग होना भी सहज ही था कि मालवी की पूर्वजा अवन्तिजा है। डॉ. चिन्तामणि उपाध्याय[५] ने सबसे पहले इस मोह जाल को विदीर्ण कर यह तथ्य हमारे सामने रखा कि आचार्य हेमचन्द्र और उनके परवर्ती काल में रचे गये अपभ्रंश साहित्य में ही जहां से गुजराती और राजस्थानी अंकुरित हुई–मालवी के बीज हैं। पूर्ववर्ती उल्लेखों का लिखित साहित्य के अभाव में कोई महत्व नहीं है उनकी यह स्थापना आज भी बराबर स्टेण्ड करती हैं।

● मालवी की चर्चा करने वालों में डॉ. ग्रियर्सन के परवर्ती विद्वानों में श्री रामाज्ञा द्विवेदी 'समीर'[६], डॉ. चिन्तामणि उपाध्याय और डॉ. श्याम परमार के नाम अग्रणी हैं। श्री समीरजी ने मालवी के सीमा-क्षेत्र के साथ उसकी उपबोलियों पर भी बड़े विस्तार से विचार किया है। वे उपबोलियों के सख्या निर्देश में डॉ. ग्रियर्सन से बहुत आगे बढ़ गये हैं। उन्होंने कुल मिलाकर दस भेद किये हैं। आगे चल कर इसी आधार भूमि पर डॉ. परमार ने कई जातीय और स्थानीय भेद-प्रभेद गिना डाले हैं। उन्होंने सर्व प्रथम डॉ. ग्रियर्सन के भाषाई वर्गीकरण को भ्रमात्मक कहकर मालवी को राजस्थानी की अधीनता से मुक्त होने की बात भी हमारे समक्ष रखी।[७] डॉ. परमार की परवर्ती मान्यता को तो आगे आने वाली पीढ़ी ने एक स्वर से स्वीकार कर लिया पर उनके एवं समीरजी द्वारा निर्धारित मालवी के उपभेदों से डॉ. उपाध्याय ने असहमति व्यक्त की है। उनका कथन है–"स्थान और एक ही स्थान पर बसने वाली जातियों के आधार पर भाषा के अनेक उपभेदों की कल्पना कर लेने में न तो कोई तथ्य है और न भाषा-विज्ञान की दृष्टि से उसका सबल आधार ही।"[८] डॉ. उपाध्याय ने जिन चार उपभेदों का उल्लेख अपनी पुस्तक में किया है उनमें से तीन तो समीरजी पहले ही सूचित कर चुके थे। उनके द्वारा संकेतित चतुर्थ भेद 'उमठवाड़ी' का है।

● इन समस्त शोध कार्यों एवं व्यापक चर्चाओं का परिणाम यह हुआ कि मालवी के भाषा वैज्ञानिक अध्ययन की ओर अनुसन्धाताओं का सहज ही ध्यान गया और उन्हें आगे बढ़कर कार्य में प्रवृत्त होने के लिए आहूत किया। जिस समय मैं इस काम में लगा उन दिनों तक मालवी के बारे में जितनी बातें प्रकाश में आ चुकी थीं, उनकी चर्चा ऊपर की जा चुकी है। सुविधा के लिए उन्हें पुनः दुहरा रहा हूँ—

१. मालवी के सम्बन्ध में डॉ. ग्रियर्सन की मान्यता भ्रमात्मक है।
२. उसका क्षेत्र विस्तार।
३. उसकी उपबोलियाँ एवं उनका क्षेत्र।
४. और उसकी कतिपय विशेषताएँ।

● इस चर्चा के बाद मैं अपने मूल विषय 'मालवी का भाषा वैज्ञानिक' अध्ययन की ओर उन्मुख होता हूँ। भाषा शास्त्रियों ने किसी भी भाषा अथवा बोली के वैज्ञानिक अध्ययन के लिए प्रमुख रूप से तीन पद्धतियाँ दर्शायी हैं। ये इस प्रकार हैं—विवरणात्मक पद्धति (Descriptive Method), ऐतिहासिक पद्धति (Historical Method) तुलनात्मक पद्धति (Comparative Method)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

• प्रथम पद्धति (Descriptive Method) में किसी एक भाषा की एक काल विशेष की स्थिति पर विचार किया जाता है। इसमें प्रायः जीवित भाषा अथवा भाषाओं का ही अध्ययन होता है। यह पद्धति पुराने ढंग के व्याकरण से बहुत मिलती जुलती है। जिसमें ध्वनि, रूप, वाक्य आदि का वर्णन या विवरण मात्र रहता है।

द्वितीय पद्धति (Historical Method) में किसी भाषा की उत्पत्ति और विकास की सभी स्थितियों का क्रमबद्ध अध्ययन किया जाता है। इसे (Diachromic Method) भी कहते हैं। मेरियो ए. पेह और फ्रांक गेनँर ने 'डिक्शनरी ऑफ लिग्विस्टिकस[९]' में इस पद्धति के बारे में लिखा है—The study of words, speech, Languages and Linguistic changes from the point of view of evolution in the course of time. तृतीय पद्धति (Comparative Method) में दो या उससे अधिक भाषाओं की ध्वनियों तथा उनकी समानताओं एवं असमानताओं का अध्ययन किया जाता है और उसके आधार पर किसी निष्कर्ष पर पहुचा जाता है।

• मैंने अपने अनुसंधान कार्य में इन तीनों पद्धतियों में से 'ऐतिहासिक' अथवा डायक्रॉमिक पद्धति का ही विशेष अवलंब लिया है। वर्णनात्मक और तुलनात्मक प्रणालिया का उपयोग अवश्य किया है पर यांत्रिक उपकरणों के अभाव में कार्य उतनी सफलता के साथ सम्पादित नहीं हो पाया जितना कि होना चाहिए। मैंने अपने इस अनुसंधान कार्य में उन सभी बातों को समेटने का यथासंभव प्रयत्न किया है जो किसी भाषा के वैज्ञानिक अध्ययन के सम चर्चित होनी चाहिए। डॉ. ग्रियर्सन ने अपनी स्थापनाओं द्वारा हमारे सामने जो प्रश्न चिह्न खड़े किये थे, किसी सीमा तक मैंने उनके उत्तर देने का प्रयत्न किया है और मालवी तथा राजस्थानी के तुलनात्मक व्याकरणिक अध्ययन के प्रकाश में यह स्थापित करने का प्रयत्न किया है कि मालवी एक स्वतंत्र अस्तित्व सम्पन्न बोली है जो राजस्थानी की अपेक्षा पश्चिमी हिन्दी की बोलियों (विशेषकर ब्रज, बुन्देली) के अधिक निकट बैठती है।[१०] डॉ. सुनीतिकुमार चाटुर्ज्या ने भी इस ओर हमारा ध्यान आकर्षित किया है। उन्होंने भीली और मालवी पर अपना मत व्यक्त करने हुए एक जगह लिखा है–ये (भीली और मालवी) डिंगल से अलग, केवल बोलचाल की भाषा के रूप में ही प्रचलित थीं और हैं। इनकी साहित्यिक प्रतिष्ठा नहीं हुई; इनका हमेंशा से हिन्दी (ब्रजभाषा, बुन्देली तथा खड़ी बोली) की ओर ही झुकाव रहा है।[११] मैंने अपने प्रबंध में मालवी और इन भाषा रूपों के सम्बन्धों पर प्रकाश डाला है और तुलनात्मक पद्धति से उक्त कथन को प्रतिपादित करने का यत्किञ्चित प्रयत्न किया है।

• हमें मालवी को उसके वास्तविक स्वरूप में प्रतिष्ठित करने के लिए अभी अधिकाधिक परिश्रम करने की आवश्यकता है। और उसके कई पक्षों पर गहरी अनुसंधानात्मक दृष्टि से विचार करना है। उसके उत्स के सम्बन्ध में डॉ. उपाध्याय से सहमत होते हुए भी मैं इस धारणा का हूं कि इस संदर्भ में हमें प्राकृत एवं अपभ्रंश साहित्य का बहुत व्यापक स्तर पर उसकी सम्पूर्ण सूक्ष्मता के साथ धैर्यपूर्वक अध्ययन मनन करना चाहिए। मालवी के पुरातन रूप के लिए हमारे पास अभी अपभ्रंश ग्रन्थों में प्राप्त कुछ समान शब्द रूप ही है। भाषा-विज्ञान की दृष्टि से यह कोई वजनदार प्रमाण नहीं है। अतः हमें ११ वीं शती से १४ वीं शती के मध्य रचे गये अपभ्रंश साहित्य का (जहाँ हम मालवी के बीज

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खोज रहे हैं) और आधुनिक मालवी के तुलनात्मक व्याकरण के अध्ययन का अभियान आरम्भ कर किसी निष्कर्ष पर पहुंचना चाहिए । यदि इस प्रयत्न में हम सफल रहे तो निश्चय ही मालवी के आदिकाल को नयी भूमि पर प्रतिष्ठित कर सकेंगे और हमारे पैरों में भी ताकत आयेगी । इससे हटकर इधर-उधर हाथ पैर मारते हुए छिट-पुट प्रयत्न उपयोगिता की दृष्टि से विशेष कारगर सिद्ध नहीं होते हैं और धकाने वाले ज्यादा होते हैं । मैं यह नहीं कहता कि किनारे का तैरना, कोई तैरना नहीं पर मझधार को चीर-कर आगे बढ़ने का मूल्य कुछ और ही होता है । मालवी के लिए यही महत्वपूर्ण भी है । इस सम्बन्ध में मैं एक बात और यहां कह देना चाहता हूं कि मालवी के पुरातन रूप के लिए अभी हमारा ध्यान अपभ्रंश के काव्य ग्रन्थों की ओर ही गया हैं, पर अब मैं प्राचीन गुजराती साहित्य के अध्ययन के आधार पर इस निष्कर्ष पर पहुंचा हूं कि हमें अपभ्रंश के उन गद्य ग्रन्थों में भी गहरे पैठना चाहिए जिन्हें गुजराती साहित्य के आदिकाल अथवा हेम युग में रखा गया हैं । मेरा ऐसा विश्वास हैं कि हमें इन ग्रंथों से मालवी के पुरातन गद्य रूप को निर्धारित करने में पर्याप्त सहायता मिलेगी । गुजराती साहित्य का आदिकाल १२ वीं शती तक माना गया है और पूरे युग को 'हेमयुग तथा रासयुग' नाम से दो भागों में विभक्त किया गया है । [12] यह साहित्य हम से पूरे नैष्ठिक अध्ययन की अपेक्षा रखता है । मैं इसके अध्ययन का आग्रह इसलिए भी कर रहा हूँ कि जब हमें विदित है कि ६ ठीं शताब्दी से १३ वीं शताब्दी तक मालवा गुजरात और राजस्थान के लोग एक ही भाषा और संस्कृति में पलते रहे हैं [13] तो फिर इस कालखण्ड में स्थानीय भूमि पर रचे गये अपभ्रंश साहित्य पर भी तीनों ही प्रदेशों का समान अधिकार है । यह तीनों ही प्रदेशों के मध्य एक ऐसा मूलधन है जिसका लाभ तीनों प्रदेशों को लेने का हक्क है । यह एक अलग बात है कि आज यह सारा साहित्य 'पुरानी गुजराती' (जूनी गुजराती) में अन्तर्भूत कर लिया गया है पर हमारा स्वत्वाधिकार इस पर से नहीं हटा है । यदि हम इस सन्दर्भ में राजनीतिक और सांस्कृतिक पृष्ठभूमि के परिप्रेक्ष में विचार करके देखें तो यह स्वत्व और भी कई गुना बढ़ जाता हैं ।

• मैंने यद्यपि मालवी की उत्पत्ति और विकास पर कार्य किया हैं, पर अभी इस क्षेत्र में कार्य करने की बहुत सी संभावनाएं विद्यमान है । मालवी की ध्वनियों पर नये सिरे से कार्य किया जाना चाहिए और इस कार्य में यांत्रिक उपकरणों का पूरा-पूरा उपयोग करना चाहिए ।

• इसी प्रकार मालवी की उप बोलियों पर भी हमें स्वतंत्र रूप से कार्य करने कराने चाहिए । रजवाड़ी, सौंधवाड़ी और उमठवाड़ी इस दृष्टि से अभी तक उपेक्षित बनी हुई हैं । इन बोलियों की ध्वनियों एवं रूप गठन पर पृथक-पृथक किये हुए कार्य अपने आप में काफी महत्वपूर्ण सिद्ध होंगे और मालवी एवं इनकी सम्बन्ध शृखला में एक मजबूत कड़ी का काम करेंगे । इसकी चतुर्थ उपबोली निमाड़ी पर शोधकार्य अवश्य हुआ है पर उसकी भी सीमाएं हैं । मेरा विचार है कि उसके कुछ पक्षों पर अधिक प्रमाणिक कार्य प्रकाश में लाने के लिए बीड़ा उठाया जाना चाहिए ।

• मालवी के अर्थ विज्ञान की ओर अभी हमारा ध्यान बिलकुल नहीं गया है । इस अचीह्ने और अछूते क्षेत्र को भी हमें उरेहना चाहिए और लोगों का ध्यान लोकभाषाओं के इस पक्ष की ओर खींचना चाहिए ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

• उपबोलियों की भाँति हमें मालवी की सीमावर्ती भाषाओं की स्थिति का भी उसके सन्दर्भ में विचार करना चाहिए ! राजस्थानी, गुजराती, हाड़ौती, भीली और बुन्देली से मालवी के सम्बन्ध गहराते लगते हैं । इन भाषाओं एवं बोलियों से मालवी में शब्द सम्पदा का आग्रहण उतना महत्व का नहीं जितना उनके रूप तत्व से प्रभावित होना है । मालवी के सार्वनामिक रूपों, कारक चिन्हों, एवं कहीं-कहीं क्रियापदों तक इन प्रभावों का संक्रमण होता देखा गया है । इस प्रकार के तुलनात्मक अध्ययन से हम मालवी के वास्तविक स्वरूप की रक्षा कर सकेंगे और उसकी स्थिति को अधिक स्पष्ट रूप में दूसरों के समक्ष रख सकेंगे ।

• मैं अन्त में मालवी के एक वैज्ञानिक व्याकरण की आवश्यकता पर भी बल देना चाहता हूँ । व्याकरण किसी भी भाषा के अस्तित्व का वास्तविक परिचायक होता है । मालवी के पास इसका नितांत अभाव है ।

• ये सारे विचारणीय तथ्य मालवी के ऐसे पक्ष हैं जो उसे 'बोली' से उठाकर भाषा के पद पर प्रतिष्ठित करेंगे । यदि हम प्रस्तावित शोध प्रतिष्ठान [१४] के अन्तर्गत उपरिलिखित दिशाओं में कार्य करने के लिए एक जुट होकर आगे बढ़ते हैं और उसका प्रामाणिक वैज्ञानिक अध्ययन प्रस्तुत करते हैं, तो निश्चय ही वह दिन मालव और मालवी दोनों के लिए गर्व करने योग्य होगा ।

• •

---

१. राजस्थानी की उपबोलियों की चर्चान्तर्गत डॉ. ग्रियर्सन ने लिखा है–The Principal South-Eastern dailect is the Malvi, spoken in Malwa & adjoining country.

Linguistic Survey of India IX (II) Intorduction.

इसी ग्रंथ में वे एक दूसरे स्थान पर लिखते हैं–Malvi is distinctly a Rajasthani dailect, having relations with both Marwari and Jaipuri. page-52

2. A recognised sub-dilect, however, is Sondhwari, spoken by the Sondhia's....The form of Malvi spoken by Rajputs of Malwa Proper is called Rangri. वही पृष्ठ-५२

३. वही, पृष्ठ ५४ से ५९ तक ।

* ८,९ जून ७१, रतलाम में आयोजित 'मालवी-मेला'

४. (अ) भरत मुनि–नाट्य शास्त्र, १७।४८ ।

(ब) रामशर्मा तर्क वागीश–पाकृत कल्पतरो, द्वितीय स्तबक ।

(स) मार्कण्डेय–प्राकृत सर्वस्व, पाद-११ ।

(द) पुरुषोत्तम प्राकृतानुशासन–एकादशोऽध्याय ।

(य) राजशेखर–काव्य मीमाँसा ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

५. मालवी-एक भाषा शास्त्रीय अध्ययन, पृष्ठ १४-१५।

६–मालवी एक भाषा शास्त्रीय अध्ययन पृ. २८ से उद्धृत।

७–मालवी और उसकासाहित्य–पृ. ११।

८–मालवी-एक भाषा शास्त्रीय अध्ययन, पृष्ठ २९।

९–भीली का भाषा वैज्ञानिक (डॉ. नेमीचन्द जैन) पृष्ठ १६ से उद्धृत।

१०–यहाँ डॉ. ग्रियर्सन का मत भी दृष्टव्य है—

११–भारत की भाषाएँ और भाषा सम्बन्धी समस्याएँ पृष्ठ ६७-६८।

It (Malvi) has Bundeli (a western Hindi dailect) to its east and Gujarati to its west and really an intermediate form of speech between the two. It is hence less dicisively marked by typical peculiarities of Rajasthani then jaipuri, possessing some forms which are evidently connected with those of western Hindi.

Linguistic Survey of India IX (II) Introduction P. 3.

१२. गुजराती साहित्यनु रेखादर्शन-उपोद्घात् पृष्ठ १०
(खण्ड पेलो)
(ले. के. का. शास्त्री)

१३. 'आ तवारीखो ऊपर भी आपणे एम पण जोईअे छीअे के ग्या सर्वप्रदेशों अर्थात गुजरात काठियावाड़, राजपूताना अने मालवा समान संस्कारों वाला, अेकज लिपि ने भाषा वाला, एक सरखा कायदा ने रीतिरिवाज वाला अने धन्य धान्य थी भरपूर हता।'

चक्रवर्त्ती गूर्जरो–(क. म. मुंशी) पृ. ५१.

१४ प्रो० पी. डी. शर्मा द्वारा मालवी मेले में इन्दौर विश्वविद्यालय में मालवी-शोध प्रतिष्ठान की चर्चा।

हिन्दी-विभाग
म. स. विश्वविद्यालय,
बड़ौदा

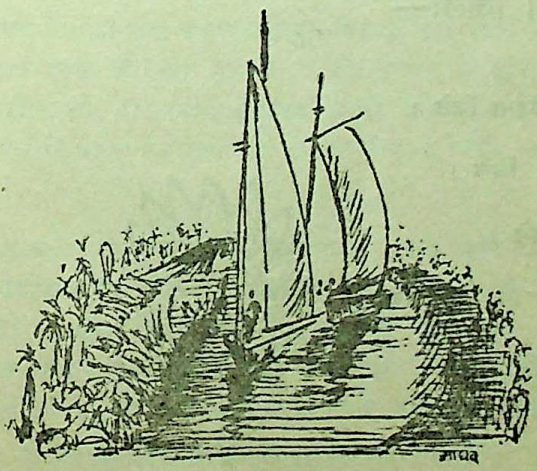

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मालवी-भाषा क्षेत्र : मानचित्र

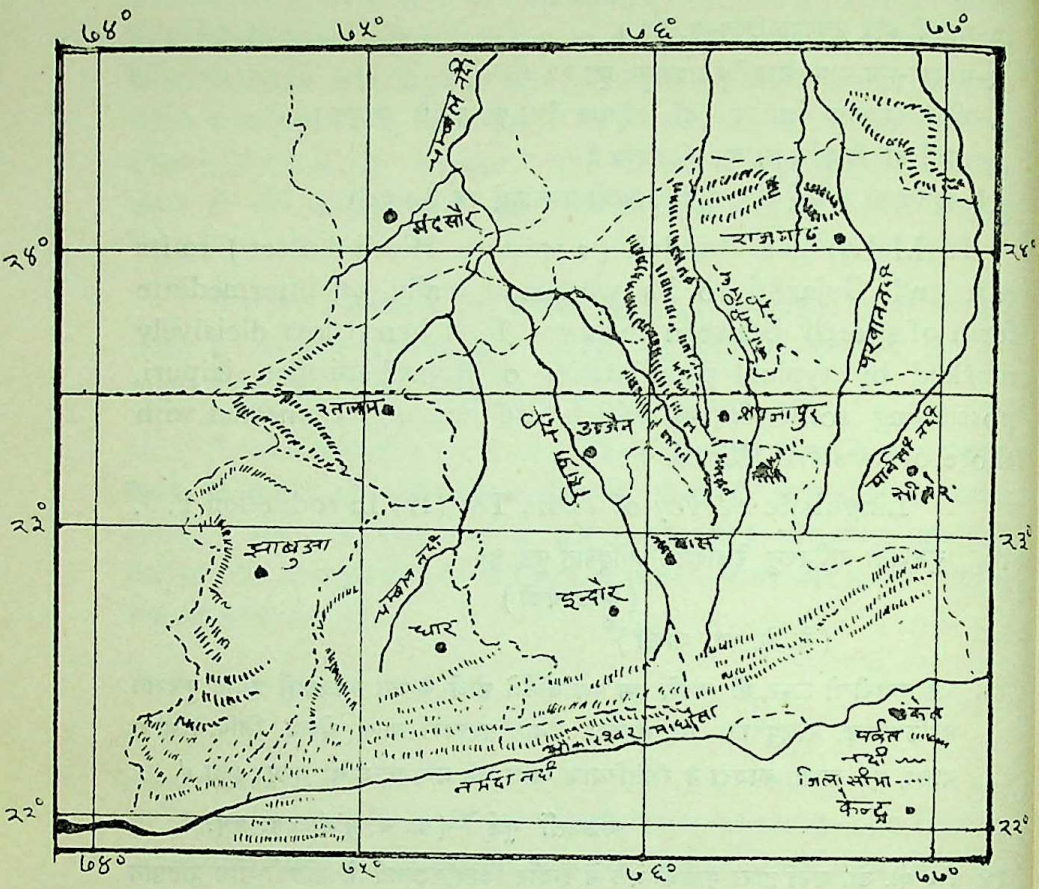

स्केल : $\frac{६}{१०}$ इंच = २१$\frac{१}{२}$ मिल ३५·५ कि. मी.

मालवी भाषा भाषी जिले:—

(१) इन्दौर, उज्जैन, देवास जिले ।

(२) रतलाम, मन्दसौर जिले ।

(३) धार, झाबुआ जिले ।

(४) शाजापुर, राजगढ़ एवं सीहोर जिले ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मालवी-गद्य : कुछ रूप

मालवी गद्य के इन रूपों में जहाँ पं० बालकृष्ण भट्ट और प्रतापनारायण मिश्र की निबन्ध शैली का सा चमत्कार है वहीं विषय प्रतिपादन एवं विचाराभिव्यक्ति की अद्भुत शक्ति दिखाई देती है, जो मालवी-गद्य की अपनी विशेषता है। —सम्पादक

धक्का को चमत्कार !

धक्का को नाम नी सुन्यो होय ने धक्को नी खायो होय एसो एक बी आदमी म्हारे तो आज तक नी मिल्यो। धक्को लगीने पड़ने वाला छोरा से लईने धक्को खइने मरने वाला डोकरा तक का लोग म्हारी तरे तमने भी देख्याज् होयगा। ने म्हारे भलेंईसे मत को, पन अपना मन में विचार करोगा तो तम बी योज कोगा के भले, धक्को तो हमने बी खायो हे, फिर वो सुख को होय नी तो दुख को ! आशा को होय नी तो निराशा को ! केने को मतलब योज् के मोत की तरे धक्को बी आदमी की जिन्दगी की एक जरूरी बात भगवान ने पेदा करी रखी हे। फरक इत्तोज् हे के मोत आवे तो उन आदमी के लई जाय ने धक्को आवे, लगे ने चल्यो जाय् ने आदमी सियानो हुई ने बची जाय। हाँ, तम मानोनी तो मत मानो, पन आदमी धक्को खइनेज् सुधरे। धक्का का इनाज् रूप खे कोइ-कोइ ठोकर भी के हे। नाम भलेइ अलग होय, काम दोइ को एकज् हे। ने इकासेज् धक्का को महा-तम सबसे जादा हे। ठोकर बैरों की जात, उकी कोण पर्वा करे। उके खइने लोग पचइ जाय ने डकार तक नी ले। पन धक्का को एसो नी हे। शनीदेव की तरे यो जिके लगे उके उठने नी दे। भाषा-भाषा को मजो देखो। अँगरेजी में इना देवता के 'शाक' (Shock) केवे। यो शब्द हम रोज वापराँ, शाक-भाजी का रूप में। पन अंगरेज यो 'शॉक' खाय तो मरीज् जाय। * इत्तो झेरीलो लगे उनखे। धक्को खइने लोग सुधरे भी ने मरे भी। दिखने में सीदो-सादो पण गुण-दुरगुण कित्ता हे इना धक्का में। मगनभइ सट्टो हारी गया तो उना धक्का में गेल्या हुइ गया। गोपाल दादा को मोटो नानो मेट्रिक फेल हुइ गयो तो धक्को खाइने मरी गयो। सूरजबइ अपणा डोकरा धणी के देखी ने नदी में डूबी मरी। ऐसो गेरो धक्को उके लग्यो। जरा सो जीव हे धक्को, पण हे के नी पक्को करामाती पीर ?

ने हमारा घनपत दादा तो याँ तक केता था के अपनो जीवन बी एक धक्कोज हे। तम हँसोगा। पण बात भोत गेरी हे। पेलाँ हमारी बी समज में नी अइथी; ने हम बी तमारी तरेज् जोर से हँस्या था। पन फिर एक दिन घनपतदादा फुफाजी का याँ से भाँग छानी ने घरे आया ने हमने उनखे इको अर्थ पूछो ! जवाब इत्तो सीदो ने सच्चो थो के सुनी ने हम दंग रई गया। घनपतदादा बोल्या के जनम होने का पेलां भगवान उना आदमी के सरग से जोर को धक्को दे ने उका मइनों बाद धरती पर उको जनम होय।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

म्हारे नी मालूम पर व कैता था के या बात अपनी जूनी पोथी-पुरान में आज बी लिखी हुई हे। को, केसी री ! खायो नी तमने बी धक्को ? हाँ गुरु, योज् तो मजो हे इना धक्का में !

घनपतदादा का जमाना से ज् हूँ इनी बात पर विचार करी रियो हूँ । अब जईने म्हारे थोड़ी भोत बात जँची हे। नोकरी का वास्ते अरजी लइने अँइ-वँई धक्का खाता हुआ छोरा होन के देखो, नी तो बसन्ती, चमेली, गीता, कमला का प्रेम में पड़ी ने धक्का खाता हुआ प्रेम-वीर नानाहोन के देखो । बात माननीज पड़ेगी के धक्का में बड़ी ताकत है। भूकम्प ने बिजली का धक्का की बात छोड़बी दो तोबी इना छोटा-छोटा धक्का में बी कोई कम ताकत नी हे । धक्को लग्यो के देखते-देखते आदमी कईं को कईं हुई जाय। म्हारोज् देखोनी आप। डोकराबा म्हारा पर बड़ी आस लगइने बेठा था । पन बचपन में ज् एसो धक्को खायो के हे भगवान ! वो एकज् धक्को एसो लग्यो के जनम भर याद रेगा। उका बाद छोटा-मोटा कई धक्का खाया, यूं को नी के सारी जिन्दगी धक्का खाने में गई, पर सबसूँ गेरी चोट लगी उना पेला धक्कासेज् ! उनी बखत म्हारी छोटी उमर थी। घर में बेन को ब्याव थो। माकणा की तरे घर में बराती भर्या था । घड़ाका से ब्याव हुई रियो थो। लाड़ा-लाड़ी चँवरी में बेठा था, ने बराती मोतीचूर को कलेवो करने में लग्या था। हमारा पड़ोसी की छोरी गोमती म्हारीज् उमर की थी । उने म्हारे कियो के अपन बी ब्याव-ब्याव खेलां। उको घर खालीज् थो। उकी मां ने दासाब हमारे यां ब्याव में लग्या था। गोमती की बात मानी ने हूँ उका घरे गयो। गोमती ने उकी बई को घाघरो लुगड़ो पेर्यो ने, मने उका दासाब को साफो अँगरखो चड़ायो । अग्नी का फेरा फिरने के गोमती ने चूलो बाल्यो। ने उका लुगड़ा से म्हारो दुपट्टो बांधी ने हम चूला का आसपास फेरा फिरने लग्या। अब यादनी पन म्हारा दुपट्टा को, के उका लुगड़ा को पल्लो चूला की आँच खे जइ लग्यो, ने देखतेज् देखते आग भड़की उठी। हूं घबरायो। गोमती रोने लगी। हूँ उके तोकी ने गंगाल में डुबाने चल्यो । तो म्हारा कपड़ा बी बली उठ्या । दोड़ने में ध्यान नी रियो ने परंडी पर को बड़ो मटको नीचे अई पड़्यो। मने गोमती खे उनाज पानी में न्हाखी दी, ने हूँ बी गदेड़ा की तरे उना कीचड़ में लोटने लग्यो । अईं लाय डांडा तक जइ पोंची। बड़ी देर बाद म्हारा ध्यान में बात आई के हमने मांय से साँकल लगइ रखी हे। हूं उठी ने सांकल खोलने गयो। गोमती भी डरी ने म्हारा पीछे अई । साँकल खोली ने हम बाहर आया तो या भीड़। सब चिल्लइरिया था। उनका चिल्लाने को कारन उनी बखत हमारी समज में नी आयो । हम गोमती का दासाब के जइ चोंट्या ने उनखे सच्ची बात कइदी। आज की तरे उनी बखत हमखे गप्पां मारनो याद नी थो । नीतो भोत मजो आतो। इतना में मुनसीपालटी को बम्बो आयो, ने थोड़ी देर में सब शान्ति हुई गई। फिर गोमती ने उका दासाब हमारा यां कदी नो आया । म्हारे बी ऐसो धक्को बेठ्यो के फिर कदी मने ब्याव को नाम नी लियो। छोटपन का इना धक्का की याद आतेज् आजबी म्हारा रूंगटा खड़ा हुई जाय, ने यो सब धक्का कोज चमत्कार हे। हां, महाराज !

—श्रीनिवास जोशी

(* बात या है कि जो 'शॉक' अच्छो मसालादार ने चरपरो होय तो जीबखे भी धक्को लग्या बिगर नी रे, फिर बिचारो ठण्डा देस को अँगरेज बी नी मरे तो कईं करे—सम्पादक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उज्जैन का पंडा होशा की भाषा को लोच !

भारत बड़ो अनोखो देस है । यां का सबी ठाठ निराला हे । ओर बात होण् की तरे यां धरम को मामलो बी बड़ो अद्भुत हे । अपनेयां जां एक तरफ ऊँचा-ऊँचा दरसन हे, तो दूसरी तरफ आडम्बर बी घणां हे । ने हिन्दू धरम की तो कंई कोज् मती ! ई में जां मूरती पूजा हे तो ऊं का सांते घोर ढोंग-धतूरा ने कण्ठी-माळा, जटा-चोंटी ने धूनी-चिमटा से लगई के आरिया सम्माज, जेन धरम ने रामसनेही मत सरका विधान बी हे, पन् केई तरे का मत-मतान्तर होता हुआ बी ई सब तीरथ-बरत का मामला में एक सरीका हे ।

यां को हर हिन्दू अपना तीरथ में जावा की ने वांका असनान-ध्यान-दरसन करवा की मन में घणी खांत रखे हे । जद टेम ने पईसा की इफरादी होय के ऊ एकलो, दोकलो या परवार सांते तीरथ करवा निकलीज् पड़े !

अपना देसमें तीरथ बी नरा हे, कोई पहाड़ पे, कोई नद्दी पे, तो कोई समंदर-किनारे । कोई किना कारण बनीग्यो तो कोई किना कारण ? पन् हर तीरथ में जातरी होण् की आवा-जावी ने धरम-पुन्न से वां का बामण होण् में एक नवो धन्धो पेदा हुइग्यो—पंडा-गिरी को । पंडागिरी की सुरुवात पेलां तो आजकल का 'गाईड' होण की तरे से हुई होगा, पन् धीरे-धीरे ई अपनो काम भूली के धरम का ठेकेदार ने सरग का पेरादार बणी बेठ्या ! पीछे तो इनने इतरा ढोंग रचाया, के बस ! पूछोज् मती ! इनकी जिनगी इतरा आनन्द से गुजरे, के कँई केनो साब् !

ई पंडा होण् आपके हर तीरथ में पोंचते ज् हाजर मिलेगा । उज्जैन बी मोटो तीरथ हे । यां बी हज्जारों जातरी तीरथ-बरत, धरम-ध्यान ने सिपरा-असनान वास्ते रोज ही आता रे । यां का टेसन पे बी लांगदार ऊँची धोती, बंगाली कुणता पे लाल पंछो, मुँडा में पान, ने माथा पे तिलक के सांते गांठनवाली लम्बी चोटी का ठाठ में पंडा होण् अलगज् पिंचाण में अई जावेगा । कोई यातरी का पोंचतेज् ई सब ऊँका आगे-पीछे असा लगे जणे के गोर की भेली पे मकोड़ा चोंट्या हो ! कदी बापड़ा यातरी टेसन से बची ने सिपराजी का घांट पे पोंच्या, के वां बी हुई पंडागिरी सुरु ! सिपराजी को रामघांट बड़ो मासूर हे ने वां का पंडा होण बी । जेसाज् कोई यातरी निगे आयो के बोलीज पड़ेगा—

'आयो, आयो भय्या जिजमान ! वाह, वाह भय्या भागवान् ! बेठ अंई ! भोत प्रेम से इसनान करो, दोई जणां ! वाह, बई साब् बी आया हे ? अच्छो कर्‌यो, लछमी के सांते लायो ! लछमी हे भय्या, ई बई तो !'

ईं का बाद यातरी होण के असनान कराता बखत ई पंडा होण सलोक बोलता-बोलता केई तरे का संकलप बी छोड़ई दे । पछे जद ऊ यातरी न्हई-धोई ने तिलक लगाती बखत महाराज के दस-बीस पईसा दखना में दे, तो महाराज बड़ी तरकीब से ऊं के ऊंचो-नीचो पटके—

'वाह, भय्या वाह ! वाह रे भागवान, क्या पुनवान है तू बी ? सावन को मईनो ने सो कोस से आयो, आज तो बड़ी ग्यारस हे रे जिजमान ! अरे बई साब् बी सांते हे, ई तो लछमी हे, लछमी ! लछमी ने नाराण की जोड़ी, आहा हा ? फिर बी ब्रामण के दस-पांच पईसा ?'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इत्तो केता-सुनता बी जद जिजमान नी पिघले तो वी फौरन दूसरो दाव चलावे—

'अरे, भय्या दामू गुरु ! इनके पिचांणो हो ? ई सुसनेरवाला लालचन्दजी का भय्या हे ! बड़ा पुणवान था भय्या, लालचन्दजी, जदे आता जदे ज् हमके फराल कराता था ! बड़ी पुण्यई थी गुरु, डोकरा की ! घरे सब आनन्द छोड़ीग्या है ! ने उनका ई भय्या बी वैसा ज् पुणवान हे ।'

नतीजो यो होगा के बापड़ो जातरी पीछो छुड़ावाके वास्ते थोड़ा-घणा पईसा ओर दई देगा । आखर ऊ कां तक अपणी ब्याज स्तुति सुणे ? या तो एक बात हुई, पंडाहोण की लच्छादार भाषा की । ईं का बाद जद ऊ वापस जावा लगे तो देखे के ऊं का सरका केई वां मंडरईर्या हे । ई पंडा होण् बड़ा चतुर होय, ने इनकी भाषा तो ऐसी लचकदार होय, के बस !

जदे कोई गुजराती या मराठी-भाषी जातरी इनखे आतो दिखे तो ई फौरन अपनी मालवी-भाषा में गुजराती ने मराठी को बघार लगानो सुरू करी दे—

"आव, भय्या आव ! अँई आव, मोटा भई ! इदर अमेरे घांट पे कपड़े धरो, पन् जोखमदारी समाल लीजो जिजमान ! ऐं, एँ, सूं बात छे ? या जगा असनान करो भई ! पन् समली ने उतरजो, फरसी चिकनी छे !"

या—

"वाह, भय्या वाह ! इदर कु आ जाव ! कां से आये हो ? कुठे रेतो तुमीं ? तुमीं पंढरपुर चे ? भगवान विट्ठल की नगरी हे भय्या, वा तो । अरे गम्पू कां गयो ? बेठ अंई ! अरे, अरे बाई ! आ मुलगाचा हाथ पकड़ी लो ।"

अब जरा महाकाल मंदर का बी आनन्द के निगाह में उतारो । बड़ो मासूर मन्दर हे यो । याँ बी पण्डा होण बिलपत्तर लई ने डट्याज् रे । जेसोज् कोई यातरी आयो के इनकी जबान में मिसरी घुलवा लगे—

"आव भय्या, आव ! आव सेठ ! बई साब्, चप्पल, जूता यां हेड़ी दो ! कुण्ड में आचमन करो, जल चढ़ावो !" ने या बात पूरी होय के नी होय, वी यातरी होण का हाथ में बिलपत्तर ने जल का लोटा थमई दे । पछे धीरे से केवे—

"कँई अभिषेक करवावगा नी ? आज तो सोमवार हे ने सावन को मईनो है भय्या ! सब मनोरथ पूरा होयगा, अरे, जादा मत दीजो, सिरफ सवा रुपया....एँ, सवा रुपयो बी नी ? वाह, जो थारी इच्छा हो दई दीजे ब्राह्मण के ! तू तो पुणवान हे भय्या !"

फिर जातरी जद भगवान महाकालेश्वर का दरसन करी ने बायर निकले तो केई पंडा होण् आशीरवाद की झड़ी लगई दे—

"वाह, भय्या जिजमान ! आनन्द करो ! पुत्रवान, लक्ष्मीवान, गुणवान हो ! दे भय्या हमके बी, गरीब ब्राह्मण के दे कंई तो ? वाह, रे वाह ! कंई तो दे ?"

कदी ऊ यातरी उनके कईनो दे तो कड़्ला सुभाव का पण्डा होण ऊं का जाते ज् अपनो गुबार निकालवा लगे—

"अरे, कंई दे ऊ ? छीतो हे, छीतो ! ऊंको बाप बी ऐसोज् थो । गुरु, मैं तो पचास बरस से जानूं हूँ ऊं का आखा खानदान के ।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पंडा होण की जिजमानी को जादातर काम सवेरा-सवेर कोज् हे, सांजे ई फुरसत में हुई जाय ने खूब रगड़ा-पत्ता छाने। दो-चार जनां की मंडली कई बी अपनो अखाड़ो जमइले ने फेर सुरू होय भाँग घोटनो। भांग बी बढ़िया राजस्थानी, काली मिरची ने दूध–सबी मसालो हाजर ! घोटते-घोटते बी कोई गुरु बोलीज् पड़ेगा—

"भय्या बिशू गुरु ! जरा अच्छी छान जो हरी-हरी ! कल तो हमके कँई आनन्द हीज नी आयो यार ! वां छानी थी जेराम सनीराम की बगीची में ! ऊ अपनो पट्ठो मिलीग्यो थो सराफा वालो।"

तो बिशू गुरु झट नेहला पे देहलो मारेगा—

"वाह मालक, कई बात करो हो ? म्हांरा हाथ की छनी हुई, तमने अबी तक पी नी हे ? आज लो, तबीयत तर हुइ जायगी, गुरु !"

भाँग घुटने और छनने का बाद् जद मंडली पीने की तैयारी करे तो पेलां दो-चार छींटा भगवान भोलानाथ के अर्पण करेगा—अईं-वईं हवा में उछाली के। फेर मंडली आनन्द में मगन हुई के भोलानाथ के याद करेगा—

"महांकाल राजा ऽ ऽ ऽ ऽ....
भाँग पीना हो तो रामघाट पे आजा !
छान, छान, कबी किसी की मत मान,
निकल जायगी जान, तो फिर कोन कहेगा छान ?
हरी ऽ ऽ ऽ.....
करे सो खरी !
हरी ऽ हर.....!

ई तो दो-चार नमूना हुवा पंडा होण की मस्ती और आनन्द भरी भाषा का। कदी इँ पे विस्तार से लिखनो सुरु करी दो, तो पोथा का पोथा भरई जाय !, क्यों के यां तो एक से एक 'गुरु मंडली' का अखाड़ा जम्याज् हुवा है। ●

—शिव चौरसिया

केवात की केराया !

"ई तो राणीजी का हारा है !"

एक सेर में घणी पोल थी। बस अंधेर नगरी ने मेबूझ राजा वाली केवात ही समजो। एक बखत उना सेर में एक परदेसी आयो। पेलां तो उना परदेसी ने कोई कांम-काज ढूंढ्यों पर उनखे कइँ काम नी मिल्यो, जद उना परदेशी ने मन में विचार कर्‌यो के इना पोलपाटा में तो अपनाने भी घुसीने फायदो उठानो चई जे। योई सोची ने ऊ मसाण में जई बेठ्यो ओर जो भी वां मुर्दा होण को जलाने आतो उनसूं अपणखे राणीजी का साला बतइने लाग मांगतो। लोग बाग राणीजी का डरसूं उनखे सोना की मुहर दइकेने अपनो काम करता। एसो करते करते उना परदेसी के पास मुखतो धन होइ गयो।

एक बखत राजाजी के घरे भी मौत हुई। जद राज परवार का लोग मुर्दा ने लई ने मसाण में पोंचा तो उना राणीजी का हारा बण्या परदेशी ने उनासूं भी लाग माँगी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और मुर्दो नी जलावा द्यो। लोग राजाजी के पास पोंचा ने उनासे शिकायत करी के राणीजी का हाराजी मुर्दा की लाग मांगे हे, जदी मुर्दो जलावा देगा। राजो अचरज में पड़ीग्यो ने राणीजे के पास जईके पूछ्यो के राणीजी तमारो यो किसो सालो हे। राणीजी ने राजा की बात सुणी तो हँसी पड़्या ने बोल्या–राजाजी कईं आपभी गेल्या तो नी होइग्या ? अरे लुगायाँ के भी कईं साला होय ? राजाजी अबे कईं जबाव दे ! बोत शरमाया ने मेलां सूं लोटी ने हुकम फरमायो के उना आदमी ने पकड़ी ने म्हारे सामने हाजर करो। सिपई दोड़ी पड़्या। पण ऊ पट्ठो भी बड़ो होश्यार थो। ऊ के अपनी गलती मालम पड़ी गई थी। ऊ तो अपनो बोरियो बिस्तर समेटी ने बस रफ्फू चक्कर होइग्यो।

के खांड्या को तो पकड़े बांड्या को !

एक अवरगंडी-नसरचंडी लुगई थी। वा उनका धणी को केणोज नी मानती थी ने ऊ जो काम केतो ऊंको उलटोज काम करती थी। उना लुगई को धणी उनका असा आचरण सूँ घणो दुखी थो। जदी ऊ बोत ही दुखी होइ गयो तो ऊने आपणी करकसा लुगई सूं फारगती पावा को उपाव सोच्यो। बरसात का दन आया। नदी नाला पूर बही चल्या। मोको देखी ने धणी ने अपणी लुगई से कयो कि असी बखत किनाने भी आपणा पीयर नी जाणो चइजे। ने जावे भी तो खूब गेणा गांठा के साथ जाणो चइजे। अपना धणी की बात सुनी ने वा अवरगंडी नसरचण्डी लुगई अपना धणी सूं बोली के मूं तो पीयर जऊँगी। उना लुगई ने अपणा डील पर का गेणा-गांठा भी उतारी द्या। धणी के पीछे पड़ीगी ने बोली कि अबे मने मारे पीयर पोंचई दो। धणी तो यो चातोईज थो, बोल्यो रस्ता में कीचड़ घणो हे; तो आपण गाड़ी नीलां ने दोई जणा बेल पर बेठी नेज चालां।

अबे वी निकर्‌या; चलता–चलता बीच में एक नदी आई। वा पूर जइरी थी। धणी ने लुगई के समझई के देख। बीच धार में तू खांड्या (जणका सींगणा टूट्या था) की पूंछ पकड़ी लीजे ने मूं बांड्या ने (जणके पूंछईनी थी) पकड़ी लूंगा। अणी तरे आपण नदी पार कर लांगा। वी बीरा-धीरा बीच नदी में पोंचा। वां नदी की धार घणी तेज थी। धणी के लुगई ने फेर चेतई के अबे तू खांड्या की पूंछ पकड़ ले। पण वा तो अवरगंडी नसरचंडी थी, उलटोइज करवावारी, सो वा बांड्या की पूंछ पकड़वा आगे बढ़ी। पण कईं पकड़े ! बांड्या के पूंछ वे जदी के। बस बीच धार में एक रेलो आयो ने वणके बहई लेइग्यो। वणने घणा हाथ पेर पटक्या पर अबे कईं होइ सके। वणके अपणा कर्मा को फल मिली गयो। पति घरे लोट्यो ने ऊने चेन की सांस ली। भगवान के आगे हाथ जोड़ी ने बोल्यो के हऊ कर्‌यो रे परभू, मारो उना अवरचंडी नसरगंडी नार सूं पिंड छुड़ायो।

बाई बत्तीसा तो वीरा छत्तीसा !

एक बखत एक भई अपणी बेन के घरे मिलवाने गयो। भोजन को बखत थो। बेन ने अपणा भई के आगे गउँ भरी ने एक थाली परोस दी। भई ने बेन सूं पूछो कि मारे आगे ई गउँ क्यूं परोसा हे ? तो बेन बोली के भोला भई ! कईं थू नी जाणे के अणा गवाँ सूं रोटी, बाटी, लापसी, चूरमो सबी चीजां थने खावा ने मिल जायगी। भई बिचारो कइनी बोल्यो ने भूखोइज घर अइग्यो।

थोड़ा दना के बाद बेन के घरे ब्याव मँड्यो। भाणेंज को ब्याव थो, बेन ने मायरा के वास्ते भई के घरे बत्तीसी भेजी। भई के मनमें बेन को वणी दन को ब्योआर खटकीर्‌यो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

थो । ऊ एक थाली में कपास भरीने बेन के घरे लेइग्यो । बेन ने जद थाली में कपास देख्यो तो बोली । भई ! यो कई है ? कपड़ा कठे हे ? तो भई बोल्यो कपास तो हे ! अणी कपास सूं पगड़ी, दुपट्टा, लुगड़ा, घागरा, कांचली जो थारी इच्छा होगी सबी तरे का कपड़ा बणी जाएगा । बेन अबे भई ने कई जबाब दे ! वा चुपबेई ने बेठीगी । वा जाणीगी कि ई उकाज कर्‌या करम है । वा बत्तीसी निकरी तो भई छत्तीसो निकर्‌यो । कोई कणी सी कम नी था ।

जण की लाठी वण की भेंस !

एक बखत एक आदमी हाट बजार सूं भेंस खरीदी ने लेजईरियो थो । उनखे रस्ता में एक बदमाश मिलिग्यो । उनखा हाथ में खूब लम्बी सी लाठी थी । ऊ भेंस वाला का रस्ता में लाठी फटकारतो बोल्यो-ऐ भेंस की रस्सी मारा हात में दे दे, ने तू खाली हाथ सीधो सीधो लम्बो होइजा । नीतो इना लाठी सूं थारी खोपड़ी का काचरा बिखेरी दूंगा । भेंस वाला ने मन में सोच्यो कि अणी बदमाश सूं उलझ्‌या तो माथो फूटेगा । ऊने रस्सी लाठी वाला के हाथ में थँमई दी । फेर बोल्यो अबे भेंस थारी वी । तू लेईजा । पण अबे मूं घरे खाली हाथ कसरें जाऊँ । तू असो कर, के थारा हाथ की लाठी मने देइदे । बदमाश ने सोच्यो चालो फोकट की भेंस हाथे लगी है । ऊने लाठी भेंस वाला के हाथमें थमई दी । भेंस वाला ने लाठी लइली ने वणी लाठी ने जमीन पर फटकारतो अकड़ी ने बोल्यो–खबरदार आगे बढ्‌यो तो ! छोड़ दे भेंस की रस्सी ! नी तो थारी खोपड़ी का काचरा बखेर दूंगा । अब ऊ बदमाश कई करे ! हाथ को हथ्यार तो जई चुक्यो थो । ऊ अछताइ-पछताइ ने बोल्यो–या ले भैंस । मारी लाठी तो मने वापस दे ! अबे भेंस वालो बोल्यो–कसी लाठी ! कोणसी लाठी !! अरे मूरख जण की लाठी वण की भेंस । तू अबे चुपचाप रस्तो नाप । बदमास वाँ सू खिसकतोइज बण्यो । ●

सौ. मनोरमा उपाध्याय

एक अंश कहाणी को.....

'बलवन्त्या को हरकीलो मन ने गठीलो बदन देखी ने बिछूड़ी का आदा-धूदा दुख दूर हुई जाता था । दिन रीतता था ने रात बीतती थी । घर में चार खाण्यां ने एक कमाण्यो । दिन भर की ताणापींजण, काम को पहाड़ ने बलवन्त्या का दो हाथ । ऊ बी अबलग मिटी जातो-पण मिट्‌यो नी । क्यों ? ऊ अलगूँजो ने ढोलक बजाणा में मासूर थो ।

उनीज रात की बात लो- गांव में गरबा को ख्याल थो । अम्बा महाराणी की सवारी, ने तरे-तरे का स्वांग निकल्‌या । पण बलवन्त्या की अँगली को कमाल लोग मानीग्या । गीत की चलत ने दौड़-दुगण पर बलवन्त्या की अँगली का चटका ने सम की थाप दी ने उका फटका ने लटका देखणे सर का था । देखणे वाला ने सुणने वाला आँख-फाड़ी ने टगटगी लगाता था । पुन्नम को चन्दरमा कब ढली ने पीपल की आड़ में अईग्यो मालम नी पड़ती थी ।

बलवन्त्यो नदी पेलेपार का गाँव में रेतो थो । ओकी परणी बिछूड़ी घरे अेकली थी–तप ने अेकन्तरा से मांदी । बीछूड़ी की नींद चाले चोंटीगी थी । रात को सन्नाटो । बोल का नाम पर कुतरा का भूंकणो, गोया में श्याल की हुक्की ने बतर्‌या चौकीदार की किलकारी उने सुणी थी ।' ●

—आनन्दराव दुबे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मालवी के कुछ अर्थ-व्यंजक शब्द

किसी भी भाषा अथवा बोली के शब्दों की अर्थ-व्यंजक भाव-बोधगम्यता ही, उसकी सजीवता एवं अनिवार्य सर्वोपरि विशेषता होती हैं । जिस प्रकार किसी व्यक्ति की मुखाकृति पर प्रतिबिम्बित भावों को देखकर, उसके अन्तरस्थ भावों को समझा जा सकता है; ठीक वैसे ही सामाजिक जीवन के तथ्यों, मूल्यों एवं मनोदशाओं के विविध रूपों का अध्ययन सामान्य जीवन में व्यवहृत सम्बन्धित शब्दावली के अध्ययन द्वारा किया जाता रहा है । मनोभावनाओं एवं स्वभाव का प्रकट रूप मानव आचरण होता है और इससे सम्बन्धित अर्थ-व्यंजक शब्दावली किसी भी भाषा या बोली की स्थायी लालित्यपूर्ण मूल्यवान् निधि होने का गौरव रखती है । यहाँ मालवी में व्यवहृत आचरण एवं स्वभाव को अभिव्यक्त करने वाले कुछ अर्थ-व्यंजक शब्द प्रस्तुत किये जा रहे हैं:—

(१) गेल्यो-गेलसप्पो, रल्यो-मूर्ख, अनसमझ
(२) सूमड़ो-कृपण
(३) सूगलो-गन्दा
(४) टुच्चो-संकीर्ण विचारवाला
(५) नवरो-जिसके पास अधिकांश समय खाली हो (फालतू)
(६) करपो-समझकर मूर्खता करने वाला
(७) गेल्याई-मूर्खता
(८) कुचराँदो-बिना कारण से छेड़छाड़ करने करने वाला
(९) छाकटो (पु०, वि०)-धूर्त
(१०) घुग्घु (पु० संज्ञा)-मूर्ख (सामान्य अर्थ उल्लू)
(११) बोदो-शक्तिहीन, (दीखने में शक्तिशाली, किन्तु शक्तिहीन हो)
(१२) खोड्यो (रवोड्यो) दुर्भाग्यपूर्ण पुरुष
(१३) चोटा-पट्टी वाली-शृंगार-प्रिय स्त्री
(१४) दरी-सखित्व एवं अपनत्व भाव का सम्बोधन कारक शब्द
(१५) पेटू-अधिक खाने वाला
(१६) बसून्दो (वासून्दो)-गन्दगी-प्रिय
(१७) बण्ड-उपद्रवी बालक
(१८) चन्ट-चालाक
(१९) मछलांदो-दुर्गन्ध मय
(२०) दोगलो (पु० वि०)-विश्वासघाती
(२१) मुसण्डो (पु. वि.)-हृष्ट-पुष्ट एवं धृष्ट प्रवृत्ति का पुरुष
(२२) मुसण्डी (स्त्री. वि.)-हृष्ट-पुष्ट एवं धृष्ट प्रवृत्ति की स्त्री
(२३) हरसियो (हड्सियो)-मन में अफलित इच्छा रखने वाला
(२४) एबलो (पु. वि.) दुर्गुणी
(२५) सती-सावित्री-पतिव्रता या चरित्रवान् स्त्री, सती-सावित्री (सामान्य अर्थ) दुः चरित्रा स्त्री (लक्षणार्थ) ।

—डॉ. एस. एल. तैनगुरिया, इन्दौर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मालवी के सन्दर्भ में

डॉ० उदयसिंह भटनागर

भाषा जन-मानस-प्रकृति है। उसका विकार उसका विकास है, और संस्कार उसका ह्रास। भाषा का प्राकृत रूप, उसका बाह्य रूप न होकर, उसको बोलनेवाले लोक या समाज की अन्तर्भावना या अन्तश्चेतना है। भाषा के बाह्य रूप भी हम चाहे कितना ही सजा लें और उसे शिष्टता या साधुता का पाण्डित्य-संस्कार प्रदान कर दें, फिर भी जब तक उसमें जन-मानस की अन्तर्भावना या अन्तश्चेतना को व्यक्त करने की क्षमता न हो, तब-तक उसे लोक-भाषा नहीं कहा जा सकता। जन-भाषा या लोक-भाषा की यही विशेषता है कि वह जन-मानस की इस अन्तर्भावना या अन्तश्चेतना को अपनी 'सम्पूर्ण शक्ति' के साथ व्यक्त करने की क्षमता रखती है। कभी तो वह सीधी अभिव्यक्ति करती हुई किसी गहराई की ओर लक्ष्य करती है—'रामाजी रइग्या ने रेल जाती री'

में तात्पर्य सीधी चोट करता है। इसको किसी साधुता का दुसाला ओढ़ाकर शिष्ट-मानस की चिकनाई पहुँचाने की आवश्यकता नहीं;

'आम्बो वद्यो भाई लाम्बो रे, डाल पड़ी गुजरात।
केर्‌यां पाकवाने आई रे, ने खाईग्यो बदरीनाथ॥'

में शिष्ट मानस की मनोवृत्ति पर दुशाले में लपेटकर चोट की गयी है।

'चोटी वासग रमीरया, पाटी चाँद पवासीआ एँ माय।
आँख्याँ आम्बारी फाँक ओ माता, भाँपण भमरा भमीर्‌या एँ माय॥
नाक सूआरी चाँच ओ माता, होठ पनवाड़ी छईर्‌या एँ माय।
दाँत दाड़मरा बीज ओ माता, जीब कमल री पाँखड़ी एँ माय॥

इस गीत में दिये गये साहशों को शिष्ट बौद्धिक प्रक्रिया द्वारा काट-छाँटकर राग-रंग-अलंकार-चमत्कार द्वारा शिष्ट साहित्य का जो संस्करण तैयार किया जाता है, उसमें काव्य का लालित्य और बुद्धि का पाण्डित्य निखरकर शिष्ट मानस पर चिकनाहट का काम अवश्य करता है, पर कभी-कभी साधुता या शिष्टता के सम्मोहन में 'पानी पीने' के स्थान पर 'पानी ग्रहण करने' की प्रवृत्ति संस्कार प्राप्त करने लगती है। आज शुद्ध हिन्दी के 'फेरे' में हिन्दी की गति इसी प्रगति की ओर प्रवृत्त हो रही है। 'पानी-पीने' के स्थान पर 'पाणी ग्रहण' से सम्मोहित होकर हमारे 'भैराजी' भी अब रेडियो मंच पर आकर 'शक्कर' छोड़कर 'शर्करा' का प्रयोग करने लगे हैं। लोक-भाषा की आत्मा को त्यागकर हिन्दी का अनुवाद और अनुकरण की भाषा बनाने की 'वन्दाल-वृत्ति' (vandalism) आज इस कदर बढ़ती जा रही, कि आज हिन्दी राष्ट्रभाषा से राजभाषा, राजभाषा से सम्पर्क भाषा और सम्पर्क भाषा से एक स्वार्थ विशेष की या एक मनोवृत्ति विशेष की भाषा होती जा रही है। हिन्दी, उर्दू और हिन्दुस्तानी की राजनीति के पंडितों, मौलवियों और प्रोपेगेन्डिस्टों ने यदि इस भाषा को अपनी-अपनी सद्वृत्तियों की ओर न खींचा होता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
और उसमें जन-मानस की अन्तर्भावना और अन्तश्चेतना के अनुकूल लोक-भाषा की आत्मा को प्रवेश करने दिया होता, तो आज राष्ट्रभाषा का एक प्रबल स्वरूप हमें प्राप्त हो जाता, जो सम्पूर्ण भारतीय जनता की अभिव्यक्ति का साधन बन सकता था। परन्तु शुद्धिकरण की जो मनोवृत्ति हमें विरासत में मिली है, वह हमारे दुर्भाग्य की ही सराहना कर रही है और हम जन-मानस-प्रकृति की अवहेलना कर, उसके समाजनिष्ठ स्वरूप को नष्ट करते जा रहे हैं तथा उसके स्थान पर एक ऐसे स्वरूप का विकास कर रहे हैं, जो एक दम वर्ग-विशेष की व्यक्ति निष्ठ मनोवृत्तियों का द्योतक है, जिसको मध्ययुगीन मठ या चर्च की प्रगतिहीन भाषा भी कहा जा सकता है। शासन, प्रशासन और अनुशासन में, शिक्षण-संस्थाओं में रेडियो, पत्रों और प्रकाशनों में, पाठ्यपुस्तकों और ग्रन्थों में, सर्वत्र ही भाषा के प्राकृत और बहुप्रचलित स्वरूप को नष्टकर, उसका शुद्ध अनुकृत स्वरूप प्रस्तुत करने की प्रवृत्ति ऐसी भयंकर होती जा रही है कि प्रस्तुत विषय में भाषा ही भाषा दिखाई देती है और अर्थ का कहीं नाम नहीं। लोक-भाषा ही प्राकृत भाषा है। वही जन-मानस की अभिव्यक्ति की प्रकृति है। जनपदीय या लोक-भाषा तथा शिष्ट-भाषा में असाधु-साधु का भेद, भाषा को साध्य और व्याकरण की साधना तथा शास्त्र मानने वाले प्राचीन वैयाकरण व्याख्याकारों (बैजि, सौभव आदि) की स्थापना है, जिसकी परम्परा हिन्दी को संस्कृत बनाने वाले पण्डितों में आज तक चली आती है और उसके फल-स्वरूप लोक-भाषा और उसके साहित्य का अध्ययन-अध्यापन, पठन-पाठन, रचना-विकास सब कुछ पिछड़ रहा है और हिन्दी में जो अनुकरण और अनुवाद प्रकाशित हो रहा है, यह जन-सामान्य के लिये विदेशी है। भारत में अंग्रेजों शासन को चिर बनाये रखने के उद्देश्य से अंग्रेजी शिक्षा-दीक्षा की स्थापना के लिये, भारत की लाखों शिक्षण-संस्थाओं का ध्वंस भी लोक-भाषाओं के अस्तित्व और महत्व को नष्ट करने में बहुत बड़ा कारण रहा है। भाषा के अध्ययन में प्रातिशाख्य, व्याकरण, निरुक्त आदि की परम्पराएँ, इस तथ्य की द्योतक हैं कि उनके प्रणेता अपने-अपने देश-काल की भाषाओं के अध्ययन के लिये जन-मानस के अध्ययन पर ही विशेष ध्यान देते थे, क्योंकि, लोक-भाषा ही जन-मानस-प्रवृत्ति की द्योतक है और किसी शिष्ट भाषा के विकास की प्रवृत्तियों तथा परम्पराओं का मूल लोक-भाषाओं में ही मिलता है। जिसको हम शिष्ट या साधु भाषा कहते हैं, वह उसकी उस लोक-भाषा का ही विकृत या अनुकृत रूप है, जो जन-प्राकृत है। यह विकार या अनुकरण उस शिष्ट या साधु भाषा का संस्कार होने से उस भाषा को **संस्कृत** कहा जाता है। इस साधु-भाषा के अध्ययन के लिये भी जन-मानस-प्रकृति और उससे उद्भूत प्राकृत (भाषा) को ही आधार मानना पड़ता है।

जगत अर्थमय है। मनुष्य उसका अनुभव करता है और भाषा के माध्यम से वह उसको व्यक्त करता है। अतः भाषा अर्थ सापेक्ष है। अर्थ के बिना भाषा और भाषा के बिना अर्थ का कोई अस्तित्व नहीं रहता। इस प्रकार भाषा मानव की अनुभूति की अभिव्यक्ति का साधन है। अर्थ एक है और उसकी अभिव्यक्ति भी एक ही होती है, परन्तु जन-मानस-प्रकृति में भेद होने से प्रयत्न-भेद होता है, और भाषा के बाह्य-रचना-प्रकार में भेद हो जाता है। एक ही देश-काल के भाषा-भाषियों में भाषा के इस प्रकार भिन्न रूप देख पड़ते हैं कि उन्हें हम भाषा, विभाषा—लोक-भाषा, प्रान्तीय-भाषा, बोली, उप-बोली आदि में विभाजित कर देते हैं। इनमें प्रत्येक का अपना स्थानीय महत्व होता है, क्योंकि वही उसके बोलने वालों की अनुभूति और अभिव्यक्ति का माध्यम होती है; और उसके विकास का साधन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भी होती है। इस दृष्टि से मालवी का अपने क्षेत्र में एक लोक-भाषा या जनपदीय भाषा के रूप में अपना महत्व है, इसको नकारा नहीं जा सकता। मालव जन पद, मालव-प्रान्त और मालवी भाषा का सामाजिक, धार्मिक, राजनीतिक और साहित्यिक केन्द्र प्राचीन काल से ही अवन्ती-उज्जैन रहा है, जहाँ महाभारत के सान्दीपनि और कृष्ण की गुरु-शिष्य परम्पराएँ, जैन, बौद्ध और गुप्तकालीन वैभव, प्राचीन शैव-संस्कृति के साथ मिश्रित हैं, जहाँ विक्रम, भोज और मुंज कालीन साहित्य, कला और संस्कृति तथा राजपूत, मुस्लिम और मराठों के उद्भव और प्रसार की गाथाएँ प्रचलित हैं, वहाँ कभी अपभ्रंश का एक प्रसिद्ध घुमक्कड़ कवि पुष्पदन्त भी आकर रुक गया और उसका वर्णन कर गया—

एत्थत्थि **अवन्ती** णाम विसउ। महिवहु भुंजाविय जेण' वि सउ।
णंदंतहिं गामहिं, विउलारामहिं, सरवर कमलहिं लच्छि-सही।
गलकल-केक्कारहिं, हंसहिं, मोरहिं, मंडिय, जेत्थु सुहाइ मही॥
जहिं चुमचमंति केदार-कीर। वर-कमल-सालि-सुरहिय-समीर॥
जहिं वसह-मुक्क-ढेक्कार-घीर। जीहा-विलिहिय-णंदिणि-सरीर॥
जहिं मन्थर-गमणइँ महिसाइँ। दह-रमणु ड्डाविय-सारिसाइँ॥
काहलिय-वंस-रव-रत्तियाउ। जहिं झीणउ विरहि तत्तियाउ॥
जहिं हालिणि-रूव-णिवद्ध-चक्खु। सीमावडु ण मुअइ को' वि जक्खु॥
जिम्मइ जहिं एवहि पवासिएहिं। दहि-कूरू-खीरु,-घिउ देसिएहिं॥
पव-पालियाइ जहिं बालियाइ। पाणिउ भिंगार-पणालियाइ॥
दिंतिएँ मोहिउ णिरु, पहिय-विंदु। चंगउ दक्खालि' वि वयण-चंदु॥
जहिं चउपयाइँ तोसिय-मणाइँ! घण्णइ चरंति णहु पुणु तिणाइँ॥
उज्जेणि णाम तहिं णयर अत्थि। जहिं पाणि पसारइ मत्त-हत्थि॥

—जसहर चरिउ

आधुनिक मालवी का मुख्य केन्द्र आज भी यदि उज्जैन मान लिया जाय तो हमें यह मानना होगा कि मालवी अपनी परम्परा में दक्षिण-पूर्वी राजस्थानी के रूप में मान्य एक लोक भाषा रही है और मरु-मालव का सामाजिक और साहित्यिक सम्बन्ध भी अति प्राचीन है। यहीं से इसका विस्तार भोपाल, भोपावर, इन्दौर होता हुआ पश्चिमी मालव प्रान्त की ओर देखा जा सकता है, और रतलाम में आकर यह मेवाड़ी में मिलकर एक हो जाती है। पूर्व में यह ग्वालियर क्षेत्र को प्रभावित करती है और उत्तर में कोटा की हाड़ोती और जयपुर की ढूंढाड़ी में मिल जाती है। इस केन्द्रीय मालवी का विस्तार क्षेत्र पूर्व में बुन्देली तथा कौसली तक देखा जाता है, जो मध्यप्रदेश की बोलियाँ है। पश्चिम में यह गुजराती को अपने राग-रंग में रचाये हुए है—

'मेंदी तो ऊगी मालवे ने रंग पड़यो गुजरात रे।'

दक्षिण में इसका एक पहाड़ी रूप निमाड़ी है, जो भीली और खान देशी से संयुक्त है। दक्षिण–पूर्व में इसका विस्तार नर्मदा के पल्ले पार होशंगाबाद, बेतुल होता हुआ छिन्दवाड़ा तक और महाराष्ट्र में चाँदा तक देखा जाता है।

मालवी की रचना के मुख्य तत्व मेवाड़ी और जयपुरी से बीज रूप में होने से इसको राजस्थानी का दक्षिण–पूर्वी रूप माना गया है, परन्तु भाषा में जब अभिव्यक्ति की स्वतन्त्र शक्ति आ जाती है, तो वह अपने बीज रूपों के आधार पर अपना स्वतन्त्र विकास कर लेती है और उसमें साहित्य–रचना भी होती है। मेवाड़ी में वर्तमान निश्चयार्थ क्रिया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
का रूप 'हूँ' और जयपुरी में 'छुं' होता है। इनमें से मालवी में मेवाड़ी का 'हूँ' आया है। इसीका भूतकाल का क्रिया-रूप मेवाड़ी 'हो' है। मालवी में मुस्लिम प्रभाव से 'था' का 'थ्' और मेवाड़ी हो से 'ओ' तत्त्वों का संयोग होकर 'थो' हो गया है। भविष्यत् काल का रूप क्रिया में—'ला' जोड़ने से बनता, जो मेवाड़ी से इसको प्राप्त हुआ, जिसमें मेवाड़ी के समान ही लिंग तथा वचन में कोई परिवर्तन नहीं होता—उदाहरणार्थ—

जाऊँ हूँ, गयो थो, जाऊँला (-गा)। मेवाड़ी के साथ ही इसमें भी '-ला' का स्थान अब नागरिक '-गा' लेता जा रहा है। मेवाड़ी में सम्बन्ध वाचक 'रो' रतलाम तक सुनाई पड़ता है। जयपुरी का सम्बन्धवाचक 'को' शेष मालवी में और गुजराती का सम्बन्ध वाचक 'नो' निमाड़ी मिलता है। मेवाड़ी का कर्म-सम्प्रदान 'ने' रतलाम तक प्रयुक्त होता है, शेष मालवी में उसके स्थान पर 'के' का प्रयोग होता है जिसमें 'न्' के स्थान पर 'क्' जयपुरी से ,और, 'ए' मेवाड़ी से मिला है।

क्रिया और कारक रूपों के अतिरिक्त किसी भाषा की पहचान उसकी ध्वनि-संहति और उच्चारण प्रवृत्ति से भी होती है। मालवी की मूल ध्वनि-संहति बहुत कुछ राजस्थानी से ही प्राप्त हुई है, परन्तु कालान्तर में उस पर मुस्लिम तथा मराठी प्रभाव भी आया है। इधर पूर्व में अपनी पड़ौसी बुन्देली और कोसली का स्पर्श मालवी में मिलता है। नगरों की अपेक्षा गावों में यह प्रभाव कम मिलता है। दीर्घ स्वर 'ऐ' तथा 'औ' का उच्चारण जहाँ अन्य भाषओं में 'अई' तथा ,अउ' होता है वहाँ मालवी में, राजस्थानी के समान ही, इसी प्रकार एक ही ध्वनि में उच्चारित होते हैं, संयुक्त रूप से नहीं 'वैरागी' तथा 'और' के 'ऐ' तथा 'औ' का उच्चारण संयुक्त 'अइ' तथा 'अउ' (वइरागी तथा अउरत' नहीं होता, एक ही होता है। इसी प्रकार इसमें मेवाड़ी के समान ही महाप्राण अनुच्चरित रहता है। काड़ो < काढ़ो, कीदो < कीधो, उगाड़ो < उघाड़ो। 'स' के स्थान पर 'ह' उच्चारण करने की राजस्थानी प्रवृत्ति भी इसमें वर्तमान है: हमज्यो < समझ्यो, हूदो < सूधो, हाते < साथे।

अन्य लोक-भाषाओं के समान, आज तो, मालवी का भी अपना क्षेत्र और अपनी सीमाएं हैं। इसका अपना इतिहास और अपनी परम्पराएँ भी हैं। पर इसकी शोध-खोज, अनुसंधान-अनुशीलन की ओर बहुत कम ध्यान गया है। सब से पहले मालवी के स्वरूप का सर्वेक्षण ग्रियर्सन ने अपनी 'लिंग्विस्टिक सर्वे आफ इण्डिया' (खण्ड ९, भाग २, पृष्ठ ४,३५०,५०७) में राजस्थानी के अन्तर्गत किया है। परन्तु इसमें लेखक ने अपनी असमर्थता प्रकट करते हुए, इस पर स्वयं से पूर्व किये गये किसी कार्य के विषय में भी अपनी अनभिज्ञता प्रकट की है। ग्रियर्सन का 'भाषा सर्वे' काफी पुराना हो चुका है। उक्त 'सर्वे' के बाद भाषाओं और बोलियों के रूप बदल चुके हैं; देश-काल और राजनीतिक सीमाएँ भी बदल चुकी हैं; और, जन-मानस के मनन, भावन और चिन्तन तथा उसकी अभिव्यक्ति की क्षमता, कला, शैली और वाग्व्यवहार में परिवर्तन हो गया है। ऐसी स्थिति में एक नवीन भाषा-सर्वे की आवश्यकता है, जो परिवर्तित स्थापनाओं को रेकार्ड कर सके। इस महान् कार्य में कोई 'मालवी शोध संस्थान' अपने क्षेत्र में भाषा सर्वे का महत्वपूर्ण कार्य कर सकेगा।

मालवी के सर्वेक्षण, खोज, शोध, अध्ययन, अनुसंधान और अनुशीलन से हमें उसकी उस जन-मानस-प्रकृति का पता लग लग सकता है, जो इसके रचना-विकास में प्रवृत्त रहा है। मालवी के रचना-तत्वों में अनेक जातियों का योग-दान रहा है, जो इस भूमि पर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पनपीं और विकसित हुईं अथवा बाहर से आकर यहाँ बस गयीं। इन जातियों में प्रागैतिहासिक और ऐतिहासिक अनेक जातियाँ है जो या तो नष्ट हो गयीं या अन्य जातियों में मिलकर वर्तमान में विकसित हो गयीं और जिनके भाषा-संकेत या अवशेष भाषा की प्रवृत्तियों में कहीं-कहीं वर्त्तमान हैं। यदि हम अपने सर्वेक्षण में प्राचीन स्थानवाचक या व्यक्ति और जातिवाचक नामों का संग्रह कर, भाषा–वैज्ञानिक आधार पर उनसे पुरातत्व को खोज निकालें तो उन स्थानों में बसने वाली प्राचीन जातियों और उनकी कई भाषा-प्रवृत्तियों का पता चल सकता है। उदाहरण के लिये मध्यप्रदेश के प्राचीन स्थानों में खाचरोद, बाँगरोद, नागोद, अजनोद आदि समान अन्तवाले (–ओद) नाम किसी एक जाति के विकास के द्योतक हैं, जिसका प्रसार उत्तर में राजस्थान के 'बीगोद' (भीलवाड़ा के पास) और दक्षिण में गुजरात के 'चान्दोद' (बड़ौदा के पास) तक देखा जा सकता है। इसी प्रकार मालवा का सम्बन्ध प्राचीन जाति मल्ल से माना जाता है। यह जातिवाचक शब्द धीरे-धीरे व्यक्तिवाचक बन गया–रणमल्ल और बहादुर मल्ल फिर जैन प्रभाव से जीतमल, जिनमल और हजारीमल, करोड़ीमल होते-होते तखतमल तक आ पहुँचा। इन नामों का भाषा-वैज्ञानिक अध्ययन इतिहास के छिपे हुए तथ्यों के उद्घाटन में सहायक हो सकता है।

आर्य-प्रसार के पूर्व मालव भूमि पर अनेक जातियाँ रही हैं। उनकी भाषा-प्रवृत्तिवों का प्रभाव किसी न किसी रूप में मालवी के रचना-तत्वों में देखा जा सकता है। वर्त्तमान जातियों में भील-भीलाड़, कोल-किरात, निषाद-मुण्डा आदि प्रसिद्ध हैं, जो आदिम मानी जाती हैं, और जिनकी सभ्यता और संस्कृति का प्रभाव आर्य सभ्यता और संस्कृति में भी आया है। मालवी में तो भीली-तत्व वर्त्तमान है। भील राजस्थान की आदिम जाति है। इसका सम्बन्ध काकेशिया से आनेवाली किसी प्राचीन जाति से रहा हैं। सम्भवतः भारत में आने वाली जातियों में भील सबसे प्राचीन है, जो आग्नेयों और द्रविड़ों से पूर्व ही राजस्थान के 'मगरा प्रान्त' (अर्वलि में आकर बसी थी। इनमें से कुछ दल वहाँ से पूर्व दिशा में विन्ध्या और सतपुड़ा की पहाड़ियों में फैलते हुए मगधरा (मगध) में बसे और उनमें से कुछ पूर्व की ओर बढ़ते हुए ब्रह्मप्रदेश की पहाड़ियों में जा बसे। ब्रह्म प्रदेश की अराकान पहाड़ियों में रहने वाली 'मग' जाति उस आदिम जाति के रूप में आज भी वर्त्तमान हैं। 'मगरो' या (मगरा) प्राचीन भीली का शब्द है। अर्वलि प्रान्त में जहाँ इन भीलों की बस्तियाँ बिखरी पड़ी हैं, वह अति प्राचीन काल से ही 'मगरा' कहलाता है। राजस्थानी में 'मगरो' का अर्थ पहाड़ होता है। इधर मगध या मगधरा के पुरातत्व और मूल पर इतिहास अब तक कोई प्रकाश नहीं डाल सका है। द्रविड़ों के आगमन से पूर्व सम्भवतः यह जाति फिनिशिया में प्रवेश कर चुकी थी और वहीं से भारत में आयी। फिनिशिया की पहाड़ी बस्तियों में 'वाडी मगराह' (Wady Magrah) और 'अरदस' (Ardas) प्रसिद्ध रही हैं। 'वाडी मगराह' का इजिप्टो-फिनिशियन अर्थ पहाड़ी प्रान्त होता हैं। इसमें 'वाडी' और 'मगरा' दोनों ही किसी रहस्यपूर्ण अर्थ का उद्घाटन करते हैं, जिसमें मूल केन्द्र 'मग' शब्द है, जो प्राचीन फिनिशिया के 'वाड़ी मगरा', राजस्थानी 'मगरा' बिहार के 'मगध' (मगधरा) और वर्मा की 'मग' जाति को अपने में समाए हुए है। इतना ही नहीं, इन भीलों का सम्बन्ध दक्षिण-पूर्वी द्वीप-समूहों में बसी कुछ आदिम जातियों से भी स्थापित होता है, जो इनमें समान भाषा-तत्व से व्यक्त होता है। दक्षिण-पूर्वी एशिया में जो मलेपोलिनेशियन भाषा-समूह हैं, उसमें यद्यपि आग्नेय भाषाओं का बाहुल्य है, परन्तु उनमें कुछ जातियों की भाषा-प्रवृत्तियां आग्नेय से भिन्न हैं। आग्नेयों के पहले ही ये जातियाँ वहाँ पहुँच चुकी थीं। इनमें सबसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्राचीन काकेशियस जाति थी, जिसका सम्बन्ध अराकान की 'मग' जाति से रहा है।[1] भील और काकेशियस जाति में कुछ समानताएँ लक्षित होती हैं, जो इनके प्राचीन सम्बन्ध की ओर संकेत करती हैं। इनके रीति-रिवाज और भाषा-प्रवृत्ति में आज भी उस समानता के अवशेष वर्त्तमान हैं। भीलों के समान ही उनकी आदिम वेश-भूषा होती है, जो कपड़ों या पत्तों की बनी होती हैं। और इनके अधोभाग को ढँके रहती है। विशेष अवसर या पर्व पर स्त्रियाँ अपने कन्धों को ढँकती हैं, और पुरुष वृक्ष की छाल को कपड़े जैसा बनाकर पहनते हैं, जिसे वे लोग अपनी भाषा में **टप** कहते हैं। राजस्थानी और मालवी के प्रयुक्त 'टप' शब्द भीली की ही देन है। वर्षा और धूप से बचने के लिये पत्तों से बना हुआ छाते के आकार का भीली 'टप' होता है। झाबुआ के भीलों में अधोवस्त्र के लिए भी 'टप' शब्द का प्रयोग होता है।[2] भीलों के समान ही इन लोगों में गोदने की प्रथा चली आती है। विभिन्न श्रेणियों के मुखियों के लिये इनकी भाषा में विशेष प्रकार की शब्दावली का प्रयोग होता है, जो उल्लेखनीय है:—

१. सामान्य व्यक्ति के लिये	—	साउ	—	Sau
२. आदरणीय या बड़ों के लिये	—	मलिउ माइ	—	Maliu mai
३. पदस्थ मुखियों के लिये	—	सु-सु माइ	—	Su-Su mai
४. रांज परिवार के लिये	—	आफिओ माइ	—	Afio mai

इसी प्रकार मुखियों तथा आदरणीय व्यक्तियों के प्रति आदर वाचक सर्वनाम में द्विवचन का प्रयोग होता है। राजस्थानी और मालवी में द्विवचन के स्थान पर बहुवचन का प्रयोग होता है। राजस्थानी में (और मालवी में भी) इस प्रथा के द्योतक शब्द 'आ', 'आव', 'आवो', 'पधारो' आदि क्रमशः निम्न से उच्च वर्ग तक की श्रेणियों के लोगों के लिये प्रयुक्त होते हैं। यह प्रवृत्ति भीली संस्कृति और सामाजिक व्यवस्था की अवशेष है। इसी प्रकार सर्वनामों में राजस्थानी और मालवी 'थूं', 'था', 'थे', 'आप', 'रावला' तथा इन्ही से सम्बन्धित मालवी 'तू', 'तम' आदि भी समाज की विभिन्न श्रेणियों के द्योतक हैं। इसी सन्दर्भ में दन्त्य 'स्' के स्थान पर 'ह्' का उच्चारण करने की प्रवृत्ति भी उल्लेखनीय है। अर्वलि-प्रान्त से लेकर दक्षिण में खान देश और उससे संलग्न विन्ध्या और सतपुड़ा प्रान्तों के भील-भीलाडों की भाषा में दन्त्य 'स्' के स्थान पर 'ह्' का उच्चारण होता है और इस प्रवृत्ति का प्रभाव राजस्थानी, मालवी और गुजराती में बहुत प्रबल रूप में मिलता है। ग्रियर्सन ने शकों में यह प्रवृत्ति वर्तमान होने से इसको शक-प्रवृत्ति माना है, परन्तु काकेशिया में इसका मूल होने से शकों और इनमें इस प्रवृत्ति का स्रोत एक ही लगता है। यही प्रवृत्ति उपरोक्त पूर्वी-द्वीप समूहों में सामोआ (*Samoa*) द्वीप तथा उसके आसपास के द्वीपों में वर्त्तमान है।[3] इसी प्रकार दोनों में दंत्योष्ठ्य 'व्' (v) और द्व्योष्ठ्य 'व्' (W) भी वर्त्तमान हैं।

मालवी के मूल में द्रविड़ तत्व, आग्नेय (निषाद, कोल, मुण्डा आदि) तत्व, मोंगोलाइड (किरात) तत्व भी वर्तमान हैं। द्रविड़ तत्व के लिये उसमें मूर्द्धन्य ध्वनियों का परीक्षण करना पड़ेगा इसी प्रकार उसमें 'ल्' और मूर्द्धन्य 'ळ' तथा 'ड्' और उत्क्षिप्त 'ड़्' का भी परीक्षण करना चाहिये। ये उच्चारण मालवा के भीलों में भी वर्तमान हैं, जो प्राचीन भील-द्रविड़ सम्पर्क के द्योतक हैं। आग्नेय अर्थात निषाद, कोल, मुण्डा जातियों का मालव भूमि पर विचरण, प्रसार और विकास का इतिहास पुराण, महाभारत और रामायण तक में मिलता है।[4] सारे उत्तर भारत—पंजाब और राजस्थान तथा मध्यभारत और यहां

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तक कि दक्षिण में भी इन लोगों ने अपने घर बसाये और राज्य स्थापित किये [५]। राजस्थानी और मालवी की उत्पत्ति के पूर्व ही लोगों की भाषा-प्रवृत्तियाँ यहाँ की आर्य-भाषा को प्रभावित कर चुकी थीं। चन्द्रकलाओं पर आधारित तिथियों के अनुसार दिवसगणना इन्हीं की देन मानी जाती है। बीस तक गिनने की प्रथा 'कौड़ी' इनकी विशेषता का अवशेष है। शब्द के आदि में आनेवाले 'न्' का 'ल्' उच्चारण करने की इनकी प्रवृति आज भी कुछ जातियों (संभवतः इन्हीं के वंशज ओड़ आदि) में 'नाक्यो' के स्थान पर 'लाक्यो' [=डाला] शब्द में अवशिष्ट है।

इसी प्रकार मोंगोलोइड या किरात (सहस्त्रार्जुन किरात था) के लिये हमें मालवी में ट-वर्गीय ध्वनियों का सही उच्चारण-स्थान और प्रयत्न खोजना चाहिये। राजस्थानी में किरात प्रभाव से समस्त ट-वर्गीय ध्वनियों का उच्चारण संस्कृत मूर्द्धन्य न होकर वर्त्स्य है। इसी प्रकार च-वर्गीय ध्वनियाँ भी तालव्य न होकर दन्तमूलीय हैं, जो भीली उच्चारण से सर्वथा भिन्न है।

उच्चारण और रचना-तत्व ही भाषा के मूल तत्व होते हैं, जो उसकी मौलिकता के निर्णायक तत्व होते हैं; क्योंकि, उसका बाह्यस्वरूप तो अन्य प्रभावों से विकृत होता है। इसलिये उसके द्वारा या ग्रामीण के स्थान पर नागरिक; सभ्य या शिष्ट कहे जानेवाले स्वरूप के आधार पर उसके मूल की खोज या स्थापना करना उचित नहीं है। मालवी की पड़ौसी बुन्देली और महाकौशल की बोली का प्रभाव कितना है और कितना प्राचीन है? इसको खोजने की आवश्यकता है। बुन्देली की एक बहुत बड़ी विशेषता है, नामवाचक शब्द को दो भागों में काटकर बीच में बलात्मक निपात लगाने की : जैसे रामलाल को ही कहा था के स्थान् पर 'राम-ही-लाल को कहा था', महिदपुर से ही आ रहा हूं के स्थान पर 'महीद-ही-पुर से आ रहा हूँ'। मालवा के नागरिक लोगों में यह प्रभाव कहीं-कहीं सुनाई पड़ता है। इसी प्रकार, महाकोसल की बोली में प्रथम पुरुष एक वचन सर्वनाम में 'हम' का प्रयोग होता है, जो हिन्दी एक वचन में 'मैं' का बहुवचन है। जैसे हिन्दी—मैंने खाया है के स्थान पर कोसली 'हम खाये हैं'। पूर्वी मालवी में 'म्हू' के स्थान पर 'हम' का प्रयोग 'म्हूँ काईं करूँ' के स्थान पर 'हम काइं कराँ' में देख पड़ता है। मालवा पर बहुत काल तक मुसलमानों का आधिपत्य रहा है। इस कारण यहाँ के लोगों और उनकी भाषा पर भी उनका प्रभाव पड़ना स्वाभाविक है। सभ्य नागरिकों में मालवी 'आईरचोऊँ-जाईरचोऊँ' के स्थान पर 'आरचाऊँ-जारचाऊँ' तथा 'मेरे को-तेरे को' में यह प्रभाव स्पष्ट देखा जा सकता है। इसी प्रकार मालवी 'ण्' के स्थान पर 'न्' का उच्चारण तो गाँवों तक में पहुँच गया है; जैसे—'बोनी-वोनी' (< बावणी-वावणी), 'खानो-दानो' (खाणो-दाणो), उठनो-बैठनो (उठणो-बैठणो), हालनो-चालनो (< हालणो-चालणो) आदि। इसी प्रकार मालवा पर आधुनिक युग तक मराठों का प्रभुत्व भी रहा है, जिससे मालवी पर मराठी प्रभाव आया है। यह प्रभाव कुछ विशिष्ट शब्दों और उनके तत्सम उच्चारण में अधिक देख पड़ता है। इस कारण कुछ लोग मालवी का उद्गम महाराष्ट्री प्राकृत में खोजते हैं। पर भारत में उद्गम, विकास और प्रसार की प्राचीनतम मार्गदिशा पश्चिम और उत्तर से दक्षिण और पूर्व की ओर रही है। दक्षिण से उत्तर की ओर का प्रभाव मध्यकाल से भक्तिधारा और राजनीतिक वृत्ति के रूप में आया है। मालव प्रान्त के निवासी और उनकी बोली की विशेष प्रवृत्ति का उल्लेख वि. सं. ८३५ में उद्योतन सूरि ने अपनी कृति 'कुवलय-माला कथा' में अन्य प्रान्तीय भाषाओं की विशेषताओं के साथ किया है :

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तणु-सोम-मडह देह, कावण ए माण-जीविणा रोइ ।
भाउअ-भइणी तुम्हे भणि रे, अह मालवे दिट्ठे ॥

उज्जैन में आने पर पहली बार जब ताँगेवाले ने पुकारा, 'भुवा साहेब, चलियेगा !' तो बच्चे ने चौंक कर कहा, 'यह आपको भुवा सा' ब (बाप की बहन=भुवा) क्यों कह रहा है ?' मैंने समझा यह मराठी का 'बुआ' होगा। पर उद्योतन सूरि का यह सन्दर्भ याद आते ही एक आनन्द का अनुभव हुआ कि ये 'भुवा साहेब' और 'बुआ' मराठी में जाकर बस गये हैं।

उद्योतन सूरि की रचना के ५०-६० वर्ष बाद पुष्पदन्त ने अपने काव्य 'जसहर चरिउ' में मालव भूमि का वर्णन किया है और उसमें अवन्ति प्रदेश या प्रान्त के उज्जैन नगर का उल्लेख है। उक्त वर्णन ऊपर दिया जा चुका है। 'देशभाषा' की सात प्रान्तीय बोलियों के उल्लेख में अवन्ती प्रान्त की बोली 'अवन्तिजा' (=आवन्ती) का उल्लेख विक्रम की पहली शती के बाद ही भरत मुनि ने अपने नाट्यशास्त्र [६] में किया था:—

(१) बाह्लीका — पश्चिमी पंजाब और उत्तर-पश्चिमी पंजाब की बोली
(२) शौरसेनी — मध्यदेश की बोली
(३) अवन्तिजा — अवन्ति प्रदेश (मालव ?) की बोली
(४) अर्धमागधी — कोसल की बोली
(५) मागधी — मगध की बोली
(६) प्राच्या — मगध से आगे पूर्वी प्रान्त की बोली
(७) दाक्षिणात्या — दक्षिण राजस्थान तथा गुजरात की बोली

आर्यभाषा संस्कृत के प्रथम प्रसार के समय तीन भेद हो गये थे—(१) उदीच्य, (२) मध्य देशीय और (३) प्राच्य [७] इन्ही के आधार पर विकसित प्राकृत के भी तीन भेद हो गये थे, जिनमें अशोक के धर्म लेख मिलते हैं। उन तीन प्राकृतों से विकसित देशभाषा के सात भेदों का यह उल्लेख है। उदीच्य प्राकृत से विकसित बाह्लीको थी, जो पश्चिमी-पंजाब, काश्मीर आदि प्रान्तों में बोली जाती थी और जिसका प्रसार सिन्ध और कुछ-कुछ उत्तर राजस्थान तक हुआ था। मध्यदेशीय प्राकृत के दो रूप हुए—एक शौरसेनी और दूसरा आवन्ती। यही आवन्ती आगे चलकर मालव-प्रदेश की बोली हुई। प्राच्या के भी तीन भेद हुए—अर्धमागधी, मागधी और प्राच्या (बंगदेश तक)।

अवन्ती जनपद का उल्लेख महाभारत में मिलता है। [८] यह अवन्ती-जनपद मालव-जनपद से सर्वथा भिन्न था। सम्भवतः यह अवन्ती के उत्तर में रहा हो और आगे चलकर दोनों एक हो गये हों। ऊपर पुष्पदन्त के वर्णन में भी अवन्ती प्रदेश और उसके उज्जैन नगर का वर्णन है। इससे भी यही लगता है उसके समय में भी अवन्ती-प्रदेश नाम ही प्रचलित था और उज्जैन उसका एक नगर था। उक्त अवन्ती की दक्षिणी सीमा भी उस समय निमाड़ के ऊपर-ऊपर ही रही होगी, क्योंकि निमाड़ भी उस युग में अनूप जनपद [९] के नाम से एक स्वतन्त्र जनपद था। उस समय मालव जनपद की स्थिति आधुनिक मालवा से सर्वथा भिन्न थी। महाभारत में मालव जनपद का उल्लेख अनेक स्थानों पर हुआ है [१०]; आधुनिक मतानुसार यह मालव जनपद खाण्डव-प्रस्थ से पश्चिम की ओर कहीं पंजाब में माना जाता रहा है; क्योंकि नकुल ने दिग्विजय के लिये पश्चिमी जनपदों के साथ ही मालव जनपद को भी जीता था। परन्तु महाभारत में उल्लिखित अन्य जनपदों के साथ विजित मालव जनपद को देखने से सम्भवतः उसके सही स्थान की खोज भी की जा सकती

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। उसके अनुसार खाण्डप्रस्थ से पश्चिम दिग्विजय से निकलकर नकुल ने मरुधन्व (आधुनिक मारवाड़) को जीता और फिर महोस्थ को जीतकर दशार्ण [११] (मरुधन्व से पूर्व, आधुनिक मध्यप्रदेश का विदिशा, भेलसा, भोपाल और छत्तीसगढ़ का सम्पूर्ण क्षेत्र) की ओर बढ़ा और उस पर विजय प्राप्त करके (वहाँ से पुनः पश्चिम की ओर आकर शिबि-जनपद [१२] (चित्तौड़ के पास मज्झिमिका जनपद), त्रिपर्त, अम्बष्ठ, मालव, पञ्चकर्पट तथा माध्यमिक देशों की ओर गया और वाटधान को जीता। [१३] इस उल्लेख के अनुसार मालव-जनपद का स्थान दशार्ण और शिबियों के माध्यमिक जनपद के बीच तथा अवन्ती से भिन्न परन्तु उसके आस-पास कहीं रखना होगा। महाभारत में (अनुशासन पर्व १६५।२५) में मालवा नदी का नाम भी आता है। इसी प्रकार मद्र देश [१४] के राजा अश्वपति की बड़ी माता मालवी और उससे उत्पन्न सौ मालवों का उल्लेख भी महाभारत के वन पर्व (२९७।-५०-६०, २९९।१३) में है। इतिहासकारों ने मालवों का सम्बन्ध मालव जाति के साथ भी जोड़ा है और कुछ इतिहासकारों ने इन मल्लों और अश्मकों में सम्बन्ध स्थापित किया है। इधर महाभारत में मल्ल राष्ट्र को जीतने के लिये भीम का पूर्व दिशा में जाने का उल्लेख (अनुशासन पर्व १६५।२५) है, और अश्मक देश की स्थिति महाभारत में गोदावरी और माहिष्मती के बीच (सभापर्व ३०।३, भीष्मपर्व ९।४४, विराट पर्व १।१३) दी गयी है। इन आधारों पर मालव, मालवा और मालवी के पुरातत्व की खोज की जा सकती है। यहाँ मैं इतना ही संकेत देकर पुनः मालवी की विशेषताओं की ओर आता हूँ।

ऊपर मालव, अवन्ति और शिबि जनपदों का मैंने उल्लेख किया है। महाभारत में 'शिबि-जनपद' के साथ 'माध्यमिक देश' [१५] का भी उल्लेख है। यह माध्यमिक देश कौनसा था। चित्तौड़ के पास जो प्राचीन 'नगरी' है, वह माध्यमिक देश की राजधानी थी। यहीं शिबियों [१६] का प्रसिद्ध जनपद था। उक्त नगरी से प्राप्त सिक्के से यह स्पष्ट है। उक्त सिक्के पर जो 'मझिमिकाय–सिबिजन पदस्स' [१७] अंकित है उसकी भाषा की भी हम जाँच करलें, तो कुछ महत्वपूर्ण तथ्य, मालवी के सम्बन्ध में प्राप्त होगा। इससे यह विदित होता है कि प्राकृत काल में माध्यमिका नगरी शिबि-जनपद की राजधानी थी। भाषा की दृष्टि से हमें उक्त सिक्के में अंकित 'मझिमिकाय' शब्द पर ध्यान देना चाहिये, जिसका संस्कृत रूप 'माध्यमिक' (या माध्यमिका) है। प्राकृत में संस्कृत संयुक्त वर्ण 'ध्य' का 'झ' हो चुका था [१८] इससे 'माध्यमिका' का प्राकृत रूप 'माझमिका' अथच 'मज्झमिका' होता है। उक्त सिक्के में 'मझिमिका' लिखा है। इसमें 'झ' के अकार का इकार होकर 'झि' की प्रवृत्ति लक्षित होती है। मध्यग 'अकार' का 'इकार' करने की स्थानीय उच्चारण प्रवृत्ति है जो उसकाल में वर्त्तमान थी और दक्षिण राजस्थानी, मेवाड़ी तथा दक्षिण-पूर्वी राजस्थानी-मालवी में आज भी वर्त्तमान है; जैसे–बोझिल (बोझल, मद्दिम (मद्दम < मध्यम) बादिलो (बादलो), बोलिदो (बोलदो), खोलिदो (खोलदो), लेइलो (ले-लो) आदि। इससे भिन्न शब्द के आदि में अकार का इकार उच्चारण करने की प्रवृत्ति मारवाड़ी में मिलती है; जैसे–पिंडत (पंडत), सिरदा (सरदा = श्रद्धा), मिनख (मनख)। ऊपर मैं कह चुका हूँ कि भाषा के मूल की खोज में उच्चारण प्रवृत्ति मुख्य रूप से सहायक होती है। यहाँ मालवी और मेवाड़ी में जो पुरातन सम्बन्ध हैं उसमें मध्यग अकार 'अ' को 'इ' उच्चारण करने की प्रवृत्ति शिबि-जनपद में भी वर्त्तमान थी। इससे भी लगता है कि मालव-जनपद इसीके पड़ोस में अवन्ती जनपद के उत्तर में (सम्भवतः कोटा-झालावाड़) कहीं रहा होगा। वर्तमान बोली में मालवी का यह मध्यग इकार दीर्घ ईकार भी हो गया है और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों में यह ईकार दीर्घ से दीर्घतर सुनाई पड़ता है । इसका कारण सामाजिक है, यह आगे स्पष्ट करूँगा ।

ऊपर आवन्ती से मालवी के सम्बन्ध की मैंने बात कही थी । शिबि-जनपद और अवन्ती जनपद दोनों ही पड़ोसी रहे हैं और मालव जनपद भी इन दोनों के पड़ोस में कहीं था, सम्भवतः गुप्तकाल में कभी अवन्ती के साथ मिलकर एक हो गया हो । अब मैं यहाँ, भरत के नाट्यशास्त्र में दी गयीं उन विशेषताओं का उल्लेख करना चाहता हूँ जो मालवी रचना-तत्वों के सन्दर्भ में महत्वपूर्ण हैं । भरत ने उपरोक्त 'देशभाषा' की कुछ प्रान्तीय विशेषताओं का उल्लेख किया है। उसके अनुसार गंगा और सागर के मध्य की 'एकार-बहुला' है। यह 'एकार बहुलता' आज भी हिन्दी में वर्तमान है । प्राचीन मध्यदेश से कोसल, मगध और बंगाल तक की बोलियों में एकार बहुला प्रवृत्ति वर्तमान हैं । उद्योतन सूरि ने भी मध्यदेश की इस भाषा-प्रवृत्ति का उल्लेख किया है—

"णय-नीति-संधि-विग्गह-पडुए, बहु जंपि रे य पयतीए ।
तेरे मेरे आउ त्ति जंपि रे मज्झ देसे य ।।"

आधुनिक हिन्दी जो रासो की 'खड़भाषा' की एक बोली (दिल्ली-मेरठ की) 'खड़ीबोली' से विकसित हुई है, उसकी सभी मूल प्रवृत्तियाँ पश्चिमी हैं परन्तु यह एकार-प्रवृत्ति पूर्व की है। क्रिया इसकी ओकारान्त है जो पश्चिमी अपभ्रंश की उकारान्त प्रवृत्ति से विकसित है और जो ऊपर 'तेरे मेरे आउ' में लक्षित है । नागरिक लोगों में बोली जानेवाली मालवी-हिन्दी में 'तेरे को-मेरे को' प्रयोग बहुत प्रचलित है। यह प्रयोग मालवी में कब से आरम्भ हुआ होगा। सम्भवतः संवत् ८३५ से तो नहीं, परन्तु मालवा में मुस्लिम सुलतानों के साथ आया होगा । इस सम्बन्ध में हमें राजशेखर (दसवीं शताब्दी) कृत 'काव्य मीमांसा' के 'आवन्त्याः पारियात्राः महदशपुरजैर्भूतभाषां भजन्ते' पर थी विचार कर लेना चाहिये । इसके अनुसार अवन्ती, पारियात्र और मन्दसौर (महंदशपुर) के लोग उस समय 'भूतभाषा' बोलते थे। कुछ लोगों ने 'भूतभाषा' के स्थान जर 'धूर्तभाषा' पाठ माना है। कुछ लोगों ने 'भूतभाषा' से पैशाची का अर्थ लेकर मालवों का पैशाची प्राकृत के प्रदेश—उत्तर-पश्चिमी पंजाब से आना सिद्ध किया है । राजशेखर ने स्वयं इसका कोई स्पष्टीकरण नहीं दिया है। पैशाची या चूलिका पैशाची की विशेष प्रवृत्तियों को अथवा उनसे विकसित प्रवृत्तियों को मालवी बोली में खोजने से ही इस तथ्य का उद्घाटन सम्भव है। मुझे मालवी में पैशाची या चूलिका पैशाची की ऐसी कोई प्रवृत्ति नहीं मिली, जिसके आधार पर 'भूतभाषा' और पैशाची को एक मान लिया जाय। [१९] ऊपर मैंने मालवी में 'ण्' के स्थान पर 'न्' उच्चारण का कारण मुस्लिम प्रभाव बतलाया है । पैशाची में 'ण्' के स्थान 'न्' उच्चारण की प्रवृत्ति अवश्य है, [२०] परन्तु मालवा में जिस अपभ्रंश का विकास हुआ उसमें सर्वत्र 'ण' ही मिलता है, जो शौरसेनी के समान है । नीचे मैंने कालिदास की अपभ्रंश रचना का उदाहरण दिया है, उसमें भी सर्वत्र 'ण्' का ही प्रयोग मिलता है, [२१] और, अन्यत्र भी पैशाची की कोई प्रवृत्ति नहीं मिलती। ऊपर उद्योतन सूरिवाले 'तेरे-मेरे' तथा मालवी 'तेरे को-मेरे को' में आधुनिक पंजाबीपन अवश्य लगता है, परन्तु यह पैशाची का विकसित रूप नहीं है। मालवी-हिन्दी का ही यह प्रयोग है और इसका प्रयोग राज-शेखर के बाद मुस्लिम सुल्तानों के शासन काल में दिल्ली से आया है । मालवी और कोसली के आधुनिक राजनीतिक गठबन्धन का प्रभाव भी यह नहीं हो सकता। आधुनिक कोसली के हिन्दी-भाषी का 'हम खाये हैं' (हिन्दी-मैंने खाया है) का प्रयोग मालवी में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं होता 'मैं खादो' में ओकारान्त प्रवृत्ति है । कोसली तथा अन्य पूर्वी बोलियों की उच्चारण प्रवृत्तियों में बड़ा भेद है । मालवी ओकार बहुला है जबकि पूर्वी एकार बहुला । मालव की शैव-संस्कृति में दीक्षित 'वैरागी' कोसली में 'बैरागी' (व का ब तथा ऐ का उच्चारण अइ) और आगे चलकर उदयाचल (पूर्व) की ओर जाकर सिद्धों की सिद्धि प्राप्त करने के लिये वह 'बाइरागी' (व का ब तथा ऐ का आइ उच्चारण) हो जाता है । मालवी 'अ' का उच्चारण पूर्वी में विवृत हो जाने से 'आ' के समान सुनाई पड़ता है और बंगला में वृत्ताकार होने से 'ओ' के समान सुनाई पड़ता है । इसी प्रकार उदयाचल (पूर्व) से निकला 'दिनकर' अस्ताचल (पश्चिम) में पहुँचकर 'दीनकर' (ह्रस्व 'इ' का 'ई') हो जाता है । 'य्' का उच्चारण मालवी में तो सुरक्षित है परन्तु बुन्देलखण्ड से कोसल और उसके पूर्व में संस्कृत के बड़े-बड़े प्रचण्ड पण्डित और विद्वान् 'य्' का शुद्ध उच्चारण नहीं कर पाते । वे 'आचार्य' को 'आचार्ज' और 'ये क्या' को 'जे का' ही बोलते हैं । भरत के अनुसार सुराष्ट्र, अवन्ति और वेत्रवती (वेतवा) के उत्तर के प्रदेशों की भाषा में च-कार की प्रधानता थी । चर्मण्वती (चम्बल) और उसके पार आबू तक के प्रान्तों में ट-कार की प्रधानता थी । और हिमालय, सिन्धु, सौवीर के बीच, अर्थात् शूरसेन, हिमालय का पहाड़ी प्रान्त (गढ़वाली-नेपाली) तथा उत्तरी राजस्थान से लेकर सिन्धु तक के देशों में की भाषाओं में उ-भार की बहुलता थी । सौराष्ट्र से अवन्ती तक च-कार और चम्बल से आबू तक ट-कार की ध्वनियों का उच्चारण संस्कृत से भिन्न था और भील-किरात-द्रविड़ से प्रभावित था । मालवी पर यह प्रभाव निश्चित रूप से पड़ा है; यह मैं ऊपर कह चुका हूँ । मालवी ए-कारान्त न होकर ओ-कारान्त है । यह ओ-कारान्त अपभ्रंश के उ-कारान्त से विकसित है, जो सारे उत्तर-पश्चिमी भारत की भाषाओं में समान रूप से मिलती है ।

भाषा के विकास की परम्परा में, इस प्रकार, मालवी का सम्बन्ध अपभ्रंश के उस अन्तिम रूप से है जिसमें पश्चिमी भारत के लोक-साहित्य का निर्माण नवीं और ग्यारहवीं शताब्दियों में हो रहा था और उस लोक-साहित्य की रचना के केन्द्र थे राजस्थान, गुजरात और मालवा । विक्रम की आठवीं और ग्यारवीं शताब्दियों के बीच यह भाषा गुजरात से लेकर प्रयाग-काशी तक पश्चिमी हिन्दी के रूप में विकसित हुई थी । मेरुतुङ्गाचार्य का 'प्रबन्ध चिन्तामणि' के अनेक प्रबन्ध मालवा के भाषा, साहित्य और इतिहास से सम्बन्ध रखते हैं । उनके अनेक प्रसंगों में उक्त भाषा के जो उद्धरण दिये गये हैं; उनमें मालवी प्रवृत्तियों को खोजा जा सकता है । इस दृष्टि से 'विक्रमांक प्रबन्ध', 'मुञ्जराज प्रबन्ध' और 'भोज-भीम प्रबन्ध' के कुछ दोहे उल्लेखनीय हैं :

१. नवि मारीयए, नवि चोरीयए, परदारगमण निवारीयए ।
थोवावि हु थोवं दईयए, इम सग्गि टगमगु जाईयए ॥

२. अम्मीणउ सन्देसडउ, नारय कन्ह कहिज्ज ।
जगु दालिद्दिहिं दुत्थियउ, बलिबन्धणह मुइज्ज ॥

दोनों दोहे 'विक्रमांक प्रबन्ध' के हैं । पहले में दुर्वृत्तियों का त्यागकर थोड़ा-सा भी दान कर 'टगमग' स्वर्ग जाने का मार्ग दिखाया है । यहाँ 'टगमग' (चटपट) एकदम देशज तो है ही, पर 'चोरीयए', 'दईयए' आदि में दीर्घ 'ई' से तुलनीय है । इसी प्रकार है 'कहिज्ज' > कहिजे > आधु. मालवी 'कीजे' (कहना) ।

'मुञ्जराज प्रबन्ध' में मुञ्ज के शौर्य और प्रेम की अपभ्रंश में रचित, करुणगाथा सारे राजस्थान, गुजरात और मालवा में गूंज उठी थी—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१. "रूलोयउ रायह राजु, तइ बइठइ मइ लघोयइ ।
ए पुणि वडउ अकाजु, तूं जाणे मालवधणी ।।"

इसमें 'तइ', 'मइ', 'ए', 'तूं' में मालवी सर्वनामों को खोजा जा सकता है, तथा 'तूं जाणे मालव धणी' को आधुनिक मालवी के निकट रखा जा सकता है ।

२. झोली तुट्टिवि किं न मूउे, किं न हूउे छारह पुञ्जु ।
हिण्डइ दोरी दोरियउे, जिम मङ्कडु तिम मुञ्जु ।।

इसमें 'मूउे', 'हूउे', 'दोरियउे' के का 'उेकारान्त' अपभ्रंश के उ-कारान्त की ओं-कारान्त में वृद्धि की प्रवृत्ति लक्षित है । इसका उच्चारण उ-कारान्त न होकर 'मूओं-हूओं-दोरिओं' होगा, जो मालवी के समान है ।

३. जा मति पच्छइ सम्यज्जइ, सा मति पहिली होई ।
मुञ्ज भणइ मुणालवइ, विघन न वेढइ कोई ।।

इसमें 'जा-सा' सर्वनामों के साथ सम्पूर्ण दोहा ही विकसित मालवी के निकट है ।

भोज की साहित्यचर्या तो अति प्रसिद्ध है । उसका तो भृत्यु भी तीनों संस्कृत, प्राकृत और अपभ्रंश में कविता करने में कुशल था । उसी भृत्य की तीनों भाषाओं में कविता देखिये —

बापो विद्वान् बाप पुत्रोऽपि विद्वान् ।
आई विउषी आई धुआपि विउषी ।।
काणी चेटी सा'पि विउषी वराकी ।
राजन् मन्ये विय्य पुञ्जं कुटुम्बम् ।।

यहाँ संस्कृत में भी उसने मालवी 'बापो' को प्रतिष्ठित किया है । 'बापो' में मालवी का ,ओ-कारान्त' सुरक्षित हैं । उस विद्वान् बाप के विद्वान् पुत्र की विदूषी माता ('आई', अब मराठी में गई) की कविता देखिये—

जई यह रावणु जाईयउ, दह मुहु इक्कु सरीरू ।
जणणि वियंम्भी चिन्तवइ, कवणु पियावउ खीरू ।।

इसमें 'जई यह' ('मालवी जदी यो') और 'जाईयउ' में 'ई' का पुरुषों की अपेक्षा दीर्घतर उच्चारण उल्लेखनीय है, जो मालवी स्त्रियों में आज भी सुन पड़ता है और इसकी उच्चारण प्रक्रिया में इसके पूर्व वर्ण का अल्प उच्चारण हो जाता है । कारण यहाँ लिखित इस उच्चारण का कोई अलग लिपि चिन्ह न होने से इस चरण में तेरह के स्थान पर पन्द्रह मात्राएँ दिखाई दे रही है । पुरुष वर्ग में 'करीलो, लईलो, काढ़ीदो' में 'ई' का जो उच्चारण सुन पड़ता है, वही दीर्घ 'ईकार' बलात्मक स्वराघात के कारण दीर्घतर सुनाई पड़ता है । सम्भवतः यह उसी प्रकार की प्रवृत्ति है, जैसे गुजराती में पुरुष कहना है— 'हुं जाउं छुं' और स्त्री बोलती है—'हू जाऊ छू' ।

अब उस 'काणी चेटी विदूषी वराकी' (एक आँख होने से वराकी भी एक आँख होने पर भी वर-अक्षि) की वराक सम्बन्धी कविता देखिये—

कवणिहिं विरहकरालियइं. उड्डाविउे वराउ ।
सहि अच्चब्भुअ दिठ्ठ मइं, कण्ठि विलुल्लइ काइ ।।

इसमें 'कवणिहिं'—कणीईं, 'उड्डाविउे'—उड़ावीओं, उड़ायो, 'दिठ्ठमइं—मैं देख्यो और 'काइ'—कांइ मालवी रूप है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भोज के राज्य (सं. १०८७) में कुलचन्द जैन दिगम्बर साधु की अतृप्त भोग-लालसा देखिये—

एहुजम्मु नग्गहं गियउे, भडसिरि खग्गु न भग्गु ।
तिक्खां तुरियां न मांडियां, गोरी गलिइ न लग्गु ।।

यहां 'एहु'=यो, 'गियउे'=गियो, गयो, 'भग्गु-लग्गु'—भागो-लागो आदि मालवी हैं।

मालवी की उन सभी प्रवृत्तियों का यहाँ उल्लेख करना सम्भव नहीं है, जो मुञ्ज और भोज के समय के अपभ्रंश साहित्य में मिलती हैं । उनका भाषा-वैज्ञानिक अध्ययन आवश्यक है ।

अन्त में मैं कालिदास की उस अवभ्रंश रचना में भी मालवी तत्वों की ओर लेजाना चाहता हूँ जो उसने 'विक्रमोर्वशी' नाटक में राजा पुरुरवा का उर्वशी के लिये विलाप में लिखी है ।

मइं जाणिउं मिअ-लोअणि, =मैं जाण्यो मृगलोचनी,
णिसि-अरु को' इ हरेइ, =निशिचर कोई हरेइ,
एमइं पुहवि भमन्तो जई पिअ पिक्खिहि मि=यूं भूमिभमतां जदि (जो) पिया देखी म्हारी
तव्वे जं जु करीहिसि तं तु सहीहि मि=तउ (तो) जो-जो करीसी (कर-इ) तो-तो सहिसि मैं
एत्थु रण्णे भमन्तें जई पइं दिट्ठी सा महुकंत्ता=अठे रणें (में) भमतां जदी थइ (थें) देखी बा—
म्हारी कांता
देक्खावहिं महु पिअअम महि-हरु =देखावेनी मने प्रियतम महिधर
तह विरह-समुद्दन्तरे उत्तारहिं मइं =तो विरह-समुद्रन्तरे उतारेनी मने
तुज्झह कारणे रण्णे भमन्ते =थारे कारणे रणे भमन्ता
को णहु पुच्छिउ मइं रोअन्ते =कोई न्ही पूछ्यो मने रोवन्ता,

मालवी बोली या लोक-भाषा के मूल उद्भव, विकास और स्वरूप स्थापन के लिए ऊपर दिये गये आधारों पर खोज-शोध, अनुसन्धान-अनुशीलन, अन्वेषण-विश्लेषण किया जा सकता है ।

मालवी-भाषा और साहित्य पर 'मालवी शोध संस्थान' द्वारा बहुत कुछ कार्य हो सकता है । इस सम्बन्ध में मैं कुछ सुझाव देना चाहता हूँ—

१. मालवी भाषा और साहित्य सम्बन्धी ग्रन्थों, अभिलेखों, शिलालेखों तथा ताम्र-पत्रों की खोज, और उनका संग्रह, अध्ययन और अनुशीलन और प्रकाशन ।

२. महत्वपूर्ण ग्रन्थों के आलोचनात्मक संस्करण तैयार करवाना और उनका प्रकाशन ।

३. खोज में प्राप्त तथा अन्यत्र संग्रहीत मालवी के हस्तलिखित ग्रन्थों, अभिलेखों, शिलालेखों तथा ताम्रपत्रों के सन्दर्भपूर्ण विवरण और विवेचन पूर्ण सूचियां प्रकाशित करना।

४. मालवी ग्रन्थों के आधार पर मालवी भाषा और साहित्य का अध्ययन, अनुशीलन, अनुसन्धान-अन्वेषण और खोज शोध कर मालवी भाषा और साहित्य का इतिहास तैयार करना ।

५. प्राचीन मुद्राओं, शिलालेखों तथा अन्य आधारों और भूमि सर्वेक्षण द्वारा प्राचीन नामों का भाषा-वैज्ञानिक अध्ययन कर मालवा की जातियों, संस्कृति, सभ्यता और इतिहास का उद्घाटन करना ।

हिन्दी-विभाग
माधव कॉलेज, उज्जैन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संदर्भ संकेतः–

१ एन्साइक्लोफीडिआ ब्रिटेनिका ११ वां संस्करण खण्ड २, पृ. ३५

२ देखो-एल्. जे. ब्लन्ट-भीली ग्रामर

३ "Apart from the tradtions Sama is the most archaic of all Polinasian tongues and still preserves the organic letter 'S' which becomes 'H' or disappears in nearly all other archipelagos."

—Encyclopaedia Britanica Vol. XXIV, P. 115, 11 th. Edn.

४ पुराणों और महाभारत में उल्लिखित 'सौद्युम्न' जाति निषाद से ही सम्बन्धित थी।

५ "आर्य और द्रविड़ जैसे प्रतापी और सुसभ्य जाति के मनुष्यों के सामने पराजित होकर जो Austric या निषाद-लोग मध्यभारत के पहाड़ और जंगलों में भाग गये थे; और वहाँ शिकार और खेती करके जीवन-यापन करते थे, वे ही बाद में 'कोल्ल' या कोल और 'भिल्ल' या भील कहलाये।"

डॉ. सुनीतिकुमार चाटुर्ज्या : भारत में आर्य और अनार्य, पृ. ११

६ "एवमेतत्तु विज्ञेयं प्राकृतं संस्कृतं तथा।
अतः ऊर्ध्वं प्रवक्ष्यामि देशभाषा प्रकल्पनम्॥
मागध्यवन्तिजा प्राच्याशूरसेन्यर्धमागधी।
बाह्लीका दाक्षिणात्या च सप्त भाषा प्रकीर्त्तिता।"

७ उदीच्य पश्चिम पंजाब की बोली थी। यह ऋग्वेद की साहित्यिक भाषा 'छान्दस्' का आधार थी और ईरानी-जेन्द-अवेस्ता-के बहुत निकट थी। इसमें ईरानी के समान ही 'र्' ध्वनि थी और 'ल्' ध्वनि नहीं थी; 'घ्', 'ध्', 'भ्' महाप्राण ध्वनियों के केवल 'ह्' का उच्चारण होता था; और मध्यग-'ड्'-'ढ्-' मूर्द्धन्य '-ळ्'-'ळ्ह-'की ओर झुकता हुआ उच्चारण होता था। मध्यदेशीय, ब्राह्मण ग्रन्थों के समय प्रचलित वैदिक बोली थी। इसमें 'र्' और 'ल्' दोनों का उच्चारण होता था। मध्यग'-ड-' और '-ढ-' का भी शुद्ध उच्चारण होता था। प्राच्य बोली में 'र्' का उच्चारण नहीं था, उसके स्थान पर केवल 'ल्' का उच्चारण होता था। यह क्षेत्र धीरे-धीरे आर्यभाषा के प्रभाव में आ रहा था। इसीसे मागधी प्राकृत का विकास हुआ था।

८ देखो-सभापर्व ३८।२९; भीष्म पर्व ९।१४३।

९ देखो–सभा पर्व ५१।२४।

१० देखो–सभापर्व ३२।७, ३४।११, ५२।१५, : वन पर्व २५४।२०, २९७।५९–६०; भीष्म-पर्व ९।६०, ६२, ५९।७६; द्रोण पर्व ११।१७, १९।१६, ७१-११-१२, १५७।२८।

११ दशार्ण का उल्लेख महाभारत आदि पर्व ११२।१५, सभापर्व १९।१५, ३३।७, वनपर्व ६९।१३-१६, उद्योग पर्व १८९ अध्याय से १९२ तक, भीष्म पर्व ९।४१-४२, ५१।१९ तथा आश्वमेधिक पर्व में मिलता है। प्राचीन काल में दशार्ण के राजा सुदामा की एक पुत्री विदर्भ नरेश के भीम को ब्याही थी, जिससे दमयन्ती का जन्म हुआ था। महाभारत के प्रसिद्ध पांचाल नरेश द्रुपद के स्त्री-रूप पुत्र शिखण्डी का विवाह समकालीन दशार्ण नरेश हिरण्यवर्मा की पुत्री से हुआ था। यह दशार्ण जनपद दो भागों में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विभाजित था—एक पूर्वी और दूसरा पश्चिमी। पूर्वी भाग में वर्तमान छत्तीसगढ़ तथा पश्चिमी भाग में भोपाल राज्य का क्षेत्र सम्मिलित था। विन्ध्य पर्वत के पूर्व-दक्षिण में इसकी सीमा घसान नदी तक मानी जाती थी। मेघदूत की रचना के समय विदिशा (या आधुनिक भेलसा) इसकी राजधानी थी।

१२ चित्तौड़ के पास प्राचीन 'नगरी' शिबि जनपद की राजधानी थी। यह जनपद मझिमिका। (=मध्यमिका, महाभारत का माध्यमिक देश या जनपद' इसी' नगरी' में प्राप्त इसके एक सिक्के पर :मझिमिकाय-शिबिजनपस्स' लिखा मिलता है।

१४ 'तान् दशार्णान् स जित्वा च प्रतस्थे पाण्डुनन्दनः।
तथा माध्यमिकांश्चैव वाटधानान् द्विजानथ।....' सभापर्व अध्याय ३२॥

१५ रावी, चिनाव और झेलम के बीच स्थित शल्य का राज्य।

१६ राजा शिबि के त्याग की कथा प्रसिद्ध है।

१७ देखो–गौरीशंकर हीराचन्द ओझा–नागरी प्रचारिणी पत्रिका वर्ष १, भाग ३, पृ. ३३४।

१८ देखो=सं. सन्ध्या > प्रा. संझा > मालवी संजा; सं. उपाध्याय < प्रा. उवाझाय > ओझा > झा; विन्ध्याचल > राज. वींझाचल।

१९ पैशाची की मुख्य प्रवृत्तियाँ : ज्ञ का ञ्ञा, न्य और ण्य का ञ्ञ, ण का न, क का ग, ख का घ, द का त, ल का ल, ट का द उच्चारण। विशेष के लिये देखो हेमचन्द्र कृत 'प्राकृत व्याकरण' सूत्र ३०३ से ३२४।

२० देखो वही–सूत्र ३०६–'णो नः'।

२१ कालिदास की रचना के कुछ उदाहरण–णिसि-अरु, पवणुव्वेल्लिर, णच्चइ, पलाविणि।

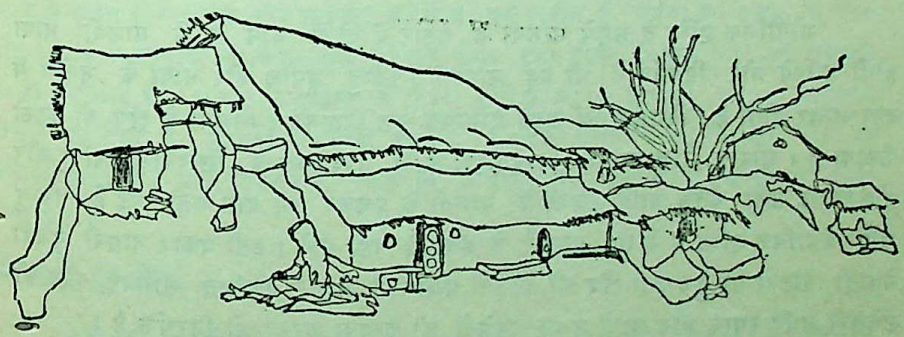

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मालवी भाषा– एक विहंगम दृष्टि

डॉ० चिन्तामणि उपाध्याय

किसी भाषा या बोली की यथा-स्थिति के सम्बन्ध में तथ्यात्मक विचार प्रकट करने के लिए कुछ ठोस प्रमाणों की आवश्यकता होती है, सामान्य जनता में प्रचलित एवं जीवित भाषा का अध्ययन पुस्तकस्था विद्या की पद्धति पर नहीं किया जा सकता। व्याकरण शास्त्र की जटिलताओं में उलझना लोकभाषा की प्रकृति में ही नहीं है अतः बोलचाल की किसी भाषा के सम्बन्ध में सम्यक् जानकारी के अभाव में कुछ कह देना उचित नहीं माना जाता।

लोकभाषा सम्बन्धी सम्यक् जानकारी प्राप्त करने का एक ही साधन विश्वसनीय हो सकता है, और वह है क्षेत्र विशेष की बोलियों का सर्वेक्षण, बोली जाने वाली भाषा में उच्चरित ध्वनियों की स्थिति का अंकन। इस दृष्टि से मालवी भाषा के वैज्ञानिक अध्ययन का क्षेत्र आज भी अछूता ही कहा जाएगा। सन् १९०७-८ के लगभग डॉ. ग्रियर्सन ने सम्पूर्ण भारत की विभिन्न भाषा और बोलियों के सर्वेक्षण का एक महत्वपूर्ण कार्य अपने हाथ में लिया था उसी संदर्भ में मालवी क्षेत्र का भाषागत सर्वेक्षण हुआ और वह भी अप्रत्यक्ष पद्धति के आधार पर तुलनात्मक एवं विवरणात्मक दृष्टि से भाषा-शास्त्रियों को प्रथम बार मालवा में प्रचलित मालवी बोली का परिचय प्राप्त हुआ। किन्तु समूचे मालवी क्षेत्र का सर्वेक्षण आज तक नहीं हुआ। और इसके अभाव में मालवी भाषा सम्बन्धी व्यक्तिपरक प्रयास के आधार पर सतही जानकारी ही दी जा सकती है।

मालवी का क्षेत्र विस्तारः--

भौगोलिक दृष्टि से समूचे मालवा के पठार में बोली जाने वाली मालवी भाषा होनी चाहिये और ग्रियर्सन ने भी यह माना है। किन्तु भूगोल और भाषा के भूगोल में बड़ा अन्तर होता हैं। ग्रियर्सन एवं उनसे प्रभावित कुछ विद्वानों ने मालवी के क्षेत्र को काफी फैलाया है। भोपाल, राजस्थान का निम्बाहेड़ा, भू. पू. मध्यप्रान्त के छिन्दवाड़ा, चांदा और होशंगाबाद तथा बैतूल आदि जिलों में मालवी के प्रचलन की बात कही गई है। किन्तु भाषा वैज्ञानिक दृष्टि से ये क्षेत्र मालवी के अन्तर्गत नहीं आते। इसी प्रकार नागरी, गूजरी मेवाती, पाटवी या गुजराती क्षेत्र की पटलूनी पंजाब के क्षेत्र में प्रचलित मालवइ, कोटे की डंगेसरी आदि स्थान और जाति सूचक उपभेदों की कल्पना करना भी निरर्थक है।

वस्तुतः आज के मध्य-प्रदेश के निम्नलिखित जिलों में मालवी भाषा की अवस्थिति मानना उचित होगा—

(१) उज्जैन, इन्दौर और देवास जिले, (२) रतलाम, मन्दसौर जिले,

(३) धार और झाबुआ जिले, (४) शाजापुर, राजगढ़ और सीहोर जिलों में।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इन्दौर और उज्जैन जिले में शुद्ध मालवी के मध्यवर्ती क्षेत्र कहे जाएँगे। इसके साथ ही देवास जिला (कांटाफोड़ और कन्नोद आदि को छोड़कर) शाजापुर जिला (आगर और सुसनेर को छोड़कर) भी मध्यवर्ती मालवी के क्षेत्र हैं। रतलाम, मन्दसौर एवं झाबुआ जिले का शहरी भाग रजवाड़ी अथवा रांगड़ी का क्षेत्र माना जाएगा। मालवी का भाषगत यह राँगड़ी रूप एक विशिष्ट परम्परा एवं संस्कृति का भी परिचायक है। नाम से ही स्पष्ट है कि रजवाड़ी या राँगड़ी, राजस्थानी भाषा से प्रभावित है। मालवी राजपूतों की परम्परा एवं सम्बन्ध प्रायः राजस्थान के साथ जुड़ा हुआ है। और इस रजवाड़ी परम्परा का प्रवेश अधिक पुराना नहीं है। अतः यह स्वाभाविक ही है कि इन्दौर, उज्जैन, रतलाम, मन्दसौर, शाजापुर आदि जिलों के राजपूती ठिकानों के क्षेत्र की भाषा पर राजस्थानी का प्रभाव परिलक्षित होता है। किन्तु मालवी और रांगड़ी के क्षेत्र की अलग से कोई सीमा रेखा नहीं बनाई जा सकती। उज्जैन एवं इन्दौर के ग्रामीण क्षेत्रों में मालवी और रांगड़ी सम्मिलित रूप से बोलते हैं। रतलाम और मन्दसौर जिले का भाग शुद्ध राँगड़ी का क्षेत्र कहा जा सकता है। झाबुआ की शहरी एवं मध्यवर्गीय जनता रांगड़ी का ही प्रयोग करती है। धार जिले का समूचा क्षेत्र भी मालवी का क्षेत्र नहीं कहा जा सकता है। क्योंकि उसके पहाड़ी क्षेत्र की आदिवासी जनता भी भीली या भिलाड़ी बोलती है। सीहोर जिले का पूर्वी और दक्षिणी भाग बुन्देली से प्रभावित है। इस क्षेत्र में मालवी और बुन्देली का मिश्रित रूप पाया जाता है। इस क्षेत्र के ब्राह्मण एवं मध्यवर्गी परिवार शुद्ध मालवी का प्रयोग करते हैं।

शाजापुर जिले का आगर और सुसनेर का क्षेत्र तथा उज्जैन के महिदपुर का उत्तरी क्षेत्र, चोमेला मंडी और मन्दसौर जिले की गरोठ तहसील में चम्बल का पूर्वी दक्षिणी भाग तथा राजगढ़ जिले के पश्चिमी क्षेत्र में सोंधवाड़ी का प्रचलन है। मालवा का पूर्वी-क्षेत्र उमठ जाति के राजपूतों की बसावट के कारण उमठवाड़ कहलाता है। इसमें भू. पू. मध्य-भारत राज्य के राजगढ़, नरसिंहगढ़, छापीहेड़ा आदि राजपूतबहुल क्षेत्र के साथ ही खिलचीपुर, जीरापुर और माचलपुर का पूर्वी भाग सम्मिलित है। राजपूती क्षेत्र होने के कारण उमठवाड़ी और रजवाड़ी में कोई विशेष अन्तर नहीं है। केवल दिशा सूचक शब्द में ही असामान्य भिन्नता है। जो मालवी के अन्य उपभेदों में नहीं पाई जाती। मालवा पठार से अलग विन्ध्याचल और सतपुड़ा के बीच एक अंचल में नर्मदा के उत्तर में, धार और दक्षिण में बड़वानी को लेकर कुछ पूर्व तक फैला हुआ प्रदेश निमाड़ है। जो मालवा का ही ठेठ भाग है। मालव के दक्षिण में स्थित होने के कारण निमाड़ी को हम दक्षिणी मालवी कह सकते है। मालवी के राँगड़ी उपभेद की तरह निमाड़ी का विस्तार क्षेत्र भी अधिक व्यापक है। डा० ग्रियर्सन ने स्पष्ट ही निमाड़ी को मालवी से सम्बन्धित बोली माना है।

मालवी के भेदः—

मध्यवर्ती मालवी को प्रमुख मानकर उच्चारण एवं व्याकरण सम्बन्धी यत् किंचित विभिन्नताओं को ध्यान में रखते हुए निम्नलिखित उपभेद ही प्रमुख हैं।

मध्यवर्ती मालवी

(१)रांगड़ी····(२)सौंधवाड़ी····(३)उमठवाड़ी····(४)निमाड़ी (दक्षिणी मालवी)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मालवी के सामान्य लक्षणः—

१ **ओकार बहुल प्रवृत्तिः**–सामान्यतः आकारांत शब्दों को मालवी में 'ओ' कारांत उच्चारित करते हैं। यह एक वचन का द्योतक होता है। यह ओकार बहुल प्रवृत्ति मालवी में अधिक व्यापक है। यदि आकारांत शब्द का प्रयोग होगा तो वह बहुवचन का सूचक होता है।

२ राजस्थानी की तरह मालवी में भी "ऐ" और "औ" ध्वनियों का उच्चारण 'ए' और 'ओ' होता है यथा गौरी > गोरी, चैन > चेन, है > हे। इसी तरह 'ई' इ का उच्चारण 'अ' ध्वनि में परिवर्तित हो जाता है। जैसे मिट्टी > मट्टी, हरिण > हरण, दिन > दन, आदि।

३ 'उ' ध्वनि भी 'अ' में बदल जाती है। जैसे कुंवर > कँवर, ठाकुर > ठाकर।

४ महाप्राण ध्वनियों को प्रायः बदल दिया जाता है–यथा काढ़ो > काड़ा, भी > बी, लीधो > लीदो, अढ़ाई > अढ़ाइ (अढइ), दूध > दूद।

५ शुद्ध मालवी में दन्त्य 'न' मूर्धन्य 'ण' में परिवर्तित नहीं होता। यह प्रवृत्ति मालवी के अन्य उपभेदों में नहीं पाई जाती। उसमें 'न' का 'ण' हो जाता है।

६ शब्दों को बहुवचन का स्वरूप देने के लिये 'होण' 'होना' आदि परसर्ग जोड़ दिये जाते हैं। यथाः—नाना होन, नाना होनों, लोग होन, बइरा होन, छोरा-छोरी होन आदि।

७ नेपाली का परसर्ग 'हरु' 'हेरु' आदि तुलनात्मक दृष्टि से विचारणीय हैं।

८ इसी तरह बहुवचन सूचक परसर्ग 'ना' का भी मध्यवर्ती मालवी में प्रयोग होता है यथाः–आदमीना, लोगना, लुगाइना।

९ संस्कृत भाषा की संयोगान्त प्रवृत्ति के कुछ शब्द भी उल्लेखनीय हैं। यथा माथ (मस्तक पर), साथ, साँथे (साथ में), आदीराते (आधी रात में) घरे (घर में)।

१० य और ब को ज और व में परिवर्तित कर बोलने की सामान्य प्रवृत्ति भी पाई जाती है।

११ 'और' शब्द के लिये गुजराती की तरह ने, अने, अन आदि शब्दों का भी प्रयोग व्यापक है।

रांगड़ीः–

मेवाड़ी के सम्बन्धकारक परसर्ग रा-री, रांगड़ी में भी सामान्यतः प्रयुक्त होते हैं। जबकि मध्यवर्ती मालवी में का-की आदि का प्रचलन है।

(१) 'ण' और 'ळ' की मूर्धन्य ध्वनियां रांगड़ी में विशुद्ध रूप से प्रचलित हैं। मालवी में 'न' का उच्चारण 'ण' नहीं होता।

रांगड़ी	मालवी
वेणो	होनो
अपणा	अपना
पाणी	पानी
सूणो	सूनो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(२) 'स' के स्थान पर 'ह' का उच्चारण भी रांगड़ी का एक सामान्य लक्षण है।

(३) रांगड़ी में भूतकालीन क्रिया 'था' के लिये 'थको' शब्द का प्रयोग होता है। जैसे–हूँ गयो थको (मैं गया हुआ था) ऊ आयो थको (वह आया था)।

(४) कहीं-कहीं पर क्रियाओं में गुजराती प्रभाव भी परिलक्षित होता है—यथा कीधो, कीदो, लीदो आदि का गुजराती में भी प्रचलन है यथा–यो कई कीदो, लाकड़ा को लीदो (एक गाली)।

(५) राजस्थानी की तरह रांगड़ी में 'जी' और 'सा' परसर्ग का प्रयोग आदर-सूचक होता है। जैसे भाभासा, (पिताजी) मामासा, (मामासाहब) काकीसा, भईजी, सुसराजी आदि।

(६) कभी-कभी नामोच्चारण के अभाव में 'जी' और 'सा' का संयुक्त प्रयोग भी होता है यथा-जी सा म्हने कद कयो (जी साहब मैंने कब कहा)।

(७) राँगड़ी में कर्णकटु ध्वनियों का प्रयोग अधिक होता है। राजस्थानी परसर्ग ड़ा–ड़ी आदि का प्रयोग मालवी की मार्दवता को कम कर देता है। यथा जीमाड़ो, बताड़ो, खवाड़ो, तलावड़ी, रातड़ी, बातड़ी आदि।

मन्दसौर क्षेत्र की भाषा में दो विशिष्ट शब्दों का प्रयोग होता है 'हन्डे' और 'कन्डे' जिसका अर्थ होता है 'साथ में' और 'कहां'। यह मन्दसौर के पूर्व में स्थित राजस्थानी और प्रतापगढ़ी भाषा का प्रभाव कहा जाएगा इसी प्रकार मन्दसौर एवं सौंधवाड़ के ग्रामीण क्षेत्रों में एक उल्लेखनीय शब्द का प्रयोग होता है 'मागा' जिसका अर्थ होता है 'स्थान' या जगह।

सौंधवाड़ीः–

मराठी, सिंधी आदि में प्रचलित मूर्धन्य 'ण' की ध्वनि सौंधवाड़ी में भी लक्षणीय है। यथा समजणो (समझना), रोणो-धोणो, (रोना-धोना), कणी-कुण, (कौन), राचणी (जिसका रंग उभर जाय)।

१ सौंधवाड़ी में मालवी 'ब' का प्रायः 'व' उच्चारण होता है यथा वात (बात), वनड़ा (बनड़ा), वाट (बाट), यह प्रवृत्ति गुजराती में भी पाई जाती है। दन्त्य 'ल' का उच्चारस भी मूर्धन्य 'ळ' होता है। यथा गळे (गले) थाळ (थाल) धुँगरमाळ (माल) पीपळी (पीपली)।

२ राँगड़ी की तरह सकार के स्थान पर हकार का प्रयोगः—हगरा हारु (सगला-सारु), तीह (तीस), हांझ (साँझ), हुपनो (सपनो), हुवागण (सुवागण)।

३ भ का ब उच्चारण यथा भाभी (भाबी) शोभ (होब)।

४ दिशा सूचक सर्वनाम में भी सौंधवाड़ी सामान्य मालवी से कुछ अलग ही है। यथा कें ग्यो थो (कहाँ गया था), वें ग्यो थो (वहाँ गया था) अव्यवस्थित रूपः—क्याँड़ी (कहाँ), अयाँड़ी (इधर-यहां), पेलाड़ी (उधर), उल्याड़ी (इस ओर), मेरे (निकट, पास)।

उमठवाड़ीः–

कुछ एक प्रवृत्तियाँ उमठवाड़ी को मालवी के अन्य उपभेदों से अलग करती हैं, यथा अनांग (इधर), ऊनांग (उधर), कनाँग (किधर), जनाँग (जिधर), पेलाँग (उस पार या उस ओर। ओलाँग (इस पार या इस ओर)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१ राजस्थान के कोटा राज्य के दक्षिण में उमठवाड़ स्थित है । अतः इस पर हाड़ोती बोली का प्रभाव भी लक्षित होता है । कोटा के निकट डाँग के क्षेत्र की बोली उमठवाड़ी के अन्तर्गत आती हैं । ग्रियर्सन एवं समीरजी ने उसे डंगेसरी नाम दिया है ।

२ उमठवाड़ी में 'द' और 'घ' ध्वनि का उच्चारण 'त' और 'द' होता है । जैसे हात-हाथ, दूध-दूद, साँत-साथ, रांद्यो-रांधा (पकाया) ।

३ 'मैं' परसर्ग के स्थान पर उमठवाड़ी में 'है' का प्रयोग होता है यथा--वाड़ा है (बाड़े में), घरहे (घर में) ।

४ 'क्ष' वर्ण 'क' और 'ष' ध्वनियों का सम्मिलित रूप है और उच्चारण में असुविधा होने के कारण 'क्ष' में निहित 'ष' ध्वनि का लोप हो जाता है ।

हिन्दी-विभाग
माधव महाविद्यालय उज्जैन

• •

वर्तमान मालवी भाषा भाषी क्षेत्र

हाल ही में संचालक जनगणना मध्य-प्रदेश के प्रकाशित काम चलाऊ विवरण १९७१ ❀ के आधार पर मालवी भाषाभाषी क्षेत्र की जनगणना में से १०% कम करके मूल्यांकन किया जाय तो मालवी भाषियों की अनुमानिक संख्या का पता लगाया जा सकता है:—

		जन संख्या		
		कुल	ग्रामीण	शहरी
(१)	मन्दसौर	९६१,५२६	७६६,९६४	१९४,५६२
(२)	रतलाम	६२५,११८	४४४,४९३	१८०,६२५
(३)	उज्जैन	८६२,७७७	५५५,२८८	३०७,४८९
(४)	झाबुआ	६६७,९४४	६१९,०९१(×)	४८,८५३(½)
(५)	धार	८४१,४९५	७५५,८७१ (¾)	८५,६२४
(६)	इन्दौर	१,०३६,३३२	३८१,७२६	६५४,६०६
(७)	देवास	५९३,७९८	४९८,९२०	९४,८७८
(८)	शाजापुर	६७७,५७८	५९९,७८३	७७,७९५
(९)	राजगढ़	६४५,८५५	५८४,०७२	६१,७८३
(१०)	सीहोर	१,०८५,११९	८२८,७०८	४५६,४११(½)

❀ Serieo-10 Census of India 1971 (Madhya Pradesh) paper 1 of 1971 (Supplement) Provisional Population Totals—A. K. Pandya of India Administrative service. Director of census operations Madhya Pradesh.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Telegram : 'BHARAT' BIRLAGRAM Phone : 23 & 73 [NAGDA]

" BHARAT "

STAPLE FIBRE YARN

It will pay you to use superior and popular quality

BHARAT STAPLE FIBRE YARN

Manufactures in all counts of every requirement 20s, 30s, 2/30s, 2/40s, 2/60s, 3/80s Gassed, Fancy, Dyed, Terene and other synthetic yarns on cones as well as in hanks—

For further details contact :

Staple Fibre Yarn Division,
Bharat Commerce & Industries Ltd.,
Birlagram, Nagda (W. Rly) (M. P.)

Regd. office :

Industry House (9th. Floor)
10, Camae Street,
Calcutta-17

Branches

1. Kiran Spinning Mills, Thana (Maharashtra)
2. Bharat Commerce & Industries Ltd. Rajpura (Punjab)
3. Sujata Textile Mill, Nanjangud (Mysure)

Agents for Madhya Pradash—

M/s. Gajanand Gopikishan

108, Jawahar Marg,
INDORE Phone : 32586

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

WITH GREETING & FOR DIPAWALI

& NEW YEAR TO OUR PATRONS FROM:—

JASH ENGINEERING INDUSTRIES

INDUSTRIAL ESTATE, POLOGROUND, INDORE-3 M. P.

Phone : **31786** Telegram : 'JASH' INDORE

MANUFACTURERS

- PRECISION SURFACE EQUIPMENT.
- WATER CONTROL EQUIP MENT.
- GREY IRON CASTING 10 TONS EACH.
- ROAD ROLLER RIMS.
- SPECIFIC JOB ORDERS.

Please also contact us for :

STRESS RELIEVING WORK, GRINDING OF PRINTING PRESS & GINNING PRESS KNIEVES & CHEMICAL ANALYSIS OF CAST IRON & STEEL.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फोन ७४८६, ६१२६, ७६८७ तार-"स्वदेशी"

जग मग ज्योति जले दीपोत्सव के शुभ अवसर पर,
हमारे ग्राहकों एवं शुभ चिन्तकों को अनेकानेक बधाइयाँ

दि स्वदेशी काटन एन्ड फ्लोअर मिल्स लि.

७, शीलनाथ केम्प, इन्दौर-३ (म. प्र.)

शासकीय अधिकृत नियंत्रक द्वारा संचालित उपभोक्ताओं के नियंत्रित कपड़े की सरलता से उपलब्धि हेतु दिनांक २६-६-७१ से रिटेल शांप महाराजा तुकोजीराव क्लाथ मार्केट सिंगी गोदाम नवीन चित्रा टॉकीज की गली में आरम्भ की जा चुकी है।

जिसमें स्वदेशी मिल, हीरा मिल और न्यू भोपाल
टेक्सटाईल मिल नियंत्रित कपड़े का विक्रय होता है।

दीपावली पर नव वर्ष की शुभ कामनाएं

दि कल्याण मिल्स लि.

१५ शीलनाथ केम्प, इन्दौर, म. प्र.

सन् १९२३ से सतत् कार्यरत वस्त्रोद्योग

दूर लेख : मिल्स

दूरभाष : ६५५१, ७४५७, ६०८१
कपड़ा दूकान ३१४०८

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ग्वालियर रेयन

ने गत वर्ष

६४,१२० टन रेयन ग्रेड पल्प

५८,४५६ टन स्टेपल फायबर

वस्त्र उद्योग के लिये उत्पादित कर राष्ट्र की
१० प्रतिशत आवश्यकता की पूर्ति की

एवं

३,५५० लाख रु. की विदेशी मुद्रा की
बचत की

जिसमें

१६,५०० श्रमिकों का, ७५० तांत्रिकों का,
१२,७०० अंशधारियों का,

एक अच्छी प्रबन्ध व्यवस्था का

एवं

सभी शुभ चिन्तकों की शुभ कामनाओं का
योगदान है।

ग्वालियर रेयन, बिरलाग्राम (नागदा) द्वारा प्रसारित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मालवा का साहित्य और संस्कृति

श्यामू संन्यासी

बरसों पहले की बात है। मालवी लोकगीतों और लोक कथाओं की खोज और संकलन के लिए 'कांधे खड़िया और हाथे लकड़िया' के बाने में गाँव-गाँव घूम रहा था। उन्हीं दिनों रेल-मार्ग, मोटर-मार्ग और पक्की सड़क से भी बहुत दूर किसी गाँव में एक डोकरी मां ने गीत और कथाएँ सुनाने से पहले, भूमिका बाँधते हुए, कहा था :—

"नाना, हुं तमारे आगे मुलक मालवा को कईं बखाण करूं ! गोरा पारबती को मौसाल है मालवो तो। यां की जगा नी तो सूखो काल पड़े और नी तो गीलो-लीलो काल। ऊ कईं केवे, पग-पग रोटी ने मग-मग नीर; माता पारबतां का आसरीवाद है इनी धरती के। अन-धन का तो भंडार भर्‌या है यां की जगे। चारी तरफ लीलोतरी-पानोतरी लूमीरई है। बखत-बखत पर उनालो तपे अन सियालो सिरे अन चौमासा में पाणी नी अमरित समझो तो अमरित और मोतीड़ा समझो तो मोतीड़ा झिरे। और नाना, इनी धरती की बरकत हुं तमारे कईं कऊं खोज जाता खूणो भी रई जाय तो ऊ भी नियाल करीदे।"

और गीतों के बारे में उन्होंने कहा था 'ए लिखता-लिखता तमारा पानड़ा को छे अई जायगा, पण गीतां को छे नी हे·····जरण का, परण का ओर मरण का गीत तो हे ज, सांथे सांथे रातीजगा का, घट्टी का, सती माता का, वार-तेवार का, सूरापूराजी ओर नाग माराज का, संझा का, झूला-हिंडोला का, चन्द्रसखी का, आरती-पूजा का और गरबा का ज छप्पन सो न साठ गीत हुई जायगा। ऊपर से हीड़, तेजाजी, रामदेवजी, जसमा, गोपीचन्द भरथरी, भवई, नोटंकी डूंगसिंह, गोगाजी, माच—हुं कां तलक गिणाऊँ म्हारा वीर·····—"।

डोकरी माँ ने उस दिन अपनी लाक्षणिक शैली में मालवी संस्कृति के मूलाधार-धरती और जन का तथा मालवी साहित्य की विपुल व्यापकता का नखचित्र ही प्रस्तुत कर दिया था। आज इस लेख का नूता भुगताने के लिए सीधा सामान जुटाने बैठा तो चौथाई शताब्दी पहले के आलेखों और टिप्पणों के बस्तों-पोटलियों के अम्बार में खोजता-उलझता मन पुरानी स्मृतियों की गाड़ी-गरवटों और पगवाटों पर अनायास ही दौड़ने लगा। अपेक्षित सन्दर्भ खोजते हुए क्षणार्ध में मन-तुरंग कितने कुएँ-बावड़ियों पर ठिठका, कितने आम-इमलियों की छाया में विरमा, कितनी पडारों और आँगनों में एककर्ण हुआ, कितने ढोल-तासों पर ठुमका और कितने बने-बनड़ों पर मरवा-मोगरा बनकर खिला-फूला और गन्ध सुगन्धपूरित हुआ, इसका लेखा-जोखा प्रायः असम्भव ही है। उस सबको समेटने सहेजने की कोशिश में इन छपे पानड़ों का छे आ जाएगा, पर मालवी साहित्य की ही तरह उन अनुभूतियों का भी छे नहीं है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

• साहित्य और संस्कृति का अपने-अपने नामों के अन्तर्गत स्पष्ट विभाजन करके उन्हें अलग-अलग देखना और समझना कम से कम मेरे लिए तो सम्भव नहीं ही है। किसी भी जन का साहित्य उसकी संस्कृति को ही ध्वनित और प्रतिध्वनित करता है; और जन-विशेष की संस्कृति उसके साहित्य का ही चर्यामय (या आचरित) स्वरूप हैं। संस्कृति और साहित्य के निर्णायक तत्व हैं जन-विशेष की धरती, वहाँ का जलवायु और जीवन धारण के लिए उस जन द्वारा किये जाने वाले उत्पादक श्रम की पद्धति। ये तीनों तत्व संयुक्त रूप से जन विशेष की ऐतिहासिक नियति के जनक हैं और इसीलिए उसके साहित्य-संस्कृति के अभिप्रेरक तत्व हैं। मूलतः जन की अर्थ व्यवस्था ही उसके सामाजिक व्यक्तित्व को बनाती है और उसका आर्थिक-सामाजिक परिवेश उसके भावना जगत् को रूपायित और विकसित करता है।

मालवा की भौगोलिक स्थिति, मालवा की जलवायु, यहाँ के वृक्ष वनस्पति और यहाँ के कृषि कर्म एवं अन्य उद्योगों ने मालवी-साहित्य और संस्कृति को अपना विशिष्ट रूप प्रदान किया है। संस्कृति इस भू-भाग में जन-जीवन का अविच्छिन्न अंश बनकर रही है, ओढ़ने और प्रदर्शन की वस्तु बनकर नहीं। और इसीलिए मालवी जन सही अर्थ में अपनी संस्कृति जीता है।

• पठार पर और भारत देश के मध्य भाग में बसा हुआ है यह 'पार्वती का ननिहाल'। पठार होने के कारण यह प्रदेश अपने समीपवर्ती सभी प्रदेशों से सहज ऊंचाई पर अवस्थित है। यह प्राकृतिक विशेषता मालवी जन–मन को एक स्वाभाविक उच्चाशयता और गरिमा से मण्डित करती है। लेकिन देश का हृदय-स्थल होने के कारण स्थान की ऊँचाई अहम्मन्यता और हेकड़ी के दुर्गुणों से बचाती भी है। तथा सहृदयता का परिपाक करती रहती है। लावा की पठारी चट्टान पर चढ़ी काली मिट्टी की गहरी परत है इस प्रदेश की धन संपदा का मूलाधार। यह मिट्टी कृपण की तरह अपनी ओर भींचकर, अपनी सतह को ढंक मूंदकर रखना नहीं जानती। मेघा राजा के बरसाये जल को आकण्ठ पानकर परितृप्ति और कृतज्ञता से हृदय के रुद्ध द्वारों को उन्मुक्त कर देती हैं और सूरज की सृजक किरणों को सीधे अपने अन्तस्थल में ग्रहण करती है, अन्यान्य मिट्टियों की तरह केवल अपने सतही भाग पर ही झेलकर नहीं रह जाती। दरकना ही है इसका वरदान मिट्टी की जो सतह ऊपर से रूखी, अरूप और क्षत-विक्षत दिखाई देती है। वह अपने अन्तस में सदा सर्वदा सृजनशीलता के लिए अपरिहार्य ऊष्मा और आर्द्रता को सहेजे और सँजोये रहती है। अपनी कोंख से अठारहों किस्म के अनाज और अनगिनत वृक्ष वनस्पति को उपजानेवाली इस मिट्टी की सन्तान भी ठीक इसीके जैसी ऊपर से कुछ रूखी और अटपटी, पर अन्तर से अखूट रस भरी, स्नेह सिक्त और प्रतिदान परायण है।

यह मिट्टी किसी को जाकारा नहीं देती; एक ही वर्षा में हरित-भरित और फल-द्रुम हो जाती हैं। साक्षात भगवान् की तरह सब पर टूटमान है यह धरती। टोपली भरकर बो-दो इस मिट्टी में और गाड़ी भर कर काट लाओ फसल। अपनी मिट्टी की ही तरह मालवी जन ने भी किसी को जाकारा देना नहीं सीखा। विदा होने वाले अतिथि अभ्यागत को भी यहां कहा जाता है, 'बिराजो साब, बैठो साब, पधारजो साब।' यह धरती और यह जन किसी भी आने वाले को धक्का नहीं देते। लोक-समूह यहां गुजरात और महाराष्ट्र से, राजस्थान और उत्तरप्रदेश से पंजाब और सिंध से आये। किसी ने अपने श्रम स्वेद से इसका अभिषेक, तो किसी ने अपने कर्म-कुशल हाथों से इसका श्रृंगार किया और कइयों ने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसे बेदर्दी से लूटा, नोचा और खसोटा। लेकिन यहाँ की धरती और यहाँ के जन ने सभीको आँचल की छांह ही दी, सभी को अपना बना लिया। 'गोरां पारबती का मौसाल' हर आगन्तुक के लिए मामा का घर ही साबित होता रहा है।

किसी भी तरह के अतिरेक से विहीन है यह धरती। यहां न चर्बी पिघलानेवाली गरमी होती है और न हड्डियाँ गलाने वाली ठण्ड। न इतने अधिक बादल ही फटते हैं कि सब कुछ धुल-बह जाए और न इतना सूखा कि पशु-पंछी प्यासे मर जाएँ। न पेड़ों को उखाड़ने और न छतों-छप्परों को उड़ाने वाले अन्धड़ और न दम घोटनेवाली ऊमस और घुटन।

उन्मुक्त मस्त पवन के झोंके; चाँदनी रातों की बहारें; अंधेरी रातों का धुँधला रहस्य; धूप तपे, शीत सिहरे, वर्षा धुले वनस्पति रंगों का ओप-उजास; बहुत ऊंचे, नीले गगन में, टिमटिमाते तारों की झिलमिलाहट परोड़िये के उभरते और संझा के गहराते रंग; मिट्टी के कवच को विदीर्ण कर विजय वैजयन्ती को लहराने वाली कोंपलों की मृदु प्राणवत्ता मरवे-मोगरे, नीम-चमेली, आम-मौलश्री की उन्मद सुगन्ध; मोर, पपीहे और कोयल का ध्वनि-संगीत मालवा के पठार की उच्चाशयता, मालवी धरती की सहिष्णुता और मालवी जन की उदारता एवं विनयशीलता के साथ घुल मिलकर यहाँ के साहित्य और संस्कृति को परवान चढ़ाते हैं।

मालवी संस्कृति के विभिन्न रूपों को इस जनपद के वाग्दान, विवाह, गर्भाधान, दोहद-प्रवस, नामकरण, मृत्यु आदि सोलह संस्कारों तथा व्रत-त्यौहार, पूजा-कथा, हल-चालन आदि में देखा जा सकता है। मांडने, भित्ति-चित्र, मृत्तिका-भाण्ड, परिधान, आभूषण, गृह-निर्माण, कृषि एवं अन्य कार्यों के उपकरणों में भी मालवी संस्कृति परिलक्षित होती है। वास्तव में यह एक संश्लिष्ट संस्कृति है—गुजरात, राजस्थान, महाराष्ट्र और इस प्रदेश के आदिवासियों के सांस्कृतिक रूपों और उपादानों से मिलकर बनी हुई संस्कृति। जो लोक-समूह अपने प्रदेशों से उखड़कर यहाँ आये अपने साथ अपने साँस्कृतिक रूपों को भी लाये; जहाँ उन्होंने यहां के प्रचलित सांस्कृतिक रूपों को प्रभावित किया वहीं यहाँ के सांस्कृतिक रूपों से प्रभावित भी हुए। इस तरह उनके अनजाने ही परिवर्तन होते गए और कालान्तर में एक संश्लिष्ट संस्कृति प्रचलित हुई, जिसे आज हम मालवी-संस्कृति कहते हैं। पारस्परिक प्रभाव, परिवर्तन और संश्लेषण के बाद स्थान, काल, प्राकृतिक स्थिति अर्थ-व्यवस्था, सामाजिकता आदि ने प्रभावित कर संस्कृति के प्रचलित रूप को निखारा है।

मालवी साहित्य उसकी अभिव्यक्ति के माध्यम, मालवी भाषा अथवा मालवी बोली के सम्बन्ध में भी संश्लेषण वाली बात सही है। मालवी बोली में गुजराती, मराठी और राजस्थानी भाषा के शब्दों की बहुलता है। यदि गहराई से अध्ययन किया जाए तो मालवी की भाषाई प्रकृति परिनिष्ठित हिन्दी की अपेक्षा गुजराती और राजस्थानी भाषाओं के ही अधिक निकट सिद्ध होगी। इसके लिए मालवी का वैज्ञानिक ढंग से भाषा शास्त्रीय अध्ययन नितान्त आवश्यक है। प्रस्तुत लेख की ध्वनि वैचारिक और गवेषणात्मक न होकर भावात्मक अधिक है इसलिए उदाहरण और तर्क असगत भी होंगे और कुछ बेसुरे भी। फिर भी इतना तो कहा ही जा सकता है कि यहाँ आकर बसने वाले अधिकांश लोक-समूह राजस्थान और गुजरात से और कुछ महाराष्ट्र से आये इसलिए उनकी भाषा का प्रभाव और उन भाषाओं के शब्दों की बहुलता सहज स्वाभाविक है। कूड़े के ढेर के लिए हिन्दी में एक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शब्द है 'घूर' या 'घूरा'। इसका मालवी में पर्याय है 'उक्केड़ा' या पाठ भेद से 'उक्खेड़ा'। गुजराती में इसके लिए 'उकरडा' और मराठी में 'उकिरडा' शब्द है। ऐसे कई उदाहरण दिये जा सकते हैं।

मालवी लोक-गीतों में भी इस प्रभाव को स्पष्ट देखा जा सकता है। मालवा में विवाह-संस्कार के अवसर पर पहला काम होता है गणेश की स्थापना और पूजा। इस गीत की एक पंक्ति है "कोटा की गादी पे नोबत बाजे ने इन्दरगढ़ गाजे, झीणी-झीणी झालर बाजे हो गजानन।" कोटा राजस्थान में है, इन्द्रगढ़ कोटा के पास है और यह कोटा और इन्दरगढ़ के गजानन वाला गणेश गीत मालवी बोली के पाठ भेदों के साथ सारे ही मालवा में प्रचलित है। इसी प्रकार मामेरे के एक बने में "गाड़ो तो रळक्यो रेत में रे वीरा पईड़ा गया गुजरात" और एक दूसरे में "मेंदी वांटी मालवे ने रंग गियो गुजरात" और भी "अवे रेशम को रेजो कांकड आयो·····बूंदी का भीम राजा परणी पधार्‌या" आदि।

• न तो मालवी के लोक-साहित्य और न मालवा की लोक संस्कृति का ही विधिवत अध्ययन करने की दिशा में कोई काम अभी तक पूर्ण हो पाया है। इस लेखक की जानकारी (अधूरी और गलत भी हो सकती है) के अनुसार मालवी लोकगीतों और लोककथाओं के न तो पूरे-पूरे संकलन हुए हैं और न उनका तुलनात्मक अध्ययन ही किया गया है। सम्पूर्ण शब्दकोष भी अभी तक कोई प्रकाशित नहीं हुआ है। इस काम को जितना आसान समझा जाता है उतना यह है नहीं। हर गीत और कथा के अनेक पाठ और विभिन्न जातियों के अनुसार विभिन्न रूप मिलते हैं। किस्सा कहने वाले या वाली और गीत गानेवाली के ज्ञान, अवधारणा, बौद्धिक विकास, घर की शिक्षा-दीक्षा और वातावरण, शहर से दूरी और सामिप्य, पेशे और जाति आदि कई बातों का असर कही हुई कथा। या गाये हुए गीत पर पड़ता है। जितने भी पाठ उपलब्ध हो सकें सब को संकलित या ध्वनि-आलेखित करके भाषाशास्त्रीय, नृ एवं समाजशास्त्रीय दृष्टि से उनका सम्पादन कर उपयुक्त पाठ स्थिर करना होता है। लेकिन अधिकतर अपने ही गांव या शहर के घर में किसी एक से सुन-सुनाकर और बिना समझे ही लिपिबध्द कर लोक-साहित्य के उद्धार और अनुशीलन का दम्भ किया जाता है।

मालवी साहित्य मुख्यतः गीतों, कथाओं', कहावतों, भजनों, लोक-नाटिकाओं आदि में उपलब्ध है और सारा-का-सारा अभी भी कण्ठगत है और इसलिए बड़ी तेजी के साथ नष्ट होता जा रहा है। लिखित और मुद्रित साहित्य के रूप में यह कभी रहा ही नहीं। पुरानी पीढ़ी के बूढ़े-बूढ़ियां इसे सुरक्षित रखने की असफल कोशिश करते रहते हैं। नई-पीढ़ी की इसमें कोई रुचि नहीं है। सिनेमा की तर्ज पर शादी-ब्याह के गीत चल पड़े हैं और उनका प्रचलन बढ़ता जा रहा है। आमतोर पर तो रेकार्ड बजाकर ही गीतों का काम चला लिया जाता है। लोगों के ओटलों पर या धूनी के चारों और कथाओं की वैसी मजलिसें भी नहीं जुटतीं और न अब वैसे कहानी कहने वाले, वैसा हुँकारा देनेवाले, वैसी गीत उगेरनेवाली और उसी जोड़तोड़ की गीत झेलनेवालियाँ ही रही हैं। न दादी और न नानी के ही गले में कहानियां बची हैं।

यह लेखक मालवा में जन्म लेने के अवसर को अपना परम सौभाग्य मानता है। गंगा-जमना के किनारे, राजसी वैभव में भी, इस धरती की मिट्टी और क्षिप्रा-चम्बल-नर्मदा का नीर मुझे पुकारता और बराबर अपनी ओर खींचता रहा है। इस दुर्निवार आकर्षण से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
बंधा मैं हरवार लौट-लौट आया हूँ और यहां की धूल-मिट्टी में लोटकर मेरी अकिंचनता राजसी गरिमा से मण्डित हुई है।

मालवी साहित्य और संस्कृति से मेरा साक्षात्कार जीवन के प्रथम प्राण-स्पन्दन से ही प्रारम्भ होता है। बालूड़ा को अपनी कोंख में जतन से उछेरनेवाली जननी का "पेले मास आंबा-जांबू मन जावा हो लागो" "दूसरा में आलस दिन गया, तीसरा में आवे झीणी नींद, चौथा में बाग-बगीचा की सैर, पांचवा में चावे दाख-चारोरी, छट्टा में खाटा बोर, सातमा में पूजी अगरणी, आठमा में लूची लापसी" और नवें में "सूणोनी सासूजी राज, ओजी ओवरा करो खाली"। और फिर तो "झरमर-झरमर बरसे मेघ आंगण मोर्या बोले, घणी कष्टी घर री नार, राजा, दाई ने लावो बुलाय"। ऐसे मौके रोज तो नहीं आते इसलिए दाई ने कहा, "कोल-करार करो तो में चलां" और "भींजत कोण चले, पांव हमारा कीच भराय', । तब राजा ने अपना थुरमा ओढ़ाया, उसे घोड़े असवार किया और आप पैदल चले। जैसे ही दाई आई "डेयर माय झबके नन्दलाल जनमिया" तनाव जैसे ही खत्म हुआ थोड़ा परिहास भी हो गया। "दाईरा मोटा दांत जच्चा राणी डरप मरे, दाईरो मोटो पेट जच्चा राणी सरमा मरे, आंगण बखेरो मूँग दाई दारी रपट पड़े"। उसके बाद तो 'गज दोई मिसरू मंगाड़ो पीयर पगल्या मोकलो" और सेरी में बाईजी को साथ्या पूरने के लिए जो सालू दिया गया उसके "ऐरे-मेरे जड्यो जड़ाव, अधबिच हीरा जड़ीरिया, पालव पे गूंजे दादुर-मोर, घूंघट पर सूरज उगीरियो"। लेकिन सूरजपूजा के दिन उसी ननद को " दीजो अबरे-सबरे सेर म्हारी नणदल मत दो, घूगरी"; और जब "असल गंवार नावण" ने दे दी तो "सायबजी से सारी रैन लड़कर पाछी मंगाई घूघरी" और ननद ने भी "वीरो म्हारो देवरियारो देव भावज देवज कूतरी" कहकर घूघरी फौरन लौटा दी। लेकिन उसी भावज ने 'पाना सरीखी पतरी, सोना सरीखी पीरी, फूलां सरीखी फोरी, रूपां सरीखी ऊजरी, धरती सरीखी भारी खमा, आभा सरीखी ऊजली" कहकर भावज का बखान कर दिया तो भावज निहाल हो गई और सोने का सतलड़ा हार ननद को पहना दिया।

इसी भावज ने एक दिन बालिका के रूप में हरा-हरा गोबर लेकर संझा मांडी थी और जब "सोती-सी नगरी को जगाता" राईवर धूमधड़ाके से तोरण पर आया तो कामण गीतों के बीच "पीपर पाने ने नागरवेले हाथिवारों जोड़" सात फेरे फिर वह "कोठी पर पड्या बाई का ढेलडा और बाई चाल्या परदेस"। वऊ वड का रेशम का रेजा गोयरे आया गुवारियों ने बधाया, पनघट पर आया पनिहारियों ने बधाया, सेरी में आया सहेलियों ने बधाया, दरवाजे पर आया सासूजी ने बधाया, आंगन में आया बेन्याबाई ने बधाया, रसोड़े में आया भाभजबाई ने बधाया और सबने कहा 'हिवड़ा समाणी लाड़ी लाया।" फिर वह 'बनाजी के महल के नवलख पँगथिये चढ़ तो गई, पर बीजणां की छांय में आंखड़ली ढली तो गई'। एक दिन ससुरजी पूछ बैठे "वऊवड तमारा डाबला का गेहणा बताओ" चतुर बहू ने ससुराजी, सोनो सोयटा, सासूजी अरथ भंडार, जेठजी जड़ाव का बेरखा, जेठानी बेरखा की लूम, देवर दांती चूड़लो, देवराणी चूड़ले मजीठ, नानीबाई ललवट टीलड़ी, जमाई हिवड़ा को हार, कुंवर कुल को दीवलो, कुलबऊ दिवला की जोत, नणद कसीदल कांचरी, नणदोई कसणारी हिलोर और सायब सिर को सेवरो' कहकर, सारे परिवार को गहने के रूप में बखानकर ससुर का मन जीत लिया। उसी बहू ने एक बालूड़ा के लिए जलती अंगीठी माथे पर लेकर 'एपण, कंकू, फूल, अक्षत, नारेल' आदि से भरी चंगेरड़ी हाथ में उठाये आसन बैठी रजरा की रानी के पूजन जोग मड़ की विधिपूर्वक पूजाकर एक, दो, तीन बच्चों के रूप में मन की मुराद पायी और माता से उन्हें अम्मर करने की प्रार्थना करती रही।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसी गृहिणी की अपने दोनों हाथों में मेंहदी रचाने और देवर की 'चट्टी आंगरी' पर मेंहदी लगाने की बात को लेकर पति से रार हो गई तो 'धरियाणी ए लीदो सूपड़ो ओर धणी ए लीदी ईस' तो छोरा डाड़ पाड़ने' लगे; जब 'पाड़-पाड़ोसन बेनड़ी' से बिनती की कि 'म्हारा टाबर छाना राख' तो उसने 'म्हूं कई राखूं म्हारी बेनड़ी घर-घर योई घाट' कहकर गृहस्थी की कठोर वास्तविकता प्रकट कर दी।

पारिवारिक गीतों की यह अन्तःस्पर्शी करुणा 'गोपीचन्द-भरथरी' में और भी करुण और उदात्त हो उठी है—"सोनारी थारी पिंगला फेंकी दी दी, गोरा करे रे विलाप, लट्या-पट्या तोड़ने लागी, जोग उतारो राजा भरथरी, राणी करे पुकार, छोड़ी ने मती जाओ राजा एकली"। निर्मोही वैरागी राजा के पास एक ही जवाब है—"जाओ पण राणी तुमारा मेल में, क्यूं तलसावो बालक जीव, मेरी तो इछा लागी जोग में जी, भिक्षा दे दे मैया पिंगला, कब का खड़ा तेरे द्वार।" इस गीति-कथा में जीवन के सभी रंगों की खिलावट पूरी बहार पर है। राजा के हाथों मारे गये मिरगे—मृग के आत्मदान की आकुलता जितनी भव्य उतनी ही रम्य भी है—"मरता-मरता मिरगा क्या बोला, सुणले राजा भरथरी बात, मिरगा मार्या तो भले मार्या, खाल दीजे साधु-सन्त ने, झाटक लेगा बिछाय, सिंगी दीजे गोरखनाथ ने, घर-घर अलख जगाय, आँख दीजे पड़दा नार ने, राखे घूंघट केरे माय, नेणां दीजे चंचल नार ने, मोवे-मोवे सारो संसार, मुख दीजे सुरमा गाय ने, देखतां परासत कर जाय।" सर्वस्व दान की यही भावना 'डूंगसिंह' में ब्रिटिश-विरोधी अभियान के रूप में आत्म-बलिदान की प्रेरणा बनती है—"क्या बाबा का लूटणा वो मांग शहर में खाय, बामण को क्या लूटणा भजे राम का नाम, क्या तिरिया का लूटणा सामा मांडे हाथ, बनिये का क्या लूटना टांके तोले नाज, क्या चपरासी को लूटना चून पराया खाय, तोड़ खजीना अंगरेज का खावे मफत को माल। कथाओं की दुनिया तो और भी निराली और भी जीवन्त और भी वास्तविक है। "बात केतां वार लागे ने हुंकारे बात प्यारी लागे।" लेकिन अब न सुननेवालों के पास समय है और न युद्ध में नगारे की तरह बात को हुंकारा देनेवाले ही रहे हैं। फिर भी मालवी वार्त्ता घर-कूचां धर-मजलां और झरां-पांखरां चलती ही जाती है। रमा-झमा करती लुगाइयां आती हैं और मूछ मरोड़ते, खूंखारा खाते मरद जमा होते हैं। रानी रूसती है तो अटवाटी-खटवाटी लेकर पड़ रहती है। तिरिया-हठ के आगे राजा की एक नहीं चलती है। उधर किसान के बेटे के लिए इच्छा-भोजन की अभिलाषा ही दण्ड हो जाती है तो सुतार का बेटा मुंह-बोलती पुतलियों का पलंग गढ़ देता है। पनघट पर धां-धूं और कड़ाधीं-कड़ाधीं करती बाइयां आती जारही हैं। कोई कलसा भरती है तो कोई ढोलती है तो कोई मांजती है तो कोई धोती है। कहीं 'काग-बेटी' की सहायता के लिए दुनियाभर के 'चरकले-चरकलियां' आ जुटते हैं तो कहीं साधु बाबा चमटी राख डालते हुए बीच दरिया में दनादन चलते जाते हैं।

इस समग्र मालवी साहित्य को मैंने सही अर्थों में जीया इसके द्वारा अभिव्यक्त संस्कृति को आकण्ठ भोगा है। मेरे भावनात्मक विकास और साहित्यिक व्यक्तित्व के निर्माण का यह मूलाधार रहा है। मेरे साम्राज्यवाद-सामन्तवाद-विरोधी संघर्षों की प्रेरणा का अजस्र स्रोत भी यही साहित्य और संस्कृति है। स्वयं मैंने और मालवा के मेरे अग्रज, अनुज तथा समवयस्क लेखनधर्मियों ने अपनी हिन्दी रचना में इस साहित्य, संस्कृति और शब्दरूपों को मुखरित और प्रतिष्ठापित किया है। मालवी कविता के क्षेत्र में तो पहले भी कई हुए, आज भी कई हैं, लेकिन मालवी गद्य को अपनाने का साहस, मेरी जानकारी में, एक श्री पन्नालाल 'नायाब' और दूसरे श्रीनिवास जोशी ने किया है। निश्चय ही हम सब को अभी मालवी साहित्य और संस्कृति का काफी ऋण चुकाना है।

• •

—२१ नीलकण्ठ कालोनी, इन्दौर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मालवा की लोक कथाएँ

प्रहलादचन्द्र जोशी

मालवा जनपद में लोक-कथाओं का अपार भंडार संचित है । इन लोक-कथाओं में यहाँ के नर-नारियों का सांस्कृतिक, सामाजिक, आर्थिक, मनोवैज्ञानिक एवं नृतत्व-सम्बन्धी ज्ञान भरा पड़ा है । मालव प्रदेश में—जहाँ नर्मदा एवं चम्बल की उपत्यकाओं में जनता बसी है—वहीं विन्ध्याचल की श्रेणियाँ भी सुदूर तक चली गई हैं और इनमें बसी जनता के कल-कण्ठों में लोक-कथाओं का अथाह सागर भरा हुआ है । इन लोक-कथाओं में लोकमानस का अटूट विश्वास अभिव्यक्त होता है । लोक-कथाओं में लोकमानस के अन्तरतम की धार्मिक भावनाएँ, प्ररूढ़ियाँ, अन्ध-मान्यताएं, सामान्य-जीवन, रहन-सहन, खान-पान, प्रकृति-चित्रण, लोक-विश्वास तथा लोक-प्रथाओं के अनेकों चित्र सजीव हो उठे हैं।

मालवी लोक कथाओं का क्षेत्र मैदानी हैं–अतः पहाड़ी स्थानों को लोक कथाओं में जो चमत्कारिक वातावरण दृष्टिगत होता है —उसका इन लोक कथाओं में अभाव परिलक्षित होता है। लोक मानस का जीवन अत्यन्त ही सुलझा एवं सादा है । जीवन की विषम परिस्थितियों के लिए संघर्षरत रहने का वह आदी नहीं है। कृषि एवं गोसंवर्धन के सम्पादन कार्य में उसे विशेष संघर्ष नहीं करना पड़ता है। अतः अधिकांश कथा-गाथाओं में कृषिकर्म एवं गोपजीवन की संस्कृति के ही चित्र उपलब्ध होते हैं । इनमें भूत-प्रेतों और परियों के प्रति विश्वास का प्रभाव कम है । मध्यवर्ती भारत के नाथ साधुओं और सिद्धों के प्रभाव को व्यक्त करने वाली कथाएँ उल्लेखनीय हैं । मुख्य रूप से कृषि जीवन के प्रभाव से मालवी कथाएँ भरी पड़ी हैं । आदिवासियों के विश्वासों की झलक यद्यपि उनमें मिल जाती है तथापि उनकी नैतिक मान्यताओं, नीति और अभिप्रायों में मध्यकालीन प्रभावों की झाँकी भी मिल जाती है [1] ।

अध्ययन एवं अनुसंधान की स्थितिः–

मालवी लोक कथाओं के अध्ययन एवं अनुसंधान की स्थिति संतोष जनक नहीं है। उनमें संकलन एवं प्रकाशन का अभाव है । स्वयं मालवी के प्रसिद्ध विद्वानों ने भी इनके अध्ययन के अभाव को स्वीकारा है । डॉ. चिन्तामणि उपाध्यायजी ने उल्लेख किया है— 'मालवी का लोक कथा साहित्य, संकलन की दृष्टि से अछूता ही रह गया है। बालकों द्वारा कही जाने वाली छोटी-छोटी कहानियां, स्त्रियों के व्रत एवं त्यौहार सम्बन्धी कथाएं, पुरुषों की नीतिपरक एवं श्रृंगार भावना की मनोरंजक लोक कथाओं का व्यवस्थित संकलन करना वांछनीय है। लोक जीवन से सम्बन्धित कला एवं संस्कृति के संग्रह का प्रायः अभाव ही रहा । [2]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डॉ. परमार ने भी लोक कथाओं के अध्ययन के अभाव पर प्रकाश डालते हुए लिखा है—"संक्षेप में मालवी की कहानियों का कलेवर संतोष जनक नहीं है । इसीलिये उन पर कोई उल्लेखनीय अध्ययन उपलब्ध नहीं है ।' [3]

मालवी लोक कथाओं के अध्ययन एवं अनुसंधान के दृष्टिकोण को लक्ष्य करके प्रयास करने वाले विद्वानों में सर्व प्रथम डॉ. चिन्तामणि उपाध्याय का प्रयास उल्लेखनीय है। आपने सन् १९५० के आसपास लेकोड़ा ग्राम से अनेकों लोक कथाएँ तथा सुदीर्घ लोक-गाथाएँ खोज निकालीं और उन्हें विश्लेषण एवं प्रामाणिक प्रेरणा के साथ अपने शोध-प्रबन्ध में प्रकाशित किया है । इस शिविर के संचालक आप स्वयं थे । इसके पश्चात् डॉ. सू. ना. व्यास (पद्मभूषण, ज्योतिषाचार्य,) के नेतृत्व में 'मालव लोक साहित्य परिषद् उज्जैन' की स्थापना हुई । जिसके सहायकों में डा. श्याम परमार तथा डॉ. बसन्तीलाल बंम प्रभृति थे । इस संस्थान ने लोक साहित्य की विभिन्न विधाओं का संकलन कार्य किया । इस संस्था की गतिविधि से कुछ लोक कथाओं का संकलन कार्य हुआ । किन्तु प्रकाशन के अभाव में उनपर वैज्ञानिक दृष्टिकोण से अध्ययन प्रस्तुत नहीं किया जा सका । इसके अति-रिक्त इस लेखक को विदित हुआ है कि डॉ. बसन्तीलाल बम ने ७० कथाएँ, सौ. मनोरमा उपाध्याय ने ४० कथाएँ, एकत्र की हैं । किन्तु खेद है कि इनका प्रकाशन भी अद्यावधि नहीं हो पाया है ।

मालवी लोक कथाओं के अथाह सागर से डॉ. श्याम परमार ने सोलह कहानियों का संग्रह आत्माराम एण्ड सन्स दिल्ली द्वारा सन् १९५५ में प्रकाशित करवाया है । किन्तु ये बालकों के हितार्थ ही लिखी गई हैं । इसी प्रकार श्रीयुत चन्द्रशेखरजी दुबे द्वारा कतिपय कहानियों का संग्रह 'सतवन्ती' के नाम से प्रकाशित है । ये संग्रह मालवे में प्रचलित-कथाओं का प्रतिनिधित्व नहीं करते; तथापि प्राप्त यद्किंचित सामग्री के आधार पर भी इन विद्वानों ने अध्येताओं के लिये दिशा द्वार खोल दिया है । किन्तु मालवी लोक कथाओं के सर्वांगीण अध्ययन एवं अनुसंधान का जहाँ तक प्रश्न है वह लगभग अछूता ही रहा है ।

विभिन्न विद्वानों ने अपनी-अपनी क्षेत्रगत परिसीमाओ के अनुसार लोक कथा, गाथाओं का वर्गीकरण किया है । क्षेत्रगत लोकजीवन एवं भौगोलिक वातावरण के अनुसार मालवी-लोक-कथाओं के वर्गीकरण के वैज्ञानिक आधार भी भिन्न ही होंगे । मालवी की लोक कथाओं का वर्गीकरण सामान्यतः तीन वर्गों में किया जा सकता है—

(१) विषयगत (२) वस्तुगत एवं (३) शैलीगत वर्गीकरण ।

विषयगत वर्गीकरण—(वर्णित विषयों पर आधारित)—लोक कथाओं में वर्णित विषयों पर आधारित वर्गीकरण करने की पद्धति भारतीय एवं पाश्चात्य लोक कथाओं में समान रूप से प्राप्त होती है । मालवी में प्राप्त लोक कथाओं की अपार सामग्री का पर्यालोचन कर, विषय गत वर्गीकरण निम्नानुसार किया जा सकता है:—

(१) जातिगत लोक कथाएँ (२) सामाजिक लोक कथाएं, (३) धार्मिक लोक कथाएं (४) कौतूहल, मनोरंजक एवं हास्य सम्बन्धी लोक;कथाएं, (५) जादू एवं चमत्कारिक-लोक कथाएँ, (६) कृषि सम्बन्धी लोक कथाएँ, (७) पशु-पक्षी सम्बन्धी लोक कथाएँ, (८) बाल कथाएँ, (९) ऐतिहासिक लोक कथाएँ एवं (१०) कहावतों की कथाएँ ।

वर्णित विषय के आधार पर वर्गीकृत करने की यह प्रणाली अत्यन्त सीधी एवं सरल है । कथावस्तु में जिस विषय का वर्णन किया जाता है—उसी को आधारभूत मानते हुए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहानी के नाम करण की पद्धति प्रायः मालवी लोक-कथाओं में प्राप्त होती है। जैसे जाति से सम्बन्ध रखनेवाली जातिगत कथाएँ, सर्प के व्रत से विकसित हो तो सर्प सम्बन्धी कथाएँ, पशु-पक्षियों से सम्बन्धित पशु-पक्षियों की लोक-कथाएँ, राजा-रानी से सम्बन्धित राजा-रानी की कथाएं आदि। इसमें वर्गीकृत लोक-कथाओं के जो रूप दृष्टिगत होते हैं—उनमें से कुछ इस प्रकार दृष्टव्य हैं—ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, और शूद्र जातियों की लोक कथाएँ, सम्प्रदाय सम्बन्धी कथाएँ, राजा-रानी के न्याय सम्बन्धी, चतुराई सम्बन्धी, नारी जीवन-सम्बन्धी, यौन एवं शृंगार सम्बन्धी, कला और संस्कृति सम्बन्धी, नीति एवं उपदेश सम्बन्धी, शिक्षात्मक कथाएं, अवदान वाली पौराणिक, सर्प सम्बन्धी, उत्पत्ति सम्बन्धी, सती सम्बन्धी, व्रत एवं त्यौहार सम्बन्धी कथाएँ, देवी-देवताओं से सम्बन्धित लोक कथाएँ, कौतूहल-मनोरंजक एवं हास्य सम्बन्धी कथाओं में दैत्य, भूत, चुड़ैल, ठग तथा चोरों की कथाएँ, साधु-सन्तों एवं सिद्धों की कथाएँ, पूर्व जन्म पर आधारित कथाएँ जादुई कथाएं, कृषि सम्बन्धी कथाएँ एवं गाथाएँ, पशु-पक्षियों में सियार, खरगोश, शेर, चूहा, बिल्ली, कुत्ता, जूँ, मगर, बन्दर आदि की कथाएँ; बाल कथाएँ, ऐतिहासिक में भर्तृहरि, विक्रमादित्य, गोपीचन्द तथा राजा नल की कथा-गाथाएँ आदि अनेकों नामों के स्वरूप उपलब्ध होते हैं।

वस्तुगत वर्गीकरणः—(कथावस्तु पर आधारित)—लोक कथाओं के जिस तत्व को लेकर उसकी आंतरिक रचना की जाती है उसी को आधार भूत मानकर कथा का नामकरण किया जाता हैं, इसके दो भेद हो सकते हैं— (१) सोद्देश्यपूर्ण और (२) मनोरंजक।

उद्देश्य पूर्ण कथाओं में वे कथाएँ आती हैं—जिनसे मानव के अन्तरतम की जिज्ञासा की तुष्टि हो, जिनसे उसका अपना कोई कार्य सिद्ध हो या उद्देश्य की पूर्णता हो। जैसे धर्म प्रचार सम्बन्धी कथाएँ, अनुष्ठान सम्बन्धी, वीरता एवं पराक्रम सम्बन्धी, रूपक कथाएँ, नीति, शिक्षा तथा उपदेश सम्बन्धी कथाएँ, संस्कार सम्बन्धी कथाएँ, संप्रदाय सम्बन्धी, पौराणिक, ऐतिहासिक, अवदान, तथा कृषि तत्व सम्बन्धी कथाएँ।

मनोरंजक कथाओं में चतुराई की कहानियाँ, चालाकी की कहानियाँ, मूर्खता की कहानियाँ, राक्षस-भूत तथा चुड़ैलों के अलौकिक एवं अति मानवीय कृत्यों की कहानियाँ, हास्य व्यंग्य की कथाएँ, ठगों की कथाएँ, काल्पनिक कथाएँ, चोरों की कथाएँ, कहावतों की कथाएँ तथा बुझौवल आदि कथाओं का समावेश किया जा सकता है। इनमें वस्तुगत विश्लेषण करने पर उनका वास्तविक स्वरूप दृष्टिगत होता है। तथा उस कथानक के अन्तस्तल की रचना का आस्वादन करके मानव मन उत्कण्ठित, आनन्दित तथा स्फूर्जित होता है। मनोरंजन के साथ ही इनके कथानक कथा-मानक रूपों, एवं अभिप्रायों का दिग्दर्शन भी होता हैं।

शैलीगत वर्गीकरणः—इसके अन्तर्गत मालवी की प्राप्त लोक कथाओं को निम्न वर्गों में विभाजित किया जा सकता है। (१) अगेय (२) गेय एवं (३) मिश्रित।

अगेय कथाओं की शैली गद्यात्मक होती है। गद्यात्मक कथाओं में कथक्कड़ और श्रोताओं में अन्योन्याश्रित सम्बन्ध होता है। कथक्कड़ अपनी कथा को छोटे-छोटे वाक्यों में कहता जाता है तथा श्रोता अपने हुँकारे से कथा को गति प्रदान करवाता है। बीच-बीच में श्रोतागण वाह-वाह ! क्या कहना ! कई हो यो है ? आदि शब्दों से कथक्कड़ों को प्रोत्साहित करना चाहता है। कभी श्रोताओं के द्वारा उस कथा के नायक एवं नायिकाओं की प्रशंसा की जाती है तो कभी शंका समाधान के लिए प्रश्न किये जाते हैं ताकि कथक्कड़

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और भी रुचि लेकर उस कथा का स्रोत बनाये रखता है । डॉ. बम ने लिखा है—"वक्ता और श्रोताओं का मानस इन कथा-गाथाओं में वर्णित नायक-नायिकाओं के मानस से इतना निकट रहता है कि उनके जीवन में घटित घटना-चक्रों को स्वयं अपने जीवन में घटनेवाली घटनाएँ समझकर, उनके अनुरूप भावनाओं को अपने मन में भी उभरता हुआ पाते हैं। न केवल इतना ही वरन् वे एक दूसरे के सुख-दुख, जीवन-मरण, लाभ-हानि और हर्ष-विषाद के साथी भी बन जाते हैं और उनके जीवन-पथ में आने वाली असंख्यक बाधाओं पर विजय प्राप्त करने में भी एक दूसरे के सहायक सिद्ध होते हैं। काल्पनिक और यथार्थ पात्रों के बीच भावनाओं के इस तादात्म्य का मूल आधार लोक कथाओं को अभिव्यक्त करने की शैली में ही निहित है। यही लोक कथाओं की शैलीगत विशेषता कही जाती है जिसे अभिजात्य कथा साहित्य में पाना दुर्लभ प्रतीत होता है। [४]

गीत कथाएँ (गेय कथाएँ):—इन कथा-गाथाओं में संगीततत्व की प्रधानता रहती है। जहाँ शास्त्रीय संगीत का हमारे समाज के उच्च वर्ग में प्रचार हुआ, वहाँ भारत के नगरों और ग्रामों के असंख्य नर-नारियों के कंठों पर ऐसे सरस सुमधुर और भाव प्रधान गीत भी हैं जो हमारे जीवन की मूल्यवान धरोहर हैं। इन गीतों को कहीं से सीखना नहीं पड़ता। ये युगों से मानव के कण्ठों पर सरस्वती के रूप में विराजमान हैं। ये गीत कथाएँ त्यौहारों, सार्वजनिक समारोहों, विवाहोत्सवों तथा धार्मिक पर्वों पर सामूहिक एवं वैयक्तिक-रूप से गाई जाती हैं। क्योंकि मालवा प्रारम्भ से ही धर्म प्रधान एवं कृषि प्रधान क्षेत्र रहा है।

मालवी में गीत कथाओं का अक्षय भण्डार है। कई एक गाथाएं तो इतनी सुदीर्घ हैं कि उन्हें निःसंकोच प्रबन्ध काव्यों की श्रेणी में रखा जा सकता है । इन गाथाओं में प्रेम-वीरता, शिक्षा, मनोरंजन तथा कृषक जीवन एवं गोप-संस्कृति के तत्वों का प्राधान्य है।

मालवी की प्रेम-गाथाओं में प्रेम का सहज एवं शाश्वत रूप दृष्टिगत होता है। इनमें शीरी-फरहाद या लैला-मजनू के समान प्रेम का उद्दाम स्वरूप नहीं मिलता। प्रेम-जीवन का शाश्वत सत्य है । इसके बिना जीवन नीरस है। मालवी लोक-कथाओं में जीवन की सरसता के अनेक उपादान उपलब्ध होते हैं । प्रेम गाथाओं का स्वरूप मिश्रित मिलता है। गद्य-पद्यात्मक ये गाथाएँ प्रेम के स्वरूप को प्रदर्शित करने में सक्षम सिद्ध हुई हैं। मालवी प्रेमगाथाओं में 'ढोला-मारवण', 'राजकुमारी निहाल्दे', 'सोना-रूपा', 'चतुर राजकुमारी', 'सोरठ-कुँवरी', 'नागजी-दूलजी' तथा 'सुध-बुध-सारंगा' प्रसिद्ध हैं । इन लोक-कथाओं में स्वकीया प्रेम के साथ ही परकीया प्रेम की झलक भी दृष्टिगत होती है । मालवी की प्रेम-गाथाएँ अधिकांश दाम्पत्य परक प्रेमाख्यानों की कोटि में आती हैं।

मालवी में वीर-गाथाओं की भी कमी कभी नहीं है। वीर गाथाओं को मालवी में पंवाड़े के नाम से अभिहित किया जाता है। मालवी-वीर गाथाओं में हीड़ का महत्वपूर्ण स्थान है। तथापि नरसिंहगढ़ का चैनसिंग, धार गद्दीका दूणसिंह तथा नर्मदा में नाव डूबने के पंवाड़े भी मालवे में प्रचलित हैं। वस्तुतः मालवे में प्रचलित 'हीड़' मालवे की प्रबन्धात्मक वीरगाथा है। जो दीपावली के अवसर पर गाई जाती है । यह गाथा वीरता-पूर्ण भावनाओं एवं कृत्यों से ओत-प्रोत है। यह उन बगड़ावत गूजरों की एक वीरतापूर्ण गाथा है, जिन्होंने अपनी तपस्या के बल से भगवान शंकरको प्रसन्न कर, उनकी छः पवित्र एवं दिव्य सिद्धियों को प्राप्त किया था । और जिनके बल पर उन्होंने राण प्रदेश के राणा वेंडाराव के युद्धस्थल में दाँत खट्टे कर दिये थे । यह २४ भाई बगड़ावतों की कहानी से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
ही सम्बन्धित घटना नहीं है—इसमें उनके उस वीर पुत्र देवनारायण की अमर कहानी भी अंकित है–जिन्होंने मालवे में देवता का स्थान प्राप्त कर लिया है और पीर पैगम्बर के समान पूजे जाते हैं। देवनारायण की उत्पत्ति भी अलौकिक एवं अतिमानवीय ढंग से, कमल के फूल से मानी गई है यथा—

ए ऽऽ.. देव ही जनम्या कमल फूल में–
जनम्या थावर के रे है वार ।।
ए ऽऽ.. कोटाँ रा कांगरा ई तो ढलकिया,
भांग्या ने ढोल्या कारे है हाल ।।

मालवे में हीड़ विभिन्न पांच रूपों में पाई जाती है। प्रथम बगड़ावतों की हीड़, दूसरी देवनारायण की हीड़, तीसरी छालर या वेगड़ की हीड़, चौथी साडूमाता की हीड़ और अन्तिम घोळा की हीड़।

प्रथम चारों हीड़ें बगड़ावत गूजरों के खानदान से सम्बन्धित हैं। जिनमें वीरता, शिक्षा, मनोरंजन, धर्म, कृषक-जीवन एवं गोप-संस्कृति के रंग-बिरगे चित्र भरे पड़े हैं। यह गाथा अभी तक विभिन्न प्रान्तों में प्राप्त गाथाओं में सुदीर्घ है। इसमें ९४५ पद तथा १८९० पंक्तियाँ हैं। अँग्रेजी में राबिनहुड सम्बन्धी बैलेड्स बहुत लम्बे माने जाते हैं। "ए गेस्ट आफ राबिन हुड" नामक गाथा सात सर्ग तथा ४५६ पद्यों में लिखी गई है। प्रत्येक पद्य में चार पंक्तियाँ हैं। इसी प्रकार "राबिन हुड्स एण्ड टेन मौंक" की गाथा ९० पद्यों में तथा "राबिन हुड्स डेथ" की कथा ४० पद्यों में लिखी गई है; तथापि मालवी-लोक-गाथाओं के समान, ये भी सुदीर्घ नहीं है।

चन्दना कुंवर की लोकगाथा मालवी की प्रमुख कृषि प्रधान गाथा है। इस लोक-गाथा में कृषक जीवन की सामान्य अनुभूतियाँ भरी पड़ी हैं। सर्प के वृत्त से यह गाथा विकसित होती है। इस गाथा की विशेषता है कि यहाँ कथानक का उतना महत्व नहीं है, जितना कौतूहल-वृद्धि एवं कल्पना कौशल का।

व्यक्ति सम्बन्धी गीत-कथाओं में तेजा-धोल्या, वासकनाग, नागजी-दूलजी, ग्यारसमाता तथा गोपीचन्द भरथरी की गाथाएँ आती हैं। मालवी लोक-कथा गाथाओं में सर्पपूजा एवं नागसंस्कृति के प्रति अत्यन्त श्रद्धा एवं भक्ति भावना प्रदर्शित की गई है। तेज्या-धोल्या गाथा का कथानक भी, कृषक परिवार की सामान्य अनुभूतियों को लेकर विकसित हुआ है। मालवे में इसकी प्रसिद्धी भक्ति की प्रधानता के कारण है। तेजाजी एक अवतारी एवं सिद्ध पुरुष माने जाते हैं। जाट जाति का यह महाकाव्य है। इस गाथा को जाट जाति ही नहीं गाती अपितु कृषक-वर्ग एवं श्रमिक वर्गों में यह समान रूप से गाई जाती है। मालवे के सौंधवाड़ी-क्षेत्र से लगा यह, उमठवाड़ी का उत्तरी भाग, मध्य-मालवा, रांगड़ी-क्षेत्र तथा निमाड़ी प्रदेश के भी कुछ एक भागों में इसका प्रयोग प्रचलित है। ग्यारसमाता मालवी का पुराण है। भक्ति सम्बन्धी गीत कथाओं में इस गाथा का अपना स्वतंत्र महत्व है।

गेय कथाओं की भाँति मालवी में बाल कथाओं तथा स्त्रियों की कथाओं का भी विशद भण्डार है। इन्हें प्राप्त सामग्री के आधार पर कई श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है।

तीन से छः वर्ष तक की आयु के शिशुओं के गीतों को अर्थहीन, एवं प्रधान गीत कथाओं की संज्ञा दी जा सकती है। ये कथाएँ लय प्रधान, पद्य बद्ध तथा संक्षिप्त होती हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जैसे "चन्दामामा रोटी दे, घी गऊं की रोटी दे" आदि। अर्थहीन शब्दों का ध्वन्यात्मक प्रयोग शिशु कथाओं की प्रमुख विशेषता है। ऐसी कथाएं मालवा ही नहीं विदेशों में भी प्रचलित हैं। अमेरिका, चीन, जापान, रूस, नार्वे, आफ्रिका, इंडोनेशिया, तथा लंका की शिशु-कथाओं में भी इस प्रवृत्ति का प्राधान्य पाया जाता है।

क्रीड़ा-कथाओं में खेल के माध्यम से छोटी-छोटी कथाएँ कही जाती हैं। इनमें भी लय तथा संगीत का प्राधान्य होता है। एक क्रीड़ा कथा 'मामा-मामा-केरी दे" द्रष्टव्य है—भानेज—मामा ! मामा !! केरी दे ! मामा—केरी हे सरकार की। भानेज--हम हैं दरबार के। मामा—काली कुत्ती काटेगी। भानेज—घी की रोटी डालेंगें। मामा—घोड़ा लात मारेगा। भानेज--सेर भर चना चबाएँगे।

मामा घर चला गया और सरकारी नौकर आ गया। केरी खाते हुए चोर भानेज को पकड़ लिया। भानेज ने केरी छिपादी। डाँटते हुए सरकारी नौकर ने पूछा—बताओ केरी कां है ? उत्तर—केरी खाग्यो। प्रश्न—बताओ गुठली कां है ? उत्तर—गुठली गलगी। प्रश्न—टाड़ी बता ? उत्तर—टाड़ी उड़गी। सरकारी नौकर ने सब बच्चों को इशारा किया और बच्चों ने चोर को पकड़कर खूब धौल-धप्पे लगाये। सामने ही मामा का घर था। भानेज ने कहा कि मामा ! मामा ! छुड़वादो। तो बच्चों ने और भी धौल-धप्प की। अन्त में मामा ने ही भानेज को छुड़वाया।

प्रस्तुत लोक-कथा में मामा-भानेज के सम्बन्धों का भान कराया गया है। भानेज—मामा से केरी माँगता है किन्तु सरकार की निधि होने के कारण मामा केरी नहीं देता है। वह उसे भय भी बतलाता है। किन्तु बालक हठ पकड़ लेता है और इसका फल भी उसे भुगतना पड़ता है। वह बच्चों के द्वारा पीटा जाता है। इस कथा से जहाँ बालकों को चोरी न करने की शिक्षा मिलती है वहीं मामा, भानेज, चोर, नौकर, केरी, सरकार, दरबार, काली कुत्ती, घी, रोटी, घोड़ा, लात, सेर, चना, चबाना आदि संज्ञा, क्रिया एवं विशेषण के शब्दों का बोध भी होता है। कथा लयात्मक एवं नाटकीय होने के कारण आनन्द एवं कौतूहल की वृद्धि करती है।

उद्बोधक कथाओं के माध्यम से शिशुओं को अंक-ज्ञान एवं वर्ण-ज्ञान का बोध होता है। प्रायः १ से २० तक की गिनती का बोध भी शिशुओं को इन कथाओं के माध्यम से करवा दिया जाता है। इसके साथ ही दो या तीन अक्षरों के समूह वाले शब्दों का भी ज्ञान हो जाता है। उदाहरणार्थ—"पेला-पिताम्बर दूजा-हीरा, तीजा-कीड़ा, चौथा-चाँद, पाँच का परमेसर, छः की छड़ी, सात को सात्यो, आठको एँठवाड़्यो, नो का नवड़तां, दसको दसेरो आदि।" इसी प्रकार कथा की कड़ियाँ बढ़ती जाती हैं।

एक और प्रश्नोत्तरात्मक कथा सुनिये जिसमें प्रश्नोत्तर के माध्यम से बैल के सींग, रूप-रंग, मोल-भाव, तथा लम्बाई आदि का ज्ञान हो जाता है। "बैल-बैल बताए, क्या मोल ? क्या तौल ? सोना की सींगड़्याँ—रूपा को मोल ? कित्ता बैल ? चार-बैल। कित्ता सींग ? दो सींग। बुड्ढा हे के जवान ? उत्तर बुड्ढा है, बुड्ढा है, बुड्ढा है।"

काल्पनिक कथाओं से नवीन कल्पनाओं एवँ अलौकिक शक्तियों के प्रति आदर की भावनाओं को बालक ग्रहण करता है। बालकों की कथाओं को पशु-पक्षियों की कथाएँ, व्रत सम्बन्धी कथाएँ, उपदेशात्मक कथाएँ, शिक्षाप्रद कथाएँ; नीतिप्रद कथाएँ, हास्य विनोद सम्बन्धी कथाएँ, काल्पनिक कथाएँ, चमत्कारिक कथाएँ, गुवाल कथाएँ तथा प्रार्थनात्मक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कथाओं में विभक्त किया जा सकता है। शिशुओं की एवं बालकों की कथाओं में मानसिक विकास का अन्तर उभरता है :

क्रम संबर्ध गेयत्व प्रधान कथाएँ, बाल-कथाओं का एक विशिष्ट प्रकार है। लय एवं संगीतात्मकता इस शैली की प्रमुख विशेषताएँ हैं।

डॉ. सत्येन्द्र ने अपने "ब्रजलोक-साहित्य का अध्ययन" नामक शोध-प्रबन्ध में बाल-कथाओं का विश्लेषण करते हुए लिखा है—"कहानी में मुख्य पात्र द्वारा किसी वस्तु की प्राप्ति का उद्योग, पशु-पक्षी, मनुष्य, जड़ अथवा चेतन पदार्थ से सहायता के लिए प्रार्थना, क्रमशः प्रार्थना की निष्फलता, प्रतिहिंसा का अनुरोध, और अन्त में क्षुद्र प्राणी का तैयार हो जाना, कथावस्तु के प्रमुख निर्माण तत्व हैं। क्षुद्र प्राणी के तैयार होते ही कहानी पीछे की ओर लौटती है और क्रमसंबद्धता टूटती जाती है। प्रत्येक प्राणी–अथवा पदार्थ अपनी हानि की आशंका से भयभीत हो मनुष्य मात्र के कार्य हेतु तैयार हो जाता है। अन्त में अभीष्ट फल की प्राप्ति के साथ कथा समाप्त हो जाती है।

उल्लेखित विशेषताओं के साथ क्रमसंवर्ध कथाओं के कई रूप मालवी में उपलब्ध होते हैं। इनमें काबर, कागला की वार्ता, जूं की केणी, तथा खेर को काँटो नामक कथाएं प्रसिद्ध हैं। "जूं की केणी" नामक क्रमसंवर्ध कथा में जूं का पेट फूट जाता है। जिससे नदी का पानी लाल हो जाता है। जब कोई प्राणी उससे सहानुभूति प्रदर्शित करने जाता है तो उसको प्रतिकार मात्र मिलता है। कथा में इन्हीं पात्रों की दुर्गति को दोहराया जाता है और कथा विस्तृत होती जाती है। कथा की अन्तिम पंक्तियाँ हैं—

"जूँ का पेट फूटा, नदी राती, बैल खाँडा, पीपल पान झड़न्ता, झड़ूँदा कौआ, बस-बोर, भेरा ग्वाल्या, छेरती-छणियारी, पादती पणियारी, चोरा का लोग लोटण्याँ, दाँतल्यो राजा, चोयली रानी, काण्यो नावी, खाड़ा खाणी नांवण।"

उपदेशात्मक एवं नीतिप्रद कथाओं की भी मालवे में कमी नहीं है। पशु-पक्षियों के माध्यम से शिक्षा एवं उपदेश की स्थिति प्राप्त होती है। यथा गरीबी या दुःख में ही मनुष्य ईश्वर को याद करता है, सच्चा नेता वयोवृद्ध आदमी ही होता है; ईश्वर सच्ची भक्ति से ही मिलते हैं, गुण के भाई अवगुण होते हैं, सत्य को परख लेना चाहिये, तत्व की बातें लाख रुपये में भी सस्ती होती हैं, तीन कौड़ी में भी अपनी चतुराई से महल बनाया जा सकता है आदि नीति व उपदेश के वाक्यों से बालकों के सहज ज्ञान की अभिवृद्धि होती है। सियार ने किस नीति से मगर से पिंड छुड़ाया ? सियार ने ऊँट से किस प्रकार छल करके फल खाये ? व ऊँट बड़प्पन में किस प्रकार भूखा रह गया ? आदि नीति के तत्व उपलब्ध होते हैं। मालवे में गुवाल-कथाएँ भी प्रचुर मात्रा में उपलब्ध होती हैं। प्रायः देखने में आता है कि मालवे के कृषक ६ से १२ वर्ष के बच्चों से ढोर चराने का काम लेते हैं। मालवे के गुवाल अधिकतर सियार सम्बन्धी कथाएँ कहा करते हैं।

प्रार्थनात्मक कथाओं की भी मालवा में कमी नहीं है। ऐसी कथाओं की परम्परा अति प्राचीन है। ग्रामों में जब पठन-पाठन की व्यवस्था नहीं थी तब ये कथाएँ श्रुत परम्परा में अवश्य ही प्रचलित रही होंगी। इस प्रकार बाल-कथाओं का अपार भण्डार मालवी में उपलब्ध होता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्त्रियों की लोक कथाएँ

नारी का जीवन एक पहेली के समान है। जिसे समझना बड़ा कठिन है। शास्त्रों में उल्लेख है कि "त्रिया चरित्रं पुरुषस्य भाग्यं देवो न जानाति कुतो मनुष्यः" वास्तव में नारी की सम्पूर्ण जीवन गाथा, त्याग, तपस्या और बलिदान की एक लम्बी कहानी है जिसमें उसके गौरवशाली अतीत, वैभवशाली वर्तमान और विकासोन्मुख भविष्य की असंख्य झलकियाँ दृष्टिगत हो उठी हैं। नारी हृदय मन की वह कोमल भावना है जो भावजगत और कर्मभावों का सानिध्य कर, मानस पटल पर विभिन्न तत्वों को अंकित कर देती हैं। नारी वह सुन्दरतम उपहार है—जिसमें आंतरिक सुरभि तो निहित है ही साथही विकासोन्मुख प्रवृत्ति का उसमें मदमाता यौवन भी भरा हुआ है। नारी विद्वान प्राणियों की जन्मदात्री, ममतामयी, त्यागमयी, दयामयी, परोपकारमयी और लावण्यमयी है। नारी का आंतरिक सौन्दर्य होता है—बाह्य नहीं। आंतरिक सौन्दर्य प्रदर्शन की वस्तु नहीं है। नारी में आत्मसात होकर पुरुष को इस आंतरिक सौन्दर्य के दर्शन करने होते है। नारी का बाह्य-सौन्दर्य तो प्रकृतिजन्य सुकुमारता व स्थूलता का प्रतीक मात्र है। जिसका सम्बन्ध केवल नाट्य जगत या ऊपरी आवरण तक सीमित है। नारी के इसी चरित्र में अखण्ड सौभाग्यवती बनने की अटूट कामना, तथा आत्मविश्वास की परम्परा का निर्वाह सदियों से प्रवाहित होता आ रहा है। धार्मिक भावनाओं, सामाजिक धारणाओं तथा पारिवारिक जीवन की असंख्य घटनाओं से परिपूर्ण इन कथा गाथाओं में मालवी नारी के विस्तृत इतिहास की स्वर्णिम आभा बिखरी पड़ी है।

स्त्रियों की कथा गाथाओं के अनुसंधान से उनके सांस्कृतिक एवं सामाजिक जीवन की मान्यताओं को आंका जा सकता है। व्रत-अनुष्ठानों एवं पर्व-त्यौहारों से सम्बन्धित कथाएँ नारी जीवन के उल्लेखित पक्ष को व्यक्त करने में सफल हुई हैं। ये कथाएँ धर्म कथाओं के अन्तर्गत आती हैं। धार्मिक कथाओं का प्रसार सभी समाज के अन्तर तथा वाह्य जीवन पर इतना अधिक हुआ है कि जीवन के सब क्रियाकलाप, इन कथाओं द्वारा ही प्रेरणात्मक शक्ति प्राप्त करते हैं।

स्त्रियाँ प्रायः धर्म भीरु होती हैं। जब वे कथाओं में व्रत-त्यौहारों तथा अनुष्ठानों के रूप देखती हैं तो नियमित रूप से उनका पालन करने का प्रयत्न करती हैं। इन कथाओं में यम नियम संयम का पालन करने वाला अन्ततः सुफल का अधिकारी होता है, और उनके प्रति अनास्था रखने वाला अथवा उसमें प्रमाद करने वाला दुख का भागी होता है। मालवी में स्त्रियों की अनेकों कथाएँ प्राप्त होती हैं। इन कथाओं को निम्नवर्गों में विभाजित किया जा सकता है:—

(१) वार-त्यौहार तथा व्रतोपवास की कथाएँ। (२) देवी देवताओं की कथाएँ। (३) सत सम्बन्धी कथाएँ (४) सामाजिक कथाएँ। (५) लौकिक कथाएं। (६) वात्सल्य सम्बन्धी कथाएँ। (७) गीत कथाएं। (८) यौन सम्बन्धी कथाएँ। (९) शृंगार सम्बन्धी कथाएँ। (१०) कुलटा स्त्रियों की कथाएँ।

स्त्रियों की कथाओं में भी त्यौहार तथा व्रतोपवास भी कथाओं का बाहुल्य है। यह उनकी प्रमुख वृत्ति कही जा सकती है। सप्ताह के सातों वारों की कथाएँ मालवे में प्रचलित हैं। गृह नक्षत्र आदि सभी में परमेश्वर का अंश होना शास्त्र में वर्णित है। इस कारण उनके निमित्त का दान, प्रतिष्ठा, पूजा और व्रत आदि के विधान नियत किये गये हैं। सोम का व्रत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शिव की पूजा का प्रतीक है। इसी प्रकार मंगलवार का व्रत, महावीर का, बुध का व्रत गणपति का, गुरु का व्रत बृहस्पति का, शुक्र का व्रत, शुक्राचार्य का, शनि का व्रत, शनि-महाराज का और रवि का व्रत सूर्य देव की उपासना का प्रतीक माना गया है।

दीतवार जाति को छत्री पूजा सूर्या की करे।
सोमवार जाति को माली पूजा महादेव की करे।
मंगलवार जाति को माजन पूजा सालगराम की करे।
बुधवार जाति को बामण पूजा देवी की करे।
बस्तार जाति को मुसलमान पूजा मेंमदा पीरकी करे।
शुक्रवार जाति को थोरी पूजा पाबूजी की करे।
थावर जाति को तेली पूजा महाबीर की करे।

व्रत करने के पीछे मनुष्यों के उपकार की भावनाएँ निहित हैं। व्रतों से अनेक अंशों में मनुष्यों का बड़ा उपकार होता है। देवी-देवताओं की कथाओं में ईश्वर के शास्त्रीय रूप के साथ ही साथ लौकिक रूपों के दर्शन भी होते हैं। ईश्वर के अलौकिक कार्यों एवं शक्तियों के प्रति मानव मन में श्रद्धा एवं विश्वास के भाव निहित होते है। लोक-मानव देवी देवताओं को प्रसन्न करने के लिए दिनभर निराहार रह कर व्रत रखते हैं, पश्चात सम्बन्धित देवी-देवता के पूजनोपचार के उपरांत वे कथा सुनकर भोजन करते हैं। स्त्रियों के लिए तो देवी-देवता विशेष सहायक हैं। वे सौभाग्य, सन्तान तथा श्री वृद्धि करने वाले हैं। 'स्त्रियाँ प्रायः करवा-चौथ, गाज-बीज, सन्तोषीमाता, दशामाता आदि देवी-देवताओं के व्रत रखती हैं। तथा कथा श्रवण करती है।

डॉ. सत्या गुप्त लिखती हैं "देवी देवताओं की कथाओं में ईश्वर की महत्ता उसका न्याय, तथा विभिन्न रूपों में करुणा का दिग्दर्शन भी होता है। देवी देवता करुण होने के साथ पाप तथा कष्ट-भंजक भी हैं।"

प्राचीन काल से ही मालवे में सती-प्रथा का बहुत प्रचलन रहा है। 'सत' शब्द से ही सती प्रथा का प्रचलन हुआ। सत-सम्बन्धी कथाओं का यहाँ बाहुल्य है। सतीनार अंडोचेंटावे, कंगालबाई रूपांदे, सोना रूपा, चबोली रानी, सतीनार, केसर्‌यो मृग, फूलांदे-कुंवरी, साडूमाता आदि कथाओं में स्त्रियों के सत का विशद् चित्रण हुआ है।

सामाजिक कथाओं में मानव के सामाजिक जीवन की झाँकी चित्रित होती है। मालवी नारियाँ प्रायः शासित रही हैं। अतः लोक-कथाओं में सासुओं का दमित चक्र ही उन पर दृष्टिगत होता है। स्त्रियों का प्रायः स्वयं का कोई अस्तित्व नहीं होता। सासुओं के इंगित पर ही बहुओं को कार्य करना होता है। "नटूं तो मूं, नी नटूं तो मूँ" कथा से व्यक्त होता है कि सासू को ही घर का सारा अधिकार होता है। बहुओं को तो किसी भिक्षुक तक को दान करने का अधिकार नहीं होता।

शास्त्रीय रूप को तोड़-मरोड़ कर, जिन कथाओं को लोक की मान्यताओं में आवेष्टित कर दिया गया है वे लौकिक कथाओं की श्रेणी में सम्मिलित की जा सकती हैं। ऐसी कथाओं में 'अजयपाल रावण की केणी', 'आलसी औरतें', 'चौथमाता की केणी' आदि प्रमुख हैं। इन कथाओं की विशिष्ठ प्रवृत्तियाँ, अभिप्राय तथा रूढ़िगत परम्पराएँ भारतीय कथाओं में समान रूप से व्याप्त हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वात्सल्य सम्बन्धी कथाओं में स्त्रियों की सौभाग्य कामना जितनी बलवती होती है—उससे कहीं अधिक बलवती कामना होती है ममत्व की। वे चाहती हैं कि चिर साथी की भाँति, उसकी गोद को हरी-भरी करने वाला एक नन्हा शिशु भी उसकी कोंख में किलकता रहे। अतः ऐसी कथाओं में माता या पिता के वात्सल्य प्रेम की बांकी झांकी दृष्टिगत होती है। पुत्रहीन माता का जीवन मृत्यु से भी भयंकर होता है। बांझ कहलाना कोई स्त्री पसन्द नहीं करती।

स्त्रियाँ प्रायः सुकोमल एवं भावुक होती हैं। गीतों से उनका पारम्परिक सम्बन्ध होता है। बालकों को भी वे गीत की मधुर लोरियां सुनाकर ही सुलाया करती हैं। चक्की की घर्र-घर्र की प्रतिध्वनि जहाँ कर्णप्रिय होती है वहीं उनमें नारी के सुललित कलकण्ठ से निःसृत गीत की कड़ियाँ भी अत्यन्त ही आत्म विभोर कर देती हैं! गीत एवं गाल गाने की प्रथा मालवे में बहुप्रचलित है। मालवे में प्रचलित स्त्रियों की गीत कथाओं में श्री गीताजी की कथा, नरसीजी को माहेरो, सत्यनारायण की कथा, शनि महाराज की कथा, शिवजी को ब्यावलो, नागलीला, रासलीला, रुकमिणी-मंगल, दशरथ-मरण तथा भरतजी का नांदेरा से लौटना आदि प्रसिद्ध हैं।

स्त्री समाज में यौन भावनाओं का उद्रेक करनेवाली शिष्ट अथवा अशिष्ट शब्दों के साथ कहीं जानेवाली अनेक कथाएँ भी प्रचलित हैं। जिनके उद्घाटन से नारी अपनी समवयस्क साथिनों के साथ खुलकर, हृदयोद्गारों को प्रकट करती है। यौनजनित पिपासा को शांत करने के लिए ऐसी कथाओं का प्रयोग प्रचलन पाया जाता है। किन्तु ऐसी कथाओं की संख्या अत्यधिक न्यून है। यदि वे हैं भी तो लेखकों या संकलनकर्ताओं से शर्म-भाव के कारण गुप्त रखी जाती हैं। क्योंकि नारी सुलभ लज्जा उनके अधरों पर ताले डाल देती है। ऐसी कथाओं को श्लेषात्मक अथवा रूपकात्मक पद्धति से अभिव्यक्त किया जाता है। मालवे में ऐसी अनेकों कथाओं का भी प्रयोग प्रचलन पाया जाता है जो सोलह पतियों की नार कहलाने का दावा करती हैं। ऐसी कथाओं में पन्द्रहगुन विद्या, पटेल अक्कल मोल लेवा ग्यो, आदि प्रमुख हैं।

नारी जीवन सम्बन्धी कथाओं के विशाल संग्रह से दो संक्षिप्त कथाएँ उमठवाड़ी प्रधान मालवी में यहाँ प्रस्तुत की जा रही हैं—

कूकड़ माकड़ की केणी

(प्रस्तुत कथा मालवे में "अमकार्‌या की आठें" के नाम से प्रचलित है। सुहागिनी स्त्रियां इस व्रत को धारण करती है। पुत्रवती होने की कामना से ही इस व्रत को किया जाता है। जब इस व्रत को "अंजोया" (उद्यापन करना) जाता है तब आठ नारियल बाँटे जाते हैं। ये नारियल नणदोई या जेठ (ज्येष्ठ) को दिये जाते हैं।)

एक कूकड़ थी, एक माकड़ थी। एक बार जो घोंसला था वां आग लगी। तो माकड़ी तो जाला के उपरे बेठगी ने कूकड़ी का अण्डा जलग्या। और माकड़ी का बच्चा बच निकल्या। कूकड़ी ने माकड़ी गाम में आके रेबा लागगी। पर माकड़ी का बच्चा जिन्दा था तो कूकड़ी के जलन होबा लगी। कूकड़ी ने सोचो के अणका बच्चा भी मरवा दूं। माकड़ी गरीब थी। एक दन उणने जेर १ का लड्डू बना के मोकल्या २। वी छोरा खाबा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लग्या । या माकड़ी अमकार्‌या की आठें को बरत करती थी । वी नी मर्‌या । भगवान ने उणके बचाइद्‌या शंकर पारबती ने ।

दूसरे दन कूकड़ी ने साप-बिच्छू टिपारा में भेज्या । ई माकड़ी-कूकड़ी बेन्या थी । के ई भँवरा हे ने चकरी हे । तो शंकर भगवान ने वी भँवरा-चकरी कर्‌दया । तीसरे दन उणने घोड़ा भेजा के छोराओण से कीजो के घोड़ा पे टेलवा जावे । पाछे से नोकर मोकल्यो के थों हूँ रुप्या दूँगा, तू उणा छोरा का माथा काट ला । नोकर पांची का माथा काटी लायो ने एक टोपला के नीचे रखके ने कूकड़ी गोड़ा का आड़े दे के बेठी; के हउ रांड म्हारे सरीखी बांझड़ी ३ रेगी । माकड़ी ने छोरा की बाट नारी ४ । अईं से शंकर-पारबती निकल्या । पारबती ने की के काओ माकड़ी तो अमकार्‌या की आठें को बरत करे, ई छोरा तो यां मर्‌या पड्या । उण के जिन्दा करो । शंकर भगवान साधू बण्या ने पारवती बणी मीनकी ५ ने कूकड़ी क्यां अलख जगायो । कूकड़ी चारनो भरके अनाज मेलवा कारणे निकरी । अतरे पारवती मूँडा ६ में उणका माथा भर के ल्याई ने संकर ने पाँची के धड़ से जोड़ के उणखे जिन्दा करीद्‌या ।

अब दूसरे दन कोई की छोरी मरी पड़ी थी तो कूकड़ी ने मंगाली और डोढ़ी में ओढ़ा के स्वांण दी ७ । ने माकड़ी क्यां समीचार मोकल्या के म्हारे छोरी हुई है । माकड़ी झगल्या टोपी लेके अई । माकड़ी उणी छोरी के उलांग ८ के घर में अई तो वा छोरी जिन्दी होके रोवा लागगी । कूकड़ी ने पूछो तू असो कां को बरत करे जो मनें दो-दो तीन-तीन बखत थारा छोरा छोरीए मार द्‌या तो तेने जिंदा करल्या, मैंने तो या मरी छोरी स्वाणी थी, ने थारा घाघरा की लावण लगी तो जिंदा होगी । माकड़ी के के मूं अमकार्‌या की आठें करूं । बस शंकर भगवान वणी माकड़ी ए टूट्या असा सबे टूट जो ।

अबोली पड़वां की केणी ९

एक राजो थो, ऊ घणों कंजूस थो । उणने गाँव में डोंडी पिटवादी थी के कोई भी एक मुठ्ठी दान पुन्न मँगता भिकारी के नी करे ओर जहाज भरवाँ चल्यो ग्यो । अणी के सात राण्यां थी । छः मानेती ने एक कोमानेती । कोमानेती रानी के अबोली को बरत आयो ऊंने दासी के की के नो मुठ्ठी गउँ ला । और पीस के पूड़ियां बनाई, शंकर पारबती की पूजा करी । वईं से महादेवजी साधू बन के आया और नो पूड़या सादू १० माराज के दे दी ।

अईं राजो जाज (जहाज) भर के आयो तो नदी के ओलाँग ११ नी आवे । जहाज नी चले । राजा से कोई बामण ने की के माराज । कोई दान कर्‌यो हो तो कबूलो ? तो जहाज चाले । राजा ने की के म्हैं तो डोंडी पीट के गयो थो कि कोई दान-धरम नी करे । फेर भी पुछवालां । छः रानी ने अन सब परजा १२ से पूछो तो सब नटग्या १३ । सब ने इन्कार कर्‌यो । कोमानेती रानी डरती अई ने उणने की के नो पूड़याँ एक सादू के दी थी । और नो पूड़याँ या केवा की देर थी के नदी पर तरवाँ १४ लगगी । उणको जाज ओले किनारे आग्यो । उणी दन से राजा रानी अबोली को बरत करबा लगग्या । १५

इस प्रकार मालवी के लोक कथा साहित्य की अपनी विशिष्टता है जिसमें मालवी माटी का मार्दव गंध-गौरव और गरिमा बिखरी पड़ी है । होनी चाहिए अनाविल दृष्टि, आस्थापरक सहजता एवं इस अनन्त प्राचुर्य को सहेजने समेटने की प्रबल आकांक्षा । मालवी का लोक-कथा साहित्य इस दिशा में शोधार्थियों को आमंत्रित कर रहा हैं ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१ डॉ. श्याम परमार : मालवी लोक साहित्य - पृ. ४६०

२ डॉ. चिन्तामणि उपाध्याय : मालवी लोकगीत एक विवेचनात्मक अध्ययन : पृ. ४६

३ डॉ. श्याम परमार : लेख-मालवी लोक कथाएँ : प्रकाशित 'आजकल : लोक कथा अंक' मई १९५४ पृ. ३७–३८ ।

४ डॉ. बसंतीलाल बंम : भारतीय लोक कथाएँ : अप्रकाशित शोधप्रबन्ध–पृ. ३८४ ।

५ इस लेखक द्वारा आकाशवाणी से, दिनांक ३१-१२-७० को प्रसारित, मालवी की गीत कथा वार्ता का एक अंश ।

६ डॉ. सत्या गुप्तः खड़ी बोली का लोक साहित्य : शोध प्रबन्ध, पृ. १७३

१ जहर, विष, २ भेजे, ३ बाँझ, पुत्रहीन, ४ देखरही, ५ बिल्ली, ६ मुंह, ७ सुलादी, ८ कूदकर, ९ मौनव्रत ,१० साधू, ११ इधर, १२ प्रजा, १३ मनाकर दिया, १४ तैरने लगीं, १५ करने लगे ।

—शोधार्थी
पंडित गली, सुसनेर
(जिला-शाजापुर)

• •

मालवी दोहे (छल्ला)

चँदा त्हारी चाँदणी सूती पलंग बिछाय ।
जद जागूं जद एकली, मरूँ कटारी खाय ॥ १ ॥
टींकी दे मेलां चढ़ी बिन काजल की रेख ।
सायब को सारो नइ, लिख्या बिधाता लेख ॥ २ ॥
चाँदनिया का चौक में गेरो बिके रे रुमाल ।
साजन हो तो मोलवे किन पे करूं गुमान ॥ ३ ॥
पिलसौदाँ, दीवो बरे, जालियां बड़ो रे उजास ।
जाय दुकाने सो रया रे कामनी पड़ी उदास ॥ ४ ॥
डेढ़ चांवल की खीचड़ी घी बिन कसोरे सवाद ।
म्हारा बाप की लाड़ली, पी बिन रयो न जाय ॥ ५ ॥
नदी किरारे केवड़ो नम नम झोला खाय ।
माँ सूगली का सायबा मां देख्या अन्न खाय ॥ ६ ॥
वाड़ी सूखे बाथलो कुएं सूखे कचनार ।
गोरी सूखे बाप के हीन पुरुष की नार ॥ ७ ॥
कच्ची केरी कचपची, पाकण दे दिन चार ।
काची को मत तोड़ जो म्हारो जोबन अकारथ जाय ॥८॥
चार खुण्या की बावड़ी भरी झकोला खाय ।
हाथी जैसा डुबि मरे, मूरख गोता खाय ॥ ९ ॥
तेल जले बत्ती जले नाम दिया को होय ।
गोरी तो बेटा जणे, नाम पिया को होय ॥ १० ॥

(डॉ. चि. उपाध्याय के अप्रकाशित संग्रह से)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गुजरात-मालवा के सेतु हमारे लोक गीत

— पुष्कर चन्दरवाकर

गुजरात में एक लोक गीत है जिसकी पंक्ति है —

'मेंदी ने वावी मालवे, ने रंग गयो गुजरात, मेंदी रंग लाग्योरे !'

मेंहदी मालवे में बोई गई है और उसका रंग गुजरात तक पहुँचा है। यह पंक्ति गुजरात के लोकगीतों की इस धारणा की प्रतीक है कि गुजरात और मालवा का सम्बन्ध अति प्राचीन है और मालवा गुजरात के जन-जीवन में भी व्याप्त है। मालवी गेहूँ तो गुजरात का विशिष्ट खाद्य है। गुजरातियों की आम धारणा है कि मालवी गेहूँ उत्तम, स्वादिष्ट और शक्तिवर्द्धक है। इस प्रकार गुजरात के अंगपोषण में भी मालआ का विशिष्ठ योगदान है।

अनुश्रुति प्रसिद्ध है कि गुजरात नरेश सिद्धराज जयसिंह ने जब उज्जैन पर चढ़ाई की तब वे उज्जैन के विद्वद्-मण्डल और स्थापत्य को देखकर अत्यधिक प्रभावित हुए। उन्होंने निश्चय किया कि गुजरात की राजधानी पाटण में भी ऐसे ही विद्वानों को एकत्रित किया जाय और रुद्रमहालय के निर्माण हेतु मालवा के शिल्प एवं स्थापत्यविदों को आमंत्रित किया जाय। यही सोचकर उन्होंने हेमचन्द्राचार्य को राज्याश्रय दिया और रुद्रमहालय के निर्माण हेतु मालवा के शिल्पशास्त्रियों को आमन्त्रित किया। इस प्रकार मालवा के शिल्प-शास्त्रियों एवं स्थापत्यविदों ने गुजरात की उस विशिष्ट शिल्पाकृति का निर्माण किया जो आज भी दर्शकों को स्तब्ध कर देती है। सिद्धराज जयसिंह का युग गुजरात में स्वर्णयुग है, उसका अंशतः श्रेय शिल्प एवं साहित्य को भी प्राप्त है। ये दोनों ही निधियाँ गुजरात में मालवा से ही आयात हुई हैं। इस प्रकार गुजरात के जनजीवन की परिव्याप्ति की जड़ों में मालवी रस की गन्ध और कला की सुरुचि विविध रूपों में व्याप्त है।

उज्जैन में स्थित सुप्रसिद्ध हरसिद्धि माता के मंदिर की तरह सौराष्ट्र के पश्चिम सागरीय तट पर स्थित म्याणी बंदरगाह के समीप भी हरसिद्धि माता का एक सुप्रसिद्ध मंदिर है। यहाँ कि हरसिद्धि माता के सम्बन्ध में लोक श्रद्धा है कि हरसिद्धि माता आरती के बाद शयन के लिए उज्जैन चली जाती है। और प्रातः काल फिर म्याणी बन्दरगाह स्थित मंदिर में उपस्थित हो जाती है। इस प्रकार धार्मिक आस्था की दृष्टि से भी गुजरात सौराष्ट्र के लोक जीवन का सीधा सम्बन्ध मालवा के साथ जुड़ा है, आज से नहीं अति प्राचीन काल से।

डॉ. श्याम परमार ने अपनी सुप्रसिद्ध कृति 'भारतीय लोक-साहित्य' में मँहगाई के बारे में एक गीत दिया है—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मँहगी के मारे बिरहा बिसरिगा, भूलि गई कजरी कबीर।
देखि के गोरी क उभरा जोबनवा, अब उठे न करेजवा में पीर। १

अब यह मँहगाई सर्वत्र व्याप्त हो गई है। इसने हमारे जन जीवन पर भीषण आघात किया है। क्या गुजरात, क्या मालवा और क्या अन्य प्रदेश। गुजराती गीतों में भी मँहगाई राक्षसी का बड़ा मार्मिक वर्णन है। जो छोटी-छोटी लड़कियों के मुखों से सुना जा सकता है। जो आर्तनाद डॉ. परमार द्वारा एकत्रित गीतों में है, वही गुजराती गीतों में भी सुन पड़ता है।

गुजराती विवाह गीत की एक पंक्ति है—

"माळवियो गोळ घेडी तारी जाने खूटवाडया, तोय न रीझे वर राजा।"

इस गीत में मालवी गुड़ की विशेषता का उल्लेख है। इसी प्रकार मालवी गीतों की बारहमासी का यह गीत—

"सखी लागो असाड़े मास, परभू वन चाल्यारे,
चाल्या चाल्या रे दुवारकानाथ हरि मंदर सूनो रे। २

में जिस द्वारिका और उसके मंदिर का उल्लेख हुआ है वह सौराष्ट्र में ही स्थित है। इस प्रकार गुजरात और मालवा का सम्बन्ध अति प्राचीन है। दोनों एक दूसरे के जन-जीवन में घुले मिले हैं। एक लोक-गीत में देखिए—

'चाँद गयो गुजरात, कि हिरणी ऊगेगा वई ऊगेगा। ३

चाँद गुजरात चला गया है, अब हिरणी निकलेगी। ये लोक-मानस के उद्‌गार हैं जो बिना आयास ही फूट पड़ते हैं। हृदय में यह प्रक्रिया कब होती है ? जब हमारे सुप्त चित्त में उसके संस्कार और चित्राँकन अत्यधिक घनिष्ठ होते हैं। और यही घनिष्टता है इन दोनों प्रदेशों गुजरात और मालवा में। इस घनिष्टता की व्यापकता के परिचायक तो वे लोकगीत हैं जो गुजरात और मालवा के कण्ठों पर विहार कर पारस्परिक भावात्मक एकता का अद्‌भुत परिचय देते हैं। यह भावात्मक एकता जनमानस की अपनी थाती है।

गुजरात और मालवा का बारहमासा देखिए। दोनों का विपुल भण्डार है, अब यह बारहमासा ग्रंथस्थ भी होता जा रहा है। सौराष्ट्र में स्व० झवेरचन्द मेघाणी ने यह कार्य किया है। उनकी कृति 'रढ़ियाली रात भाग ३' में ऐसे बारहमासी के गीतों तथा ऋतुगीतों को संग्रहीत किया गया है। मेघाणीजी ने उसे चारणी साहित्य का बारहमासा और लोक-साहित्य का बारहमासा दो भागों में विभक्त किया है। गुजराती लोकगीतों में बारहमासे के गीत अधिक हैं। डॉ श्याम परमार ने लिखा है कि "बारहमासी गीतों में प्रायः विप्रलम्भ शृंगार ही अधिक गाया जाता है।" ४ गुजरात के बारहमासा के लिए भी यह कथन सत्य है। स्व० श्री मेघाणी लिखते हैं कि स्त्रियों के लिए गेय 'महीना'–माहादि में विशेषतः वियोग के गान हैं। मिलन का आनन्द इसमें कम अवतरित हुआ है। ५ दोनों के कथन में पर्याप्त साम्य है।

गुजराती लोक साहित्य में स्व० मेघाणीजी ने अत्यन्त ही सराहनीय कार्य किया है। जो उनके द्वारा सम्पादित 'रढ़ियाली रात भाग–३' और' ऋतुगीतों' में पर्याप्त मात्रा में प्राप्त होता है। गुजरात के लोकगीतों में जो बारहमासे मिलते हैं उनमें से 'रढ़ियाली रात भाग ३' से एक बारहमासी गीत 'वाला' यहाँ दिया जा रहा है। इसके भावों का अवलोकन कीजिए–

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वाला ! मागशरे मथुरा भणीरे, मारे करमे आ कुबजा क्यां मलीरे ।
वाला ! पोसे सुकाणी हुँ तो रोषमां रे, ते दि नी फरूं छुं घणा रोष मां रे ।
वाला ! मा महिने मेली गीआ रे ! दीनानाथ नमेरी शुं थया रे !
वाला ! फागण होली है ये बले रे, दीनानाथ गोत्या क्यांव नव मळे रे !
वाला ! चैनरे चिन्ता थाय छे रे, धीरप राखुं त्यां जोबन वही जाय छे रे !
वाला ! वैशाखे वन विचरी रे, नार नानी ने मोटी जोवा नीसरी रे !
वाला ! जेठ आव्योनें हवे शुं करूं रे, दीनानाथ वन्या हवे नहि फरूं रे !
वाला ! आषाढ़ी धाम धोरिया रे, झीणा झरमर बरसे मेहुला रे !
वाला ! श्रावणे शेरियुं बळावती रे, नाथ ! आवे तो नेण भरी न्याळती रे ।
वाला ! भादरवो भर रंग मां रे, एनी उलट घणेरी मारा अंगमां रे ।
वाला ! आसो नां अंगवालीआं रे, नाथ ! आवो तो मारे मंदर जाळीआं रे !
वालां कारतके कान घरे आविया रे, माता जसोदा ने मन बहु भाविया रे !

यह बारहमासी विरह-संयोग की है । इसमें विरह की उत्कट स्थिति के दर्शन होते हैं । मालवी नारी ने माघ मास के लिए जो गाया है । "सखि लागो म्हावज मास बसन रितु अईरे, म्हारा प्रभुजी बिनायो कुण बसन रमावेरे !" यहाँ भी मालवी नारी के आर्त स्वर सौराष्ट्र-गुजरात की नारी के आर्त-स्वरों में मिलकर मुखरित हो उठे हैं । गुजराती नारी कह रही है कि आप कैसे क्रूर (नमेरी) बन मुझे छोड़कर चले गए हो ? कितनी करुणा है इस उलाहने में ! फागुन आते हैं तब नायिका का रोष और दुःख और भी सघन हो उठता हैं । इस सघनता में कितनी कसक है । यही लोक सारतत्व है । लोक उसकी उर्मियों, भावनाओं, वासनाओं को हृदयस्थित नहीं रख सकता । यही विरहजनित करुणा गुजरात और मालवा की नारी के विदग्ध उद्गारों के माध्यम से प्रकट हुई है । दोनों में बेहद साम्य है । अंत में दोनों में ही गीत का समाप्ति मिलन एवं सम्भोग श्रृंगार में की गई है ।

डॉ. परमार ने लिखा है कि "कृष्ण और राधा लोक-कवियों के प्रिय नायक-नायिका हैं । इन्हीं के माध्यम से वे अपने जीवन की साधारण असाधारण प्रेम सम्बन्धी अनुभूतियों को व्यक्त करते हैं ।" ६ यह कथन गुजराती बारहमासी के लिए भी घटित होता है । दोनों ही के लोकगीतों में कितनी आश्चर्य जनक समता है, यह विचारणीय है, क्योंकि मानव शास्त्रीय दृष्टि से समस्त मानव जगत में यह भाव प्रवणता समानता रखती है । एक जैसे भाव जगत में रमने वाली यह मानव चित्त चेतना कैसी समानान्तर है, इसका दूसरा रूप मालवा के 'सोहरगीत' और गुजरात के 'गगागाना' में दिखाई देता है । यह गीत सम्पूर्ण गुजरात में नहीं मिलता किन्तु उत्तर गुजरात और सौराष्ट्र के हालार परगने में मिलता है । इस लोकगीत की खोज शोध छात्रा कु. सुचेता बहन भादलावाला ने की है । इस 'गगा गाना' में कृष्ण और माता यशोदा का प्रतीक मिलता है । 'गगा गाना' के लोक गीत अभी तक अधिक प्रसिद्ध नहीं हुए हैं ।

मालवी लोकगीतों में "एक वालुड़ो देय" के साथ गुजरात के रांदलगीत का तुलनात्मक अध्ययन किया जा सकता है । इन दोनों गीतों मैं मातृत्व की आकांक्षिणी नारी की लालसा "एक बालूड़ी देय" ही के लिए है । गुजराती में तो इस गीत में 'पगली नो पाडनार' की कामना की गई है । इस प्रकार सौराष्ट्र गुजरात एवं मालवा की मातृत्वाकांक्षिणी नारी की भावनाएँ समान दिशा में ही प्रवर्तित हुई हैं ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'चटक चाँदणी सी रात ओ, गोरी तो रमवा नीसर्याजी म्हारा राज।' ८

मालवी गीत के भाव भी लगभग समान भाषा के साथ गुजराती गीत में विद्यमान हैं। हमारे इन लोकगीतों में सांसारिक जीवन, एवं दाम्पत्य जीवन के अनेकानेक चित्र समान भावभूमि पर उभरे हैं। जो हमारे सांस्कृतिक अन्तरावलम्बन के लिए सेतु का कार्य करते हैं।

इसी संदर्भ में दृष्टव्य हैं कतिपय अन्य गीत

१ बीरा म्हारा लेवा के आया
आछा आछा सगुन विचार्या
हो राज
ज्यद म्हारा वीरा काँकड़ आया
बागांरी दूब हरियाई हो राज
जद म्हारा वीरा द्वारे आया

द्वार–१।२०

२ ऊँचा हो आलीजा तमारा ओवरा
नीची बंधावा पटसाल
राजारा मेला में सारस रमी रया

–मालवी लोकगीत पृ. ११

३ बागाँ में बाजे जंगी ढोल
सेर में बाजे सरनाइ
आयो म्हारो मोड़ी जायो बीर
चूनड़ लायो रेशमी–३।७

४ गाजोनी गडल्यो रे म्हारी माई
मेवलो नी बरस्यो
म्हारी माई मेवलो नी बरस्यो
आँगन में कीचड़ क्यों मचों।

—१।५०

५ **संदेश वाहक लाल परेवा**
उड़ उड़ रे म्हारा लाल परेवा
नगर बधावो दीजे रे
गाँव नी जाणू नाम नी जाणू
कीना घर दूं बधावो जी

मालवी लोक-गीत–१४

१ दादा धीडी दखीआं
वीर ने आणे मेल्य
मलूगर आँबलीओ
वीरो आव्यो सीमड़ीए
सी मुं लेरे जाय मलूगर....

रढ़ि १, पृ. ५७

२ ऊँची मेडी ते मारा सायबानी रे
लोल
नीची नीची फूलवाड़ी झुकाझूक
हूँ तो रमवा गई ती रे
मोती बाग मां रे लोल।

रढ़ि २ भूमिका पृ. १८

३ वाग्यां वाग्याँ जंगीना ढोल
शरणायुं वागेरे सरवा सादनी
उड़े उड़े अबील गुलाल
दारुड़ो उड़े रे मोंघा मूलनो।

चूंदड़ी भाग २, पृ. २७

४ काँई मेहुलिया नो बरस्यो
काँई बीजड़ली नो झबकी रे
काँई वाहोलिया नो वाया रे
काँई आवडलां ने आवडा रे

चूंदड़ी १, पृ.४०

५ **संदेश वाहक भ्रमर**
डुंगर कोरी ने नीसर्यो भमरो
जाजे रे भमरा नोत रे
गाम न जाणुं वेनी नाम न जाणुं
किया बा रायां घेर नोत रे।

–चूंदड़ी भाग १, पृ. ३२

गुजरात में विवाह मंगल के समय चाक-बधावा, मायरा, माण्डवा, पीठी, नावण, तोरण आवतां, सामैया (मालवी समेलो) हस्त-मैलाप, चोरी (मालवी चँवरी) गृहशांति, प्रभाती वर घोड़ा (वरयात्रा) जान मां (बरात), लग्न आदि प्रसंगों पर गाये जाने वाले गीतों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में भी अद्भुत साम्य दिखाई देता है। (चूनड़ी भाग २ भूमिका) । गीतों में प्रसंग, भावना आदि के साम्य अनेक शब्दावलियों का एक समान पाया जाना भाषा, संस्कृति एवं अविछिन्न परम्परा ही का परिचय देता है। (मालवी लोकगीत एक अध्ययन : डॉ. चिन्तामणि उपाध्याय, पृ. ४२२)

आज जब हमारे देश में सर्वत्र व्याधि महामारी एवं छूत की बीमारी की तरह प्रान्तीयता उभर रही है। देश के कतिपय राजनीतिज्ञ जब इसमें योगदान देकर इस विभिषिका को और भी विकृत स्वरूप प्रदान कर रहें है, तब हमारे ये लोक-गीत जो समाज की जीवन धारा संपोषित करने वाले है हमने टूटते हुए सामाजिक जीवन और बिखरती हुई इकाईयों को जोड़ने वाले सच्चे सेतु बन सकते है । हमारा यह सांस्कृतिक दाय भाग अखूट हो अमर हो और इनकी रस निर्झरिणी सतत प्रवाहशी हो यही मेरी मंगलाशा हैं।

पाद टिप्पणी—

रीडर–गुजराती लोक-संस्कृति,
लोक-साहित्य एवं चारणी साहित्य
सौराष्ट्र विश्व विद्यालय
राजकोट (गुजरात)

---

(१) भारतीय लोक साहित्य डॉ. श्याम परमार (प्रथम संस्करण) पृ. १००
(२) वही ,, (वही) पृ. ११२
(३) लोकायन–डॉ. चिन्तामणि उपाध्याय पृ. १६४
(४) भारतीय लोक-साहित्य डॉ. श्याम परमार पृ. ११०
(५) ऋतु गीतो-संपा. झवेरचन्द मेघाणी प्रवेशक पृ. ५
(६) भारतीय लोक-साहित्य डॉ श्याम परमार, पृ. ११३
(७) 'वीणा", ग्रामसंस्कृति-अंक (वर्ष ४४ अंक ४–५) पृ. ५३
(८) वही ,, ,, वही पृ. ५२

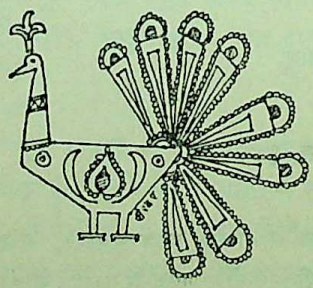

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मत रो | चन्द्रशेखर दुबे

खिलाड़ी:— (१) मामो

(२) भाणेज

(पड़दो एक मालवी घर में खुले। पड़दो खुलता खेम, मालवी वज ना छींतरा पेरियों एक मामो, भींत ना टेके छादरी पे बैठो बीड़ी पीतो नगे आवे। विना खोळा में एक छोटो सो छोरो रे। एरे-मेरे छोरा ना खेल-खिलौना पड़िया रे।

जीवता छोरा ती कदी नाटक लायक काम—टेम-टेम पे रोवानो–नी वणे तो चाबी-वाला पुतला ती बी काम चलाड़ी सको हो।)

(थोड़ीक बार वे ने खोळा में नो छोरो रोवा मंडे।)

मामो—(वेगी-वेगी बीड़ी पीते-पीते) काईं वई ग्यो रे ?.....बीड़ी बी हऊपटी नी पीवा दीदी म्हने....ए ले...थारी नाराजी है, तो नी पियूं बीड़ी। (बीड़ी फेंकी दे)

मामो—ले अब तो चुप वई जा ?...मत रो बेटा। (छोरा नो रोणो फेर बी बन्दनी वे)

मामो—नी भेवा दे तो ले ऊबो वई जाऊँ ? (ऊबो वई ने खांदे छोरा ने लई ले।)

मामो—(पीठ ठपकारते-ठपकारते)....ले बेटा अबे तो चुप वई जा ?....तू तो राजा बेटो है नी ?....थारी जीजी अब्बी आवे।....थारा हारू पाणी लेवा ने गई है।....अब्बी आवे बेटा....रो मत। थने तर्हे [1] लागी है नी ? थने थारी जीजी पाणी पावेगा।

(छोरो फेर बी चुप नी वे)

मामो—एवो काईं वई ग्योरे थने ?....अबी तो हऊ मजा में बैठो थो....ने अबे हांगेड़ा पाड़वा मंडीग्यो। (छोरा नो मूंडो अपणा हामे करे)

मामो—कारे म्हने नी ओळखे कईं ?....हूँ थारो मामो हूँ, रे मामो।....ओलखाण करले बेटा। म्हारतीज काम पड़ेगा थने।....थारी जीजी तो केती थी के तू मामो केवा मंडी ग्यो ?....बोल मा....मा।....हाँ....मा–मा। (छोरा नो रोणो घड़ी एक थमे)

मामो—हाँ....यूं जरा। भला मनक हरकोरे [2] वेंडिया [3] हरको, एं....एँ मती कर। नी तो लोग वेंडियो केगा थने। (छोरो फेर रोवा मंडे)

मामो—अरे पण थने वेंडो थोड़ी किदो रे म्हें ?....म्हें तो एक बात करी। एतरा मेंज थने बुरो लागीग्यो ? तू तो बड़ो मिरच्यो है रे ! यूं केतर काम चलेगा ?....एवी अक्कड़ बताड़ेगा तो हूँ मेल दूंगा दो एक। हाँ ! म्हारा कने एवा लाड़ नी है। तू एवा नखरा थारा दाजी ने, ने थारी जीजी ने बताड़िया कर ! म्हारा हामे नी चालेगो एवो मिजाज ! एवा गेल्या लाड़ थारा दाजी ने जीजी कने वेगा। (छोरो और जोर-ज़ोर ती रोवा मंडे)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मामो—अेल्लो ! ....दाजीनो ने जीजी नो बुरो लागो काईं ?....म्हें काईं विनाने गेल्या थोड़ी किदा रे ।....मतरो बेटा....थारा दाजी हऊ....थारी जीजी हऊ....तू हऊ ।.... गेल्यो तो यो थारो मामो है बस ? (छोरो चुप वई जाय)

मामो—वा बेटा !....तूतो घणो हुसियार हे रे ?....अबीतीज थारा ई गुण है ?.... जद तो तू नाम निकाळेगा बेटा !....तू पक्को नम्बरी निकळेगा । वेंत [४] भरनो नीव्यो ने अबी ती एवो हमजवा मंडी ग्यो ?....पण याद रख बेटा....गेल्यो हूँ नी हूं । कई दीदो तो काईं व्यो ?....गेल्यो तो तूज है....थारा दाजी बी गेल्या....थारी जीजी बी गेली....हाँ....हाँ टगर-टगर काईं देखे म्हने ?....हाँची[५] कई रियो हूं । तम सब गेल्या ।....हमारो गोपाल्यो कदी रोवेज नी....ने तू तो एँ....एँज करे जाय ।....रोतल्यो.... (छोरो फेर रोवा मंडे)

मामो—अरे पर दादा तू तो गजब करे रे ! बोलवाज नी दे ?...तू नी है रोतल्यो बस ? हमारो गोपाल्यो रोतल्यो है ।....तू तो राजा बेटो है ।....देख थारी जीजी ने देखाँ ।....मत रो बेटा ।....वा अई री देख, वा कूण है ?....थारी जीजी है ?....ऊँ हूँ वातो कणाकूण [६] है ? थारी जीजी देख कद नी गई....विने थारी फिक्करज नी है ।....कईगी थी के अब्बी अऊँ । विनो अब्बी अबी लक व्योज नी ? (छोरो जोर-जोर ती रोवा मंडे)

मामो—अेल्लो....थें तो घणो रागड़ो [७] जोत्यो रे....म्हने नी मालम थो के तू एवो दुख दे गो ? थारी जीजी ने म्हें पेलां किदो थो के म्हनें छोरा-छोरी रम्माड़ता [८] आवे नी है....पण वणे म्हने आफत में लाखी दीदो ।....तू अबे हूदीतरे [९] चुप वई जा नीतो हूँ थने एक-दो मेल दूँगा आज ।....रोवा सिवा रमवा नो तो नामज नी जाणे !....ले रम । ....ई थारा ढ़ेलड़ा पड़िया....या चूं चूं करती मेंम....यो वांदरो....ले रम !

(बालक नो रोणो थोड़ो क थमे)

मामो—हाँ....बेटा....यूँ रम्मेगा तो हूँ थने अझी खेल खिलोणा लई दूँगा। ....हमारा गोपालिया कने नाचणे वाळी मेम है ...थने बी लई दूँगा वा ।....राजा बेटा ने रोणो नी चइए ।....देख रोवा ती मूंडो लाल सुरख वांदरा [१०] हरको वईग्यो। रेंटड़लो बी अईग्यो...देख ।....थारी मेम ना झगल्या ती पोंछी दूँ....ले ।

(बालक फेर पाछो रोवा मंडे)

मामो—रोवे कई रेंटड़लो पोछ्यों रे सेबड़िया । म्हने कई मालम थो के थने रेंटड़लो पोछणो हऊ नी लागे ? नी तो हूँ थने एवोज सुगल्यो रेवा देतो ।.... ले अब चुप वईजा....अब नी पोंछूँगा दादा । मूँडा में जाय रेंटड़लो तोबी नी पोंछूँगा ।...अरे पण अब तो बस कर रे, दादा ! म्हारो माथो दुखवा मंडीग्यो....पण थारो मूंडो नी दुख्यो। घणो कट्टर है रे तू । ले रम । यो देख, यो रियो फुग्गो। केवो बाजे देख....चूँ चरड़....चूँ चरड़....और या देख चिकी चूँ...चूँ बोले .. ऊ कागलो-देख डाळ पे बैठो ।

(बालक चनीक बिलमे पण पाछो हंगेड़ा [११] पाड़वा मंडे) मामो—एल्लो ! जेतरी खुसामत करो वेतरो खरावड़ोज पड़तो जई रियो है । तो रो । हूँ अब खुसामद करवा वाळो नर नी हूँ । रो थारती जेतरो रोवाय.....रो । हूँ अबे थने नो मनाऊँगा ।.....हाँ.....ऊँ.....ऊँ.....ऊँ...अझी जोरती ऊँ.....ऊँ.....ऊँ तू कई रोवेगा हूँ थारा ती भी जोर ती-जोर ती रोऊंगा । (खूब जोर से) ऊँ.... ऊँ.....ऊँ.....

(बाळक चकरई ने रोणों बन्द करदे)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मामो—ले बेटा····हरइ दिदो नी थने ? अबे थारी कूंची हाथे अई। अब योज मंतर वापरूँगा हूँ।····रो भलई अब तू।···भूली ग्यो बेटो अबे रोणो ? ····अबे अई थारी नस काबू में।

(बाळक रोणो पाछो उगेरे [१२])

मामो—हाँ डरावे कई····भलेई रो।····अब चुप करवा नों मंतर हींकीग्यो हूँ। देख वईजा चुप ?····नी वे तो ले हूँ बी रोऊँ।····ऊँ····ऊँ····ऊँ····ऊँ····ऊँ····ऊँ·····

(बाळक नो रोणो फेर बी नी थमे····उलटो बड़तोज [१३] जाय)

मामो—कई बात है····यो मंतर बी काम नी करतो।····ठीक है····अबे तो तू म्हारा हाथ नी मारज खायगा। थारी जीजी भलेई कांई बी को; तू जो म्हने तळेगा तो हूँ अबे धमेड़ीज [१४] दूँगा।····वई जा चुप।····चुप। (चीखीने) चूप।

(बाळक डरीने चुप वई जाय)

मामो—वइग्यो नी चुप।····हूँ पेला केतो थो के देख वईजा चुप। नी मान्यो तो डांटणो पड़ियो।

(बालक डरते-डरते ठणकणे [१५] लगे)

मामो—अबे नी डांटूगा वईजा चुप।····हूँ थने गोळी लई दूंगा। बिस्कुट लई दूंगा। तू म्हारो लाड़को बेटो है।····रो मत हूँ थने गाणो हुणऊँ। हुण····पण देख म्हने गाणो आवे नी है···दांत मत काड़जे [१६]।····हूँ थारा हरको थो जद म्हारी जीजी गाती थी···· सोईजा रे नाना झोळी में····थारी जीजी गई होळी में। सोई जारे नाना घड़ीक, थारी जीजी खई ले घड़ीक।

(बालक नो रोणों पाछो शुरू वे)

मामो—म्हारो गाणो पसन्द नी आयो ले देख थारोज गाणों हुणउ।···हाँ थारो नाम करन्यो है नी ? अबी करणसिंग नी करन्योज है तू। थने जद दाड़ी मूछ फूटी आवेगा नी जद तू करणसिंग वई जायगा। अबी तो करण्योज है। तू जो यूं रोवेगा, तो थारी रोतलीज लाड़ी लऊँगा। वईजा चुप। नी मानें ? तो ले गाणो हुण।····करन्या····धरन्या····फरन्या हरन्या···बरन्या····तरन्या····सरन्या····मरन्या···नी नी यो खोटो लबज निकली ग्यो···· जीण्यो।····म्हारा दादा अबे तो चुप वईजा ? आखी वाराखड़ी वाँची दी रे।

(बालक जोर जोरती और भी हंगेड़ा पाड़वा मंडे)

मामों—अेल्लो ! तू तो कमाल नो छोरो निकल्यो भई। .... ले गीत पसन्द नी थने, तो नाच वेवा दे। (छोरा ने लई ने नाचे)

मामो—ढमाक ढम भई, ढमाक ढम ! ....नाच म्हारा करण्या ढमाक ढम !!

(रोणो थोड़ो थमे)

मामो—वा ! बेटा तू पक्को चालबाज है। ....तू म्हने नचाड़णो चातो थो। ठीक हे बेटा करले आज थारा मन नी। आज तो हूँ फँसी ग्यो हूँ। थारी जीजी अई जाय फेर हूँ थारी खबर लूँगा। अबे तू छानोमानो [१७] भईजा। अबे हूं थारानी डरवा वाळो नी हूँ। ....हूँ अबे गऊँगा बी नी....नाचूँगा बी नी....बात तक नी करूँगा थाराती....बीड़ी पियूँगा हूँ। ....आज तो थें खासी मजूरी करई लीदी म्हार ती। ....अबे बीड़ी पी लेवा दीजे। (बीड़ी मूंडा में ले, ने हळगावा हारू काड़ी खींचे के पाछो बाळक हंगेड़ा पाड़वा मंडे)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मामो—वारे बदमास ! ...बीड़ी पीवा नो टेम आयो के फेर रोवा मंडियो तू ? ठीक हे। रो। अबे हूँ थारी नी हुणूंगा। (बालक नो रोणो हजू बड़ी जाय)

बस रे नखेतरी ....बस कर अब तो। ....नी पीयूँ बीड़ी बस। (घबरई ने खोळ। में ती बाळक ने मामो परे करे)

मामो—हे रे ! नालायक तो इना हारू रोई रियो थो, तू जद नो ? पेलांज कां नी कई दिदो। म्हारी धोती नो नास मार दिदो। चाल अबे। हूँ बी थने ठंडा पाणी तू हंपड़ऊँगा [१८]। चाल। ....अबे केसो चुप वई ग्यो मिनको [१९]। ....बदमास।

(पड़दो धीरे....धीरे पड़े।)

(अणा नाटक ने जो चावे सो खेले। पण लेखक ने पेलां खबर जरूर करवा नी किरपा करे।)

२४२, तिलक नगर, इन्दौर–१

---

(१) प्यास, (२) सरीखा रह, (३) पागल (४) बालिश्त भरका तो नहीं हुआ, (५) सच, (६) न मालूम कौन (७) राग छेड़ा, (८) खेलाते, (९) सीधी तरह (१०) बन्दर, (११) रोना शुरू (१२) शुरू करता है, (१३) बढ़ता ही जाता है। (१४) मार दूंगा (१५) ठनकना, (१६) हँसना मत, (१७) चुप, (१८) स्नान कराऊँगा, (१९) बिलाव।

● ●

● हलदी का गीत

तम ओ सरीखा कोइ नहीं !

थारो रूप राणाजी बखाण्यों ओ गोरी लाड़ी तमओ [१] सरीखा कोई नहीं।
थारो सीस बागड़ियो नारेल [२] ओ गोरी लाड़ी तमओ सरीखा कोई नहीं।
थारा ललवट [३] सूरज ऊग्योओ गोरी लाड़ी तमओ सरीखा कोई नहीं।
थारी आख्यां आम्बा केरी [४] फांक ओ गोरी लाड़ी तमओ सरीखा कोई नहीं।
थारी नाक सुवा केरी चोंच ओ गोरी लाड़ी, तमओ सरीखा कोई नहीं।
थारा होठां पर हिंगरू ढोर्‌यों [५] ओ गोरी लाड़ी तमओ सरीखा कोई नहीं।
थारा दांत डाड़म केरा बीज ओ गोरी लाड़ी तमओ सरीखा कोई नहीं।
थारी जीब नागरवेल रो पान ओ गोरी लाड़ी तमओ सरीखा कोई नहीं।
थारो हिवड़ो [६] सांचे उत्यार्‌यो [७] ओ गोरी लाड़ी तमओ सरीखा कोई नहीं।
थारो पेट पवन केरी पोळी ओ गोरी लाड़ी तमओ सरीखा कोई नहीं।
थारी बायां [८] चम्पा केरी डाल ओ गोरी लाड़ी तमओ सरीखा कोई नहीं।
थारी आंगर्‌यां [९] मूंगा केरी फल्यां [१०] ओ गोरी लाड़ी तमओ सरीखा कोई नहीं।
थारा पांव देवरियारा थंम [११] ओ गोरी लाड़ी तमओ सरीखा कोई नहीं।
थारो रूप राणाजी बखाण्यों ओ गोरी लाड़ी तमओ सरीखा कोई नहीं।

प्रस्तुत लोकगीत वधू की हल्दी के समय उसके अंग-प्रत्यंग की शोभा का वर्णन करते हुए उसे अनुपमेय बताते हुए गाया जाता है। इस लोकगीत का शिख-नख वर्णन सचमुच हमारे प्राकृत, अपभ्रंश एवं संस्कृत कवियों के नायिका-सौन्दर्य वर्णन से किसी भी प्रकार कम नहीं है। (● सौ. मनोरमा उपाध्याय 'रमा' के संग्रह से साभार)

---

१ तुम्हारे, २ नारियल, ३ ललाट, ४ की, ५ हिंगलू ढोले हुए सूर्खलाल, ६ हृदय, ७ सांचे में ढला, ८ बाहु, ९ अँगुलियां, १० मूंगफलियों सी पतली, ११ देवस्थान के स्तम्भ (पवित्र)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रीमती सुशीला जैन

मालवी लोक गीतों में नारी

नारी का जीवन निरन्तर संघर्षों की एक विलक्षण कहानी है । उसके त्याग को भुलाया गया है और उसके दर्द की कथा को कल्पित कहकर सबने ठुकराया है । सन्तों ने नारी की जी भर निन्दा की है और इसे नरक का द्वार कहकर पाप की गठरी बताया है । मनुष्य ने अपनी प्रशंसा करते हुए नारी को अवगुण की खान तथा वंचना की काली कोठरी कहा है । यह सब सुनकर ही तो प्रत्येक युवती भगवान से यही कहती है कि 'तिरिया जनम जनि दइयो मोरे रामा ।' पुत्र-जन्म के अवसर सारा परिवार उल्लसित हो उठता है, लेकिन पुत्री के जन्म से चारों ओर उदासी छा जाती है । इसी सन्दर्भ में निम्नलिखित भोजपुरी लोक-गीत दृष्टव्य है:—

जाहि दिन बेटी तोहार जनम भइले, पेडुरी मोर घहराइ ए ।
सासु ननद घरे दिअरो न बारेली, उहो परभू बोलेल कुबोल ए ।
भइले बिआह परेला सिर सेनुर, नव लाख मांगे दहेज ए ।
घर में के भांडा आंगन देइ पटकब, सुतरो के धिया जनि होइ ए ।
जो हम जानतो कि धिया कोखि जनमि है, पिअंती हम मरिच झरार ए ।
मरिच के झारे झुरे धिआ मर जइती, टुटी जइते गरे हुआ सन्ताप ए ।

नारी आज तक यह नहीं समझ पाई है कि उसके प्रति लोक-मानस में इतनी घृणा क्यों है । स्त्री ने फटे कपड़े पहनकर जिन्दगी गुजारी है और आज भी गुजार रही है । रमणी ने अपना सर्वस्व अर्पित कर अपने आपको नगण्य समझा है, कामिनी ने केवल अपनी सांसों को गतिशील बनाये रखने के लिए सूखी रोटियाँ खाई हैं और ललना ने कभी सुख-भोग की लालसा ही नहीं की है । फिर इस त्यागमयी नारी को इतना घृणित क्यों कहा जाता है । सामाजिक प्रपीड़न से नारी को जो व्यथा हो रही हैं उसके प्रति कितनों का ध्यान आकर्षित हुआ है ? यह विचारणीय है । स्वार्थ परायण सामाजिक नेताओं के कुकृत्यों के लिए नारी क्यों दण्डित की जा रही है ? समाज-सुधार के नाम पर दुहिता को क्यों कोसा जा रहा है ?

अवगुण की खान क्या यह हृदयहीन पुरुष नहीं है ? विलासिनी कहकर नारी को अपमानित इसी नर ने किया है ! नारी के त्याग और बलिदानों की कहानियों को मिथ्या बताने वाला यही स्वार्थी नर है । जिसकी वह ही धात्री है ।

युग-युगों से अपनी छाती में व्यथा को छिपाए हुए इस 'अबला' ने लोक-गीतों के स्वरों में निज विह्वलता को व्यक्त किया है और इस निष्पक्ष अभिव्यक्ति में नारी के करुण-क्रन्दन का ही बाहुल्य है ।

अन्य प्रदेशों के लोक-काव्य के समान ही मालव के लोक-गीत नारी के क्लेश-जनित उद्गारों से परिपूर्ण हैं ।

जनक-जननी की सुखद छाया में पली-पोषी पुत्री जब विवाहित होकर ससुराल में जाती है तभी उसके दुःखी जीवन का प्रारम्भ होता है और उसकी अभिलाषाओं, इच्छाओं, कामनाओं तथा आदर-सत्कारों के सामने कई प्रश्नवाचक चिन्ह लग जाते हैं । इस नए गृह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में वह किस-किस के सामने नमित होकर अपने अस्तित्व को सुरक्षित रखे, छुई-मुई सी लजीली वधू कुछ समझ नहीं पाती है। सास की फटकारें, ससुर की दुतकार, ननद के उलाहने और जेठ-देवर की मनुहारें इस चमेली सी कोमल रमणी को बिलख-बिलख कर रोने के लिए विवश कर देते हैं, लेकिन वह अबला बनकर सब कुछ सहलेती है। इस नए जीवन में न वह किसी से खुलकर बातें कर सकती है और न अपनी किसी सहेली से दिल की व्यथा कह पाती है। पूर्ण नियन्त्रण इसके ऊपर रखा जाता है। वन्ध्या होना सचमुच नारी के लिए अक्षम्य अपराध है। इस नारकीय अभिशाप के लिए तो वह एकाकी अपराधिनी-मानली जाती है। पति तो सदा निर्दोष कहा जाता है। फलतः एक पुत्र के लिए बाध्य होना पड़ता है। देवालयों के पत्थरों को वह पूजती है और टोना-टोटकों में वह समाहित हो जाती है। निम्नस्थ मालवी लोक-गीतों में मालव की एक वधू अपनी मानसिक कथा को कहती हुई शीतला माई से एक पुत्र की याचना करती है:—

एक बालूड़ा के कारणे, म्हारे सुसराजी बोले बोल
एक बालूड़ा के कारणे, म्हारे सासुजी बोले बल
एक बालूड़ा के कारणे, म्हारे जेठानी बोले बोल। माई म्हारे एक बालूड़ो दे।
एक बालूड़ा के कारणे, म्हारे जेठजी बोले बोल।
एक बालूड़ा के कारणे, म्हारे देवरजी बोले बोल।
एक बालूड़ा के कारणे, म्हारा सायवजी लावे लोढ़ी सौत। माई म्हारे०

नारी की व्यथा को माता शीतला ने समझा और उसे आशीर्वाद देकर उसकी गीली आँखों को पोंछा। नारी ही नारी की तड़पन को समझ पाती है:—

सीतला ने दियो अम्मर पालणो, बड़ी माता ने अम्मर फूल, माई म्हारे०
कठे बन्दाऊ माता पालणो, कठे बंदाऊ रेसम डोर ?
ओरां बन्दाऊ ए माता पालणो, पटसारां बंदाऊं रेशम डोर।
हिरती फिरती माता हुलरावती, म्हारो हियो हिलोरा लेय। माई म्हारे०
काम करन्ता चित्त पालणे ओ माता, किनने राखूं रखवार। माई म्हारे०

सौत का दर्द नारी के लिए बड़ा गहरा होता हैं वह सब कुछ सह लेती है लेकिन अपने पति को अन्य रमणी के साथ वह स्वप्न में भी नहीं देखना चाहती है। कहा भी तो है कि "मिट्टी की भी सौत कष्टदायिनी होती है।" विवाहित होने पर बहू को यह भी कष्ट भोगना पड़ता है। चौमासे में पत्नी अपने जीवन-साथी से घर में ही रहने के लिए अनुनय-विनय करती है लेकिन उसके मन में तो वन की कोयलिया बस गई है। पति को परस्त्री पर मोहित होते देखकर वह गहरी साँसें लेने लगती है और कहती है कि मैं उस कोयल को डाल पर मरवा दूंगी। निम्नस्थ मालवी लोक-गीत इस सन्दर्भ में उल्लेख्य है :—

'सावन को बरसे मेवलो भादवा की चमके गाज,
याँज रेवो बाईजी का बीर, अब के चौमासे घर रहो।
जाओ तो मारूजी राँदू खीचड़ो, याँज् रेवो तो मोती चढ़्या भात।
जीम चल्या थाँको खीचड़ो, रेवा दो मोती केरा भात।
वन की कोयलड़ी म्हारा मन बसी।
कोयल को डालें मराऊ म्हारा पिया भड़की रया। ओ रनिया गेली हुई।
थारे मारे की कोयल नी मरे, उड़-उड़ परबत जाय।
जाओ तो मारुजी ढालू ढोलियो याँज रेवा तो फूलांरी सेज।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जाओ तो ओढूं चूनड़ी ओ पिया, रेबो तो ओढूं दखणी को चीर।
देख चल्या थारी चूनड़ी, रेवा दे दखणी को चीर।
साँप ने छोड़ी कांचली, नदिया ने छोड़ी है करार, बालम ने छोड़ी गोरी नार।

इसी पहलू का दूसरा चित्र प्रिय की भायेली (प्रेमिका) की नारी जनित ईर्षा की अभिव्यक्ति का है। प्रिय की निष्ठुरता प्रिया भायेली का एकान्त सेवन उसके जीवन के लिए उस समय दूभर हो उठता है जब प्यासा पपीहा अपने कंठ में सम्पूर्ण व्यथारस घोलकर बोल उठता है। इस गीत में प्रिय-प्रेयसी (भायेली) की लाग-डांट, मार्मिक उत्तर-प्रत्युत्तर और बढ़-चढ़ कर हृदयोद्गारों की अभिव्यक्ति दर्शनीय है—

भँवर म्हारे मेलां आजोजी, मैं मेलां फिरूं अकेली पपइयो बोल्योजी।
भँवर म्हारे पनघट आजोजी, मैं पनघट फिरूं अकेली पपइयो बोल्योजी।
भँवर म्हारे बागां आजोजी, में बागां फिरूं अकेली पपइयो बोल्योजी।
चतर म्हारे सेजां आजोजी, मैं सेजां फिरूं अकेली पपइयो बोल्योजी।
भायेली म्हारी किसबिध आवांए, म्हारी परणी करे लड़ाई पपइयो बोल्योजी।
भँवर थांकी परणी मरजोजी, थांकी भायेली वंश वधाड़े पपइयो बोल्योजी।
भायेली म्हारी तूइ मरजाजेजी, म्हारी परणी वंश वधाड़े पपइयो बोल्योजी[1]

प्रेयसी अपने प्रिय की गृहपत्नी के अमंगल ही नही उसके मरण तक की कामना करते हुए कहती है कि वह उसके वंश की वृद्धि करेगी; किन्तु प्रिय इस बात का खण्डन करते हुए उसे उत्तर देता है कि वंश की वृद्धि तो उसकी परिणीता ही करेगी और वही उसकी नैतिक संतान होगी। इस लोक-गीत में प्रेयसी की सौतिया डाह और परिणीता के प्रति प्रिय के सामाजिक दायित्व के बोध की अच्छी झलक मिलती है। परकीया नारी कभी भी स्वकीया का स्थान नहीं ले सकती।

इसी प्रकार सौत के प्रति नारी मानस की ईर्षालु वृत्ति की झलक इस गीत में देखिये—

ओजी सुख प्यारी जी का मेलां मति जाजो ओ, राज म्हारी भांगड़ली।
नद्दी किनारे बैठा बना मारूजी बैठा-बैठा भांगड़ी घोटावे, ओ राज म्हारी भाँगड़ली।
आप पियो ने ढोला, साथका ने पावो मारुणी ने अदरख चखाओ, ओ-राज म्हारी भांगड़ली।
भांग रंगीली ढोला, भाँग छबीली, भाँग भरूड़े भाई ओ राजा म्हारी भांगड़ली।

पत्नी प्रिय की भांग पीने की इस वृत्ति को भी बर्दास्त कर लेती है किन्तु वह नहीं चाहती कि ऐसी हालत में भी वह अपनी प्रेयसी (भायेली) परकीया के महल में जावे। वह तो भांग के मधुर रस की प्यासी भी नहीं है। अपने लिए तो वह अदरख के कड़ुवे रस को भी स्वीकार कर लेती है, बशर्ते कि उसका प्रिय घर पर ही रह कर मित्रों के साथ खूब भांग पिये। और सुख प्यारी (भायेली) के महलों में न जाए।

अनमेल विवाह भी तो नारी की व्यथा का एक प्रमुख कारण है। बड़े दहेज की पूर्ण व्यवस्था न होने के कारण सुन्दर कन्या को अल्पायु बालक के साथ ब्याह दिया जाता है:—

दारी बांगड़ सरिकी नार, बालम छोटा सा।
मर जावे त्हारा माय ने बाप, म्हारे लाजा मती मारो भरतार। बालम०

डॉ. चिन्तामणि उपाध्याय के शब्दों में 'सामान्य वधू के जीवन का जहाँ तक प्रश्न है उसमें सुख के क्षणों का स्थान नगण्य ही है। उसके जीवन का अधिकांश भाग अभिशाप

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की छाया में ही व्यतीत होता है। लोक-गीतों के वधू वर्ग ने अपनी वेदना के चित्रों को भी प्रस्तुत किया है। अपने प्रियतम को पाकर वह सुखी जीवन बिता सकती है किन्तु सास के कठोर व्यवहार एवं कटुतापूर्ण स्थिति के कारण वह अपने मायके को भुला भी नहीं पाती।....कठोर सास तथा ईर्षालु ननद, पत्नी की मानसिक व्यथा के मुख्य कारण हैं।

इन दो पात्रों का (सास और ननद का) लोक-गीतों में सबसे अधिक घृणा पूर्ण एवं निन्दनीय पात्रों के रूप में चित्रण हुआ है। वधू वर्ग की सम्पूर्ण प्रतिशोधात्मक एवं आक्रोशपूर्ण भावनाएँ सास के प्रति उग्रतम रूप में फूट पड़ी हैं। [२]

(१) "थें बाईजी चुगलीखोरा, चुगली करता रीजोजी।"
(२) "लाड़ू म्हारा सुसरा, पेड़ा देवर जेठ।
घेवर मोती सायबा, नणदल खारी सेव॥"
(३) सासू है दुताड़ी, दुताड़ी के दूरे करो,
अपनी बऊ के घरे करो।
(४) "मां सूगली का सायबा, मां देख्या अन्न खाय।"

मायके में विवाहिता बहिन के लिए भावज कम कष्टदायिनी नहीं है। यह भाई-बहन के प्रेम में विष की बून्दे टपकाती रहती है।

विधवा के रूप में नारी की स्थिति बड़ी दयनीय हो जाती है। ऐसी परिस्थिति में न उसे मायके में शरण मिलती है और न पति-गृह में। उसे एक कोना भी रोने को नहीं प्राप्त हो पाता है। बारहमासी गीतों में वियोगिनी वधू की कसक अधिक मुखर हुई है। [3]

"सखिलाग्यो असाड़े मास, प्रभु वन चाल्यारे
चाल्या चाल्यारे दुवारकानाथ हरि मंदर सूनो रे
म्हारा प्रभु ने राख्या बिलमाय कामणी करियारे
सखि एक सौ दासी ने साथे दूजी कुब्जारे!"

इसी के साथ धीरे-धीरे सावन, भादव, कुंवार, कार्तिक, अगहण, पोष, माह, फागण, चेत, वैशाख, और जेठ माह के विरह जनित वर्णन के साथ ही इन विभिन्न मासों में आने वाले पर्व–त्यौहारों पर प्रिय के अभाव की मार्मिक मनोव्यथा अभिव्यक्त हुई है।

इस प्रकार मालवी लोक-गीतों में चित्रित नारी की वास्तविक मनोदशा तथा उसमें अपने जीवन के बहुरंगी एवं सुख-दुखमय चित्रों को इन गीतों की हरेक पंक्ति में गहरी साँसों से अंकित किया गया है। नारी-व्यथा का यह अथाह सागर कई युगों से उद्वेलित होता चला आरहा है किन्तु उसके इस प्रपीड़न को किसने, कब सुना है? यह नारी को आज तक अज्ञात सा है।

कभी-कभी कुछ सहृदय कवियों ने दो चार कविताएँ नारी की प्रशस्ति में भावुकता-वश अवश्य लिखदी हैं, लेकिन यह शाब्दिक सहानुभूति नारी के उत्पीड़न की आग को शान्त नहीं कर सकती है। अब तो नारी को अपने बहते हुए आँसुओं को साहस के अंचल से ही पोंछना होगा।

● ●

–मोहन निवास कोठी रोड, उज्जैन

---

१ यह गीत सौ. मनोरमा उपाध्याय के हस्तलिखित संग्रह से उद्धृत है।
२ दृष्टव्य मालवी लोक-गीत एक बिवेचनात्मक अध्ययन पृष्ठ ३४६।
३ देखिए डा० श्याम परमार 'मालवी लोक-साहित्य-एक अध्ययन' पृष्ठ १७७–१८१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नारी का विराट श्रृंगार

कन्हैयालाल गौड़

भारतीय नारी के विराट श्रृंगार की कल्पना उसका पति एवं सम्पन्न परिवार है। उदात्तमना नारी ने सम्पूर्ण परिवार को ही आभूषण माना है। मालवी के इस लोक-गीत में भारत की गृह-लक्ष्मी का चित्र देखिए—

म्हारे आँगन आँबो मोरियो, पछवाड़े पसरीजी गज बेल, सहेल्या आंबोमोरियो ॥१॥
म्हारा सासूजी पूछे ये बऊ थारा गेणा को मने अरथ बताव। सहेल्या० ॥२॥
सासू गेणा गेणा काईं करो, म्हारे गेणा जिसो परिवार....सहेल्या आंबोमोरियो ॥३॥
म्हारा जेठजी, बाजूबन्द बेरखा, जेठानीजी बाजूबंद री लूम....सहेल्या० ॥४॥
म्हारा देवर दांती चूड़लो, देराणीजी चूड़लारी मेख....सहेल्या० ॥५॥
म्हारी नणद कसूमल कांचली नणदोईजी, कसनारी लूम.....सहेल्या० ॥६॥
म्हारी धीयड़ हाथरी मूंदड़ी, जवाँईजी मूंदड़ीरा काँच.....सहेल्या० ॥७॥
म्हारा कँवरजी कुलरा दीवला, कुलबऊजी दिवलारी जोत.....सहेल्या० ॥८॥
सासू अतराओ गेणारे ऊपरे, केसरियाजी म्हारा तिलक ललाट.....सहेल्या० ॥९॥
म्हारा सुसराजी गढ़रा रावजी, सासूजी अलख भण्डार.....सहेल्या० ॥१०॥
म्हारी पियरयारी वाटळली, मैं वाऊँजी चाँवलियारो खेत.....सहेल्या० ॥११॥
मैं तो जद घोऊँ जद ऊजला, ऊजला हेजी म्हारा जामणजाया वीर....सहे० ॥१२॥
में तो वारीए बऊ थारी जीब ने, बखान्योजी म्हारो सोइ परवार....सहे० ॥१३॥
में तो वारी ए सासू थारी कूंख ने, जठे जायोजी अरजुग जेसो पूत....सहे० ॥१४॥

मालवी नारी के सम्मिलित परिवार के ऐसे चित्र आज के टूटते-बिखरते परिवारों के लिए आदर्श बन सकते हैं। इस गीत की प्रत्येक पंक्ति ही नहीं, प्रत्येक शब्द भावों से परिपूर्ण है। सास बहू से उसके तन पर सुशोभित आभूषणों का उद्देश्य पूछती है, उत्तर में बहू कहती है—हे सासूजी ! शरीर पर जो आभूषण सुशोभित हैं वे तो भौतिक सम्पदा है, मेरी आत्मिक सम्पदा मेरे आभूषण, तो मेरा सम्मिलित परिवार और उस परिवार के परिजन हैं। चतुर बहू अपने शरीर पर विद्यमान प्रत्येक आभूषण की तुलना अपने परिवार के व्यक्तियों के साथ अत्यन्त ही भाव विनत शब्दों में करती है। वह अपने जेठ की तुलना बाजूबन्द से करती है। बड़े सदैव छोटों के संरक्षक होते ही हैं। वह जेठानी को उस जेठ रूपी बाजूबन्द की लूम मानती है, क्योंकि बाजूबन्द के साथ जैसे उसकी लूम सुशोभित होत है, उसी प्रकार उसके जेठ के साथ उसकी जेठानी सुशोभित है। वह देवर की तुलना अपने चूड़े से करती है. चूड़े की सुरक्षा नारी का आन्तरिक धर्म है। देवरानी की तुलना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चूड़े की कील से करती है जो उस चूड़े को सुदृढ़ बनाती है । आगे चलकर अपनी ननद की तुलना कसूमल कांचळी से करती है और उस चोली के बन्द उसके नणदोई हैं। वह अपनी तनया की तुलना हाथ की अँगूठी से करती है और दामाद की, अँगूठी के नग से करती है क्योंकि बिना नग के अँगूठी की शोभा भला कब बढ़ी है ? आठवे चरण में वह अपने पुत्र की तुलना दीपक से और अपनी कुलवधू की तुलना दीपक की ज्योति से करती है, वही उसमें स्नेह पूरित करती है जिससे परिवार आलोकित हो रहा है, स्वयं वह भी तो उसी स्थिति में है अपनी सास के समक्ष ! नवे चरण में अपने स्वामी की तुलना ललाट के उस अरुणिम कुंकुम बिन्दु से करती है, जिसके आलोक से संसार की वासनाएँ भस्मसात हो जाती हैं। यही तो नारी का तृतीय नेत्र है शंकर की तरह । दसवे चरण में अपने श्वसुर-गृह को गढ़ और श्वसुर को उसका राजा निरूपित करती है और सास मां उस गढ़ की अन्नपूर्णा लक्ष्मी है। इस वर्णन में वह अपने पीहर को भी नहीं भूलती। अपने पीहर की वाट में धवल चाँवलों का खेत बोकर वह पीहर के परिवार भाई आदि के उज्ज्वल यश की कामना करती है।

सास अपनी सुमंगला बहू के इस उत्तर पर न्यौछावर हो जाती है और कहती है कि बहू मैं तेरी वाणी पर वारी जाती हूँ जिसमें मेरे परिवार का वर्णन ऐसे सुन्दर ढंग से किया। बहू यहाँ भी नहीं चूकती तत्काल उत्तर देती है, हे सासजी मैं तो आपकी कोंख पर भी न्यौछावर होती हूँ जिसने अर्जुन जैसे वीर पुत्र (उसके पति) को जन्म दिया है। आभूषण रूपक में ग्रथित पारिवारिक जीवन का ऐसा मंगलगय एवं विराट चित्र शिष्ट साहित्य में भी कहाँ उपलब्ध है ? यही तो मालवा की बेटी, बहू, माता एवं सास की अपनी सांस्कृतिक विरासत है जो उसके शाश्वत सौन्दर्य को युग-युगान्तर तक अक्षुण्ण रखेगी।

३७२, प्रेमनिवास, काजीवाड़ा, उज्जैन

होली

रंगरेज वालो असल गंवार,
रे म्हारी रंग से भिंगोई हो, छेला चूनड़ो०
ईतो चारी पल्ले हो चारी आरती,
अने बीच-बीच दादर मोर —रे म्हारी०
हूँ चालूं तो चमके चारी आरती,
ओर बैठूं तो बोले दादर मोर —रे म्हारी०
बेगी चालूं तो झोला खावे आरती,
अने धीरे चालूं तो होवे भोर —रे म्हारी०
तू तो चूनर पेर करे क्यों लटको,
म्हारो हिवड़ो यो खावे रे हिलोर —
रे म्हारी रंग से भिंगइ हो छेला चूनरी।

• •

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मालवी कहावतों का तुलनात्मक अध्ययन

श्रीचन्द जैन

जीवन के सतत संघर्षों के माध्यम से जो मधुर और कड़ुवे अनुभव मानव को प्राप्त होते हैं वे ही कहावतों में प्रतिबिम्बित हुआ करते हैं। वस्तुतः जीवन के तथ्यों को प्रमाणित करने वाली ये कहावतें घोर तम के क्षणों में प्रकाश की रेखा के समान हमें एक निश्चित मार्ग की ओर संकेत करती हैं और विभ्रमित मानस इनके ही सहारे अपनी दूरस्थ मंजिल को पा लेने में समर्थ हो जाता है।

इन कहावतों में गुम्फित सत्य बड़े गहन परीक्षण के पश्चात लोक-प्रिय बनता है। अप्रिय सत्य कहावतों की मधुरिमा में परिवर्तित होकर प्रिय बनता है और अनेकता में एकता की स्थापना कर अपने चरम लक्ष्य की ओर जन-जन को आकर्षित करने लगता है। समाज की साँसें इन लोकोक्तियों में जीवित हैं, जीवन-दर्शन की गरिमा इन में ध्वनित है, धर्म की यथार्थता इनके सहारे प्राणवती बनी है और प्राचीनता निरन्तर नवीनता को इन कहावतों के सम्बल से उपलब्ध करती है। इतिहास और अनुभूतियों के परम्परागत रूप कहावतों के मनोरम आवरण में बड़े सुहावने लग उठते हैं। संस्कृति के विभिन्न प्रकारों की खोज इन कहावतों के अनुशीलन से भली-भाँति की जा सकती है। लोकोक्ति जनता-जनार्दन की स्वीकृति है, और साहित्यिक सौन्दर्य की यही एक सुलभ दृष्टि हैं। हमारे धार्मिक नेताओं ने अपने लौकिक एवं पारलौकिक उपदेशों को कहावतों के माध्यम से सुलभ और सुबोध बनाया है।

कहावत शब्द की व्युत्पत्ति के सम्बन्ध में अनेक मत हैं। पंडित रामदहिन मिश्र के विचार से कहावत का मूल रूप 'कथावत्' है। कथाओं की तरह कहावतें भी लोक में प्रसिद्ध हैं। इनका आधार भी कथाओं का ही कुछ खंडित-मंडित रूप है, इसीसे कहावत को लोकोक्ति भी कहते हैं। प्राकृत व्याकरण के नियमानुसार 'थ्' का 'ह्' हो जाता है। प्लाट ने भी कहावत शब्द की व्युत्पत्ति 'कथावत्' से मानी है अर्थात् कहावत उसे कहते हैं जिसके मूल में कोई कथा हो।" (१)

'गागर में सागर भर देने का गुण लोकोक्तियों में विद्यमान है। व्यापक समस्याएँ, अनुभव गांभीर्य और जटिल प्रश्न छोटे-छोटे नुकीले और गठे हुए वाक्य या वाक्यांशों में सिमिट कर सदा से प्रचलित रहे हैं' लोक-साहित्य में लोकोक्ति साहित्य का बड़ा महत्व है, जीवन के विस्तृत प्रांगण में भिन्न-भिन्न अनुभव सर्व साधारण के जन मानस को प्रभावित करके उसकी अभिव्यक्ति से सम्बन्धित अंग को उत्कर्ष प्रदान करते हैं। ये ही अनुभव लोकोक्तियाँ अथवा कहावतें हैं। कहावतों की व्यक्तित्व से प्रभावी सत्ता नहीं होती। कहावत वस्तुतः उक्ति है, पर लोक से सम्बन्धित होने के कारण वह लोकोक्ति कही जाती है। उसका प्रचार जन के स्वीकार्य पर निर्भर है।" (२)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सार्वभौमिक सत्य से सम्बद्ध अनुभवों में समानता का होना सहज ही है। ऐसी स्थिति में कहावतों में भाव-साम्य की रेखाएँ सुगमता से परिलक्षित होती हैं। इस समानता के चित्रण में भले ही एकीकरण न हो परन्तु भावों की एकरूपता तो अंकित हो ही जाती है। शब्दों का वैविध्य शैली की विलक्षणता एवं उपमानों और प्रतीकों के उपयोग की पृथकता इस भाव-साम्य को दुरूह बना सकती है लेकिन समानावलोकन से समुत्पन्न अनुभव-सादृश्य को तिरोहित नहीं कर सकती।

पावक की दाहकता, सलिल का शीतलत्व, धरती की क्षमाशीलता, पवन की चंचलता, मानव की स्वार्थ परायणता, जग की क्षणभंगुरता, माता की ममता, दुष्ट की दुष्टता, सज्जन का सौजन्य, सत्य की विजय, शिशु का भोलापन, गरीबी का दर्द, धनिकों की विलासिता, श्रम का महत्व, सौन्दर्य के प्रति आकर्षण, यौवन का उन्माद, वार्धक्य की पीड़ा, पीड़ित का विद्रोह, धन के प्रति लालसा, दीन की उपेक्षा, जातिगत प्रवृत्तियों का प्राबल्य, असमानता के प्रति द्वन्द्व, आडम्बरों की निस्सारता, स्वाधीनता के प्रति ललक एवं पराधीनता-जन्य वेदना आदि ऐसे सत्य हैं जिनके सम्बन्ध में सर्व सम्मत समर्थन सर्वत्र प्राप्त है।

इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए यहाँ मालवी कहावतों का तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया जा रहा है। सार्वभौमिक सत्य मालवी कहावतों में किस विलक्षणता से प्रस्फुटित हुए हैं, यह दृष्टव्य है। मालवी भाषा बड़ी समृद्ध और भाव गांभीर्य से पूर्णतः परिपूर्ण है। भावों के प्रकाशन की इसमें पूर्ण क्षमता है तथा नवनीत सी यह सुकोमला एवं द्राक्षा सी रसवती है। फलतः हिन्दी के कवियों ने अपनी भाव-व्यंजना को प्रभावशालिनी बनाने के लिए मालवी के शब्दों का पर्याप्त संख्या में प्रयोग किया है। इस मालवी के संयोग से शैली में सरसता समुत्पन्न होती है और भाषा में अनूठा सौन्दर्य आ जाता है।

यह सर्व विदित है कि मानव अपनी वस्तु को कभी बुरा नहीं बताता है। बुरी होने पर भी वह इसे अच्छी ही कहता है। इस कथन में स्वार्थपरता ही सर्वोपरि है। इस स्वीकारोक्ति के समर्थन में अनेक कहावतें प्रचलित हैं। यथा:—

(१) अपने मठा को कोऊ पतरो नई कैत। — बुन्देली कहावत
(अपने मठा को कोई पतला नहीं बताता है।)

(२) अपनी मताई से कोऊ भद्दी नई कत। — बुन्देली
(अपनी मां की कोई बुराई नहीं करता है।)

(३) अपनी महतारी खों डाकन को कहत आय ?
(अपनी माता को डाकिन कौन कहता है ?)

(४) आपणी मांय ख डाक्कण कुण कयज ? — (निमाड़ी)

(५) अपन दाईला डाकन कौन किये ? — (छत्तीसगढ़ी)

(६) मालिन अपने बेर खट्टे नायं बतावै। — (ब्रज)

(७) सुनार अपने जेवर को खोटा नहीं बताता है। — (हिन्दुस्तानी)

(८) पिसनहारी आटे को मोटा नहीं बताती है। — "

(९) कुम्हार अपने मटके को हल्का नहीं बताता है। — "

(११) पोतानी माने डाकण कोण कहे। — (गुजराती)

इस सत्य को मालवी कहावत में इस प्रकार अभिव्यक्त किया है :—

"अपणी मां के डाकण कुण केवे।" — (मालवी)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रत्येक युग में धन की महिमा गाई गई है। संसार का समस्त वैभव-चमत्कार धन पर ही आधारित है। धनवान को सर्वत्र सम्मान मिलता है। परिणाम स्वरूप धन की उपयोगिता सर्वमान्य है। इसी तत्य को प्रमाणित करने के निए निम्नांक लोकोक्तियाँ पर्याप्त हैं—

(१) पइसा आई। पइसा बाई। पइसा बिन होय न सगाई। (बुन्देली)
(२) बैन भली न भैया। सब से भलो रुपैया। (बुन्देली)
(३) पइसा के सब सगै। (बुन्देली)
(४) पइसा से सबरी अक्कल आऊत। (बुन्देली)
(५) दौलत का सब खेल है। (हिन्दुस्तानी)
(६) दौलत मंद की डेवढ़ी को सब सिजदा करते हैं। (उर्दू)
(७) माया तेरे तीन नाम, परसा परसू परसराम। (खड़ीबोली)
(८) संपत होय तो घर भलो नातर भलो बिदेश। (ब्रज)
(९) पैसा थी सर्व काम सरै छे। (पैसे से सब काम पूरे होते हैं।) (गुजराती)
(१०) रुप्या पैसा हाणे तो राज दरवार माणे— (राजस्थानी)

(धनवान का ही राज दरबार में सम्मान होता है।)

(११) सर्वे गुणाः काञ्चनमाश्रयन्ति। (सोने के पास सब गुण आजाते है।) (संस्कृत)
(१२) रुपया तो शेख, नहीं तो जुलाहा। (उर्दू)

इसी सचाई को मालवी कहावत में बड़े सहज भाव से इस प्रकार व्यंजित किया गया है—

'मालदार नो घणो आदर वे। (मालदार का बड़ा आदर होता है।) (मालवी)

अपने धन की रक्षा सब करते हैं और सबका यह प्रयत्न रहता है कि स्वकीय सम्पत्ति का किसी भी प्रकार से व्यय न हो। दूसरों के धन पर मौज उड़ाना सब जानते हैं। घर में रहकर जो इंसान कम खाता है वही दूसरे घर का अतिथि बनकर इतना अधिक खा लेता है कि उसे विवश होकर लंघन करना पड़ता है। बाबाजी भी दूसरे की मिठाई खाने के लिए लालायित रहते हैं। मानव की इस सहज प्रवृत्ति का उद्घाटन निम्नलिखित कहावतों में हुआ है—

(१) पराए धन पै लक्ष्मीनारायण (बुन्देली)
(२) करबा कोंहार का, घीव जजमान के, बाबाजी कहेले स्वाहा-स्वाहा। (भोजपुरी)
(३) आनकर आटा आनकर घीव। चाबस-चाबस बाबा जीव। (भोजपुरी)
(४) अनकर चुक्कर अनकर घी। पाँडे बाप का लागा घी। (हिन्दुस्तानी)
(५) पराया खाइए गा बजा। (हिन्दुस्तानी)
(६) पराई कमाई पै तागड़धिन्ना। (बुंदेली)
(७) पार के पैसे परमानन्द (दूसरे की सम्पत्ति पर आनन्द करना) (गुजराती)
(८) माले मुफ्त दिले बे रहम— (उर्दू)
(९) पराए माल तें गुलछरे उड़ाउणे। (पंजाबी)
(१०) दूसरे के माल पर मूँछे ऐंठना— (खड़ीबोली)

इन्सान की इस स्वार्थपरता को मालवी कहावत में इस प्रकार मुखरित किया गया है:—पराया धन पे लछमीनारायण (मालवी)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वभावतः मनुष्य स्वार्थी कहा गया है। अपने मतलब की पूर्ति के लिए वह बुरे से भी बुरा काम करने को तैयार हो जाता है और स्वार्थ सिद्धी के उपरान्त उसका व्यवहार भी परिवर्तित हो जाता हैं। कहा भी तो हैं कि काम पड़ने पर गधे को भी बाप बनाना पड़ता है।

मानव की इस खुदगरजी से सम्बद्ध कई कहावतें कही जाती हैं—

(१) गरज सरी ने बैद बैरी। (स्वार्थ सिद्ध हुआ और वैद्य शत्रु बना) (गुजराती)
(२) गरज मटी ने गूजरी नटी— (भीली)
(३) गरज सर न वैद मर— (निमाड़ी)
(४) गरज सरै ओर वैद मरै— (बुन्देली)
(५) गरज सरो आणि वैद्य सरो— (मराठी)
(६) काम रहे तक काजी। न रहे तो पाजी। (उर्दू)
(७) रोगः शाम्यतु वैद्यो नश्यतु— (संस्कृत)
(८) गरज निकरिसा वैदमरिस— (छत्तीसगढ़ी)
(९) काम सरा दुख बीसरा छाछ न देह अहीर। (हिन्दुस्तानी)

इन्सान की इस स्वार्थपरक प्रवृत्ति को प्रदर्शित करने के लिए मालवी की यह कहावत बड़ी भली लगती है। यहाँ परिमित शब्दों में बहुत कुछ कहा गया है **"फोड़ो फूटो ने बैद झूठो"**। यहां तो रोग के शमन के पश्चात वैद्य का अस्तित्व भी स्वीकार नहीं किया गया है। स्वार्थपरता की यही पराकाष्ठा हैं।

इस प्रकार तुलनात्मक दृष्टि से विचार करने पर मालवी कहावतों की विशेषता स्वतः स्पष्ट हो जाती हैं। मालव की लोकोक्तियों की भाव व्यंजना बड़ी प्रभावशालिनी है।

• •

मोहन निवास, कोठी रोड़,
उज्जैन

---

१ डॉ. कन्हैयालाल सहल–राजस्थानी कहावतें एक अध्ययन पृष्ठ ४।
१ डॉ. श्याम परमार–मालवी लोक–साहित्य–एक अध्ययन पृष्ठ ३५०।

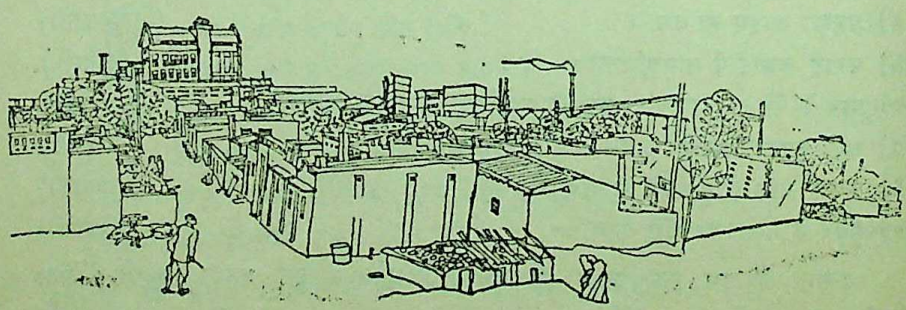

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कतिपय मालवी कहावतें

प्रकाश उपाध्याय

१ अबे कईं मियाँ मरीग्या ने रोजा[1] घटीग्या ।
२ अकल बड़ी के भैंस ।
३ अँधेरी नगरीने बेबुध[2] राजा,
टके सेर भाजी ने टके सेर खाजा ।
४ अपणी करणी, पार उतरणी ।
५ आई लछमी नी फेरनी ।
६ आप भला तो जग भला ।
७ आई दरने ने लगई दी पीसवा ने ।
८ आपणी जांघ उघाड़ाँ, तो आपीज लाजाँ ।
९ आँधी पीसे, कुत्ता खावे ।
१० इ तो राणाजी का हारा हे ।
११ ईन, मीन, तीन ।
१२ उलटो चोर कोतवाल ने डांटे ।
१३ उछरी ने गोड़ा फोड़्या ।
१४ ऊ केई ने गू[3] हुणनों ।
१५ ऊंखरा में मूंडो दियो,
तो चोटां ती कईं डरनो ?
१६ ऊँट के गरे वेल ।
१७ एड़ी रगड़ी ने बऊ बिगड़ी ।
१८ एक घर तो डाकण भी छोड़े ।
१९ एक पापी सारी नाव डुबोवे ।
२० ओछो पातर[4] झट झलके ।
२१ ओड़ला जोड़ला ने सभी करम खोड़ला ।[5]
२२ औंधा घड़ा पर पाणी नी टके ।
२३ कणकी[6] राँड मरे, ने कणके हपनें आवे ।
२४ कीड़ी संगचे[7] ने तीतर खाय,
ने पापी को धन पल्ले जाय ।
२५ कुमार फूटी हांडी मेंज खावे ।
२६ को खेत की, ने हुणे[8] खळा की
२७ खई जावे, ने खारड़ा[9] कूटी जावे ।
२८ खाँक में छोरो; ने गाम में रेड ।
२९ खाड़ी में खीर वंटीरी हे ।
३० खोटो नारेल होरी भेरो ।
३१ गदड़ी ने गंगाजी ।
३२ गरज निकरी, ने लोग परायो ।
३३ गोड़ो पेट नेज नमे ।
३४ गोरी वे तो कईं, गुण वे जदी के ।
३५ घर का पूत कुंआरा,
ने पाड़ोसी का फेरा ।
३६ घणा हेत टूटवाने,
ने मोटी आँख फूटवा ने ।
३७ घी आंगरी, ने गुड़ डली ।
३८ चमांरा की देवी, ने खाड़ी की पूजा ।
३९ चान्नी में दूध दुवे,[10]
ने करम को दोष काड़े ।
४० चित चन्देरी, मन मारवे, हियो हड़ोती ।
४१ चोर की माँको कोठल्या में मूँडो ।
४२ छछूंदरी के माथा में चम्पेली को तेल ।
४३ छोड़ो ईस ने बेठो बीस ।
४४ जण जण का[11] थोग राखतां
वेश्या रइगी बाँझ ।
४५ जण को मांडो, वण का गीत ।
४६ जेरू[12] चाली सासरे, सौ घरां संताप ।
४७ जो नी माने बड़ा की सीख,
ऊ लेइ कटोरो ने मांगे भीख ।
४८ झोंपड़ा में रेणो,
ने मेलाँ[13] का सपना देखणां ।
४९ टाटी की आड़ में शिकार खेलणो ।
५० टीप-टीप समन्दर भराय ।
५१ टोटा का घर में रोटा की राड़ ।
५२ ठग ठगां के पामणां ने
जीवां की लापा लोर ।[14]
५३ ठिकाणती ज ठाकर वाजे ।
५४ डेढ़ चोखो न्यारो हीजे ।[15]
५५ डोकरी मरी ने दादो परण्यो,
फेर तीन का तीन ।
५६ ढेड़ की गाड़ी अगाड़ी चाले ।
५७ ढोल में पोल ।
५८ तालाब में रेईने मगर ती बेर ।
५९ तिरिया चरित्तर जाणे नी कोय,
मनख मारि ने सत्ती होय ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

६० तीन तेरे ने बात बिखेरे ।
६१ थारी काण,
के थारा घणी की काण ।[१६]
६२ थें गाओ, थें गाओ,
करताई किशनजी परणीग्या ।
६३ दांतरो[१७] वेच्यां कई दरिद्दर जाय ।
६४ दाणा-दाणा ये मोर[१८] वे ।
६५ दूरा ती डूंगर[१९] ररियावणां[२०] लागे ।
६६ दुखती चोट, ने कनावड़ी[२१] भेंट ।
६७ दुबरा ने रीस[२२] घणीं ।
६८ घन जा, वणको ईमान भी जा ।
६९ धरती का पड़या,
धरती पेइज थोड़ी रेगा ।
७० घोरा-घोरा सब दूध नी वे ।
७१ नट्या ने सोई फन्द कट्या ।
७२ नवरी रे ने नाते जा ।
७३ नानी वऊ काम करे,
ने हतरा जणा कड़[२३] हमारे ।
७४ निकरी होटां बान्ने,
ने वइगी कोटां बान्ने ।
७५ परदेशी की कई प्रीत,
ने फूस को कई तापणों ।
७६ पातरा गोबर में भाटो फेंकवा ती,
आपणेइज छाँटा आवे ।
७७ परायो घर थूँकवा को डर,
आपणो घर हांगी ते भर ।
७८ पाका हांडा के गार नी लागे ।
७९ पोटो[२४] पड़े तो घूल लेइनेज उठे ।
८० फरे जो चरे, ने बन्ध्यो भूखां मरे ।
८१ बन्दर कई जाणें अदरक को सवाद ।
८२ बद अच्छो, पण बदनाम बुरो ।
८३ बोले जण का बूरा[२५] बिके,
जो नी बोले वण की जुवार पड़ी रे ।
८४ भर्या गाड़ा में सूपड़ा को कईं बोझ ?
८५ भर्या में सब भरे,
खाली में कोई नी भरे ।
८६ भाटो फेंकी ने करम मांडणो ।
८७ भूली गया रंग, ने भूलि गया छकड़ी ।
तीन बात याद रेगी, लूण-तेल-लकड़ी ॥
८८ भूख नी देखे जूंठो भात,
नींद नी देखे टूटो खाट,
और इशक नी देखे जात-कुजात ।
८९ मन चंगा तो कठौती में गंगा ।
९० मरतो आकड़ो पीवे ।
९१ रांड्या ने रांड मिली, कांधे लू के माथे ?
९२ रोग को घर खासी,
लड़ाई को घर हाँसी ।
९३ लड़ता में लाडू कूण दे ।
९४ लाद दो लदावण दो,
ने लादवा वारा ने साथे दो ।
९५ वखत पड़े बाँका,
ने गधा को केणा काका ।
९६ वगत चली जाय, ने वात रेई जाय ।
९७ शंख बाजे ने हल्ला[२६] उड़े ।
९८ सतरा नावणां मिली ने, जापो वगाड़े ।
९९ हांकड़ी[२७] हेरी ने मारकणो वेल ।
१०० हरग फाड़ी ने थेगरो[२८] दे ।

● ●

--४९, अहिल्यापुरा, इन्दौर

---

(१) मुसलमानों के उपवास, (२) मूर्ख, (३) गंदगी, (४) पात्र, बर्त्तन, (५) दुर्भाग्यशाली एक प्रकार की गाली, (६) किसकी, (७) एकत्रित करे, (८) सुनता है (९) जूते, (१०) दुहना, (११) हर एक व्यक्ति का (१२) भ्रष्ट, या चरित्रहीन स्त्री, (१३) महलों के, (१४) व्यर्थ की बातें, (१५) पकना, (१६) इज्जत, सम्मान, (१७) हँसिया, (१८) मोहर, (१९) पहाड़, (२०) सुन्दर, (२१) अनपेक्षित, (२२) क्रोध, (२३) गांती, (२४) गोबर, (२५) अन्नका छिलका, (२६) पिस्सू, (२७) सँकरा स्थान (२८) पैबन्द ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रूपलाल चौहान 'ग्रामिक'

मालवी का प्रहेलिका साहित्य

मालवी भाषा के साहित्य में हमें लोक गीत, लोकोक्तियाँ, लोक-कथाएँ एवं पहेलियाँ प्रचुर मात्रा में मिलती हैं। मालवी में पहेलियाँ प्राचीन काल से पाई जाती है। विशेषतः मालवा में पहेलियाँ सुनाकर उनके उत्तर माँगे जाते हैं। पहेलियों के उत्तर प्राप्त होने पर उत्तर देने वाले व्यक्ति की विद्वत्ता का आभास होता है, ऐसी मालव अंचल के निवासियों की मान्यता है। यही कारण है कि मालवा में विशेष रूप से जमाई एवं निकट के रिश्तेदारों से पहेलियों का उत्तर प्राप्त करने की प्रथा अनेक वर्षों से चली आ रही है। उदाहरण के लिये प्रत्येक पहेली के अंत में ये पंक्तियाँ कही जाती हैं:—

के वोरा जमाई म्हारी पारसी, सुरता करोनी विचार, गाढ़ा म्हारूजी।

"पारसी" शब्द से तात्पर्य पहेली से है। पहेली का सम्बन्ध प्रायः दैनिक जीवन में उपयोग में आने वाली वस्तुओं से पाया जाता है। उदाहरण के लिये एक पहेली देखिये:—

अंदारी ओरी में, दई को टपको [चांदी का रुपया]

मालव-अंचल में एक प्रथा और भी है। यदि संबंधित व्यक्ति पहेली का उत्तर नहीं देता है तो उसकी निम्न प्रकार प्रेमपूर्ण भर्त्सना भी की जाती है:—

इ कसा वेंडी रांड का गदड़ारा गँवार गाढ़ा म्हारूजी।
खादी जी खाटी राबड़ी ने पीदो नी पाणीं, म्हारा मारूजी॥

यहां एक प्रसंग और द्रष्टव्य है। जब जमाई एवं रिश्तेदार पहेली का संतोषप्रद उत्तर दे देते हैं तो उनका निम्न पंक्तियों द्वारा अभिनंदन भी किया जाता है:—

जमाईजी ओ राज, थां ने सेलों ने सरपाव।.....

अस्तु मालविकाओं द्वारा जमाई एवं रिश्तेदारों द्वारा पहेलियों के उत्तर प्राप्त करना लोक-साहित्य का एक मनोरंजक प्रसंग है। महिलाएँ जमकर आँगन में बैठी हैं, जमाई एवं ब्याईजी से पहेलियों के उत्तर प्राप्त किये जा रहे हैं। यहाँ कुछ पहेलियाँ मय उत्तर के दी जा रही है:—

दो अजड़ किंवाड़, दो बजड़ किंवाड़ दो नाग लड़े।
दो दीवा बरे राजा की कँवरी न्याव करे॥ [मुँह, दाँत, नाक, आँख और जिव्हा]
नानी सी डावड़ी, फूलां बाई नाम।
चढ़ी गई डूंगरी, मारी लई गांम॥ [बन्दूक]
आँबा की डारी पर दिवा बरे काजर पड़े रे खण्डार।
आंजन वारी पद्मणीजी कई निरखन वारो रे गँवार॥ [कलम, दवात]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तुरता फुरता की डावड़ी तुरता रई गयो पेट ।
खोलो ब्याईजी म्हारी पारसी, सुरता करोनी विचार गाढ़ा म्हारूजी [रोटी[
खापरी रांड को खालड़ो, लागे रे बड़ो हवाद [खारक]
वन माता को बोकड़ो, मगरां में चरवा जाय [कुल्हाड़ी]
लाल दरोब की कांचेरी, पेरूंजी वारे तेवार ।
कोरा जमाई म्हारी पारसी सुरता करोनी विचार [मेंहदी]
पेलां तो जनमियो म्हारो बेटो ने, पाछे जनमी म्हारी माँय ।
ता पाछे धक्कम धक्का में जनमियों म्हारो बाप ।। [दूध, दही, मक्खन]
राजन जाओ देसावरेजी, लावजो हल्दी ने हींग ।
एक चीज ऐसी लाजो जी के वे चारो सींग ॥ [लौंग]
राती डाबी रंग भरी पड़ी जी चौहीटा बीच ।
थां कूं तो लाजां मरूँ, देखे म्हारा देवर जेठ ।। [जूते]
होरे जो हाथ की हाड़ी जी, म्हारे हराणें पड़ी ।
सारी सारी रातें, हूँ तो ठण्डा मरी ।। [पगड़ी]
डावे जो कोरे नागणीं नम नम झोलां खाय । [स्त्री के नाक की नथ]
अरस परस दो बेनां जी, वी तो मगरा में चरवा जाय ।
एके खावे खारक खोपरा दूजी खावे जी टोर ।। [तराजू]

अस्तु, मालवी में प्रहेलिका साहित्य यत्र-तत्र बिखरा पड़ा है। यह साहित्य महिलाओं और गुणी पुरुषों की जिव्हा पर आज भी सुरक्षित है। प्रायः मालवी पहेलियों के उत्तर मालव अंचल के ठेठ जीवन से सम्बन्धित हैं। किन्तु कुछ पहेलियों में विज्ञान के नये आविष्कारों का भी समावेश हुआ है। निम्न पहेली दृष्टव्य है:—

आकासे ती उत्तर्‌यो हेमरो, जी के लोई ने मांस कई नी [हवाई-जहाज]

हर्ष का विषय है कि मालवी का प्रहेलिका साहित्य भी लोक-साहित्य के लेखकों द्वारा लिपिबद्ध किया जा रहा है, तथा इस साहित्य को सुरक्षित रखने के यथासम्भव प्रयत्न किये जा रहे हैं।

• •

नरसिंह घाट गली, जनकूपुरा,
मन्दसौर (म. प्र.)

कतिपय मालवी पहेलियाँ

लक्ष्मीनारायण जोशी 'श्याम'

१ जल भरी झारी मारे सिराने धरी ।
सारी-सारी रात हूं तो प्यासा मरी ।।
—इत्र की शीशी

२ मेवा की छाब म्हारा सिराने धरी ।
सारी-सारी रात हूं तो भूखाँ मरी ।।
—पुष्प-हार

३ वी लाया डाबाआली सोड़,
वा सोड़ म्हारे सिराने धरी ।
सारी-सारी रैन हूँ तो धरत्यां पड़ी ।।
—पलंग

४ चम्पा की डोली म्हारा सिराने धरी ।
सारी-सारी रात हूं तो बासां मरी ।।
—लोंग

५ अस्सी रे तोला को सांकलो,
पड़यो बीच बजार ।
चतर होय तो मोलवे, मूरख गोता खाय ।।
—सांप

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

६ एक अचम्भो म्हे सुण्योजी,
मुरदो आटो खाय।
बतरावे बोले नई जी,
मारे से चिल्लाय ॥ —मृदंग

७ एक अचम्भो म्हें सुण्योजी,
पिंडुली ग्याभन होय।
पिण्डली बेटा जण लियाजी,
दूध कां से होय ॥ —बालो (नारूरोग)

८ एक अचम्भो म्हें सुण्योजी,
बेटी जायो बाप।
सिल डूबे बत्तो तीरेजी,
जल में छायो पाप ॥ —घी-छाछ

९ काला कुवा को कालो पानी, हम काला हुई जावांजी बना। —जामुन

१० एक सखी यूँ उठ बोली म्हारा, पियुजी गया परदेश, वी लाया सुगन भरया फूल, वी फूल म्हारा पास धर्या था, जिका माय अगन भरी थी।
—लहसुन

११ काका के तो कान नइ जी, काकी की तो सरदा नई हैं। तो बी काकी जात जिमाय, —तवा एवं मटकी

१२ कीड़ी चाली सासरे नौ मण मेंदी लगाय।
—दही बिलोने की मटकी

१३ एक सखी यूं बोली, म्हारा पियुजी गया परदेश।
वी लाया गंगाजल झारी, ऊंका माय सुगन भरी थी। —इत्र की शीशी

१४ घाघरो ऊंको घेरदार, चोली ऊंकी तंग।
सोला देवर छोड़के, गई जेठ के संग ॥
—अरहर की फली

१५ जाजम बिछाई चन्दन चौक में, म्हारसे समेटी नी जाय। —धरती

१६ जद ऊका पियुजी दुकाने चाल्या, उठ गोरी कम्मर पे बैठी। —चाबी

१७ टांची दे सोनो घड़्यो,
घड़्यो रे अजब सुनार।
निरखो पे देख्यो नई, रे गयो धरती माय ॥ —मांडना

१८ डाकण-भूत लड़ी पड़्यां चुड़ेलण छुड़ावा जाय ॥ —ताला-चाबी

१९ तीन पगां रो घोड़ल्यो,
गयो जी सरवर पाल।
सरवर के पाछे फिरल्यो, फेर धणी के जाय ॥ —सिंवाड़ा

२० दूधा भरियो बाटको, दियो जमई के हाथ।
भावे तो पी लीजो, नी तो पाछो दो पोंचारा ॥ —कन्या

२१ धोळी दाड़ी को डोकरो।
बास्ती पे करवट दे सजनिया ॥
—गाँकर (बाटी)

२२ धोला कुआ को धोलो पानी, धोली भँवर की सेजां जी, सिल्ला उप्पर धरी सिल बटी, हम धोला हो जावां जी ॥
—साबुन

२३ धोली दाड़ी को डोकरो, ऊ हाटे हाट बिकाय। —कांदो प्याज

२४ नद्दी जाई ने पानी लाना, बेतो नी लाना बंद्यों नी लाना। —ओस

२५ फूलां भरियो टोकरो, छांटो दियो कुमलाय। —बताशे

२६ बाप बिचे, बेटा बिचे, दोयां बिच इक नार। —छतरी

२७ बिना रे पगां को घोड़ल्यो, ढाल्यो ढोल बजाय।
उचकावो उचके नइजी, सुरतां करो विचार ॥ —मांडना

२८ बिन सुई जी ने बिन तागो। पदमणी बुणे रुमाल हो सजनिया ॥ —मकड़ी

२९ भैंस बियाणी पाणो पेट में, चोको गयो हाट बजार। —शहद

३० रे सरदारां उठ सिद करो, रंग बिगाड़ियो रांड।
आवतड़ा दीखे नई, जातां लागे बार ॥
—नींद

३१ सोना सरकी सोजड़ी, जीरा सरखी आँख।
असी चटकारे तो रोवणो नी आय ॥
—भँवरी (भ्रमरी)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३२ छै पग ने कमर कूबड़ी। —मकोड़ा

३३ काली डाँड तो काय कोनी, बोड़यो बलद्यो हँकाय कोनी। —साँप, शेर

३४ अंधारी ओवरी में मूँग बैराना। —मक्खियाँ

३५ रंग्यो चंग्यो वो बेवड़ो, घरचो है तखत बजार। —चूड़ो (आभूषण)

३६ लाल मूंजजी पेलो वारणो, हिंगलू ढलाई हो देल, केवो चतर म्हारी पारसी.... —नथ

३७ एक नार दो के लई बैठी। —पजामा

३८ एक बेंरा दर में हाथ घाले। —कांचली (कञ्चुकी)

३९ ऊपर तामा नीचे तासा, बीच में लाल तमासा। —मसूर

४० लीली दाख जंगल को मैवो, जिको बड़ो रे सवाद।
जीमण बेठ्या शक्कर मिठाई, गुठली बायर काढ़ो राज॥ —बेर पेंमदी
पीली दाख। ॥ —रायणां
लाल दाख। ॥ —खजूरा
काली दाख। ॥ —करोंदे

४१ सरग सीताफल लागिया, म्हारा से तोड़्या नी जाय। —तारे

४२ आधी राते ऊंट अड़लाटा करे। —घट्टी

४३ एक बैरा ने बैल को सींग पकड़्यो। —घट्टी का हत्था

४४ एक बैरां खड़ में कूदी। —घाघरो

४५ काली कुत्ती कबरे कान, कां जाय कुत्ती गामे गाम। —पोस्ट कार्ड

४६ बन में गया लकड़ी काटी, खेंचाखांच के सुतार घरे पटकी।
नो सौ केलू, नो सौ लाट, चरखा बनेगा तीन सौ साठ। —रेलगाड़ी

४७ गनन् गनन् रेट्यों गन्नावे, तीन पगां को घोड़लो आकासे जावे। —चीलगाड़ी (वायुयान)

४८ काली कुत्ती अगझग, तीन माथा दस पग। —अथवा
रग्यो चाल्यो रगपग तीन माथा दस पग। —चड़स
(तीन माथा-दो बैल व एक हांकने वाला। दस पग—८ बैल के व दो हांकने वाले के पैर)

४९ एक नार सासरे जाय आती जाती रोती जाय। —चड़स का आना जाना

५० कुआ पछाड़ी जिनावड़ी वा नी बोले, ऊका अण्डा बोले। —अफीम के डोड़े

५१ घोलो घोड़ो धरमर पूंछ। —मूली

५२ सरवर पाल सुआवणा, ऊवा नागफणा। गोरी थारा साथ में, मुआ चार जणा॥
(गोरी—नागर बेल। मुआ चार जणा—कत्था, चूना, लौंग और सुपारी)

५३ कत्था चूना नागर पान, नर नारी के बावीस कान। —रावण और मन्दोदरी

५४ रूप रंग ने रस भरी, किरपा करजो मोय। ऐसी नारी भेज जो, भोर भये नर होय॥ —मोगरे की कली

५५ आठ पांव नौ नेत्र, तीन सींग, दो पूंछ। याको अरथ बताइये, वांके मूंडे मूंछ। (नन्दी पर बैठे शिव-पार्वती)

५६ चांद सरीको ऊजलो, रहे मीरी के पास। बनिया पुड़की बांध दे, लेन पठाई सास॥ —कपूर

५७ अजिया सुत को सबद ले,
गज को पाछलो अंक।
सो तरकारी लावजो, चतर नार के कन्त। —मैंथी

५८ दने भर्यो अने राते खाली। —अलगजी या गोदड़मच्ची

५९ नानी सी नानबई डबरा सो पेट।
कां जाय नानबाई गूंदियारा खेत? —खुरपी

६० हील हील होलड़ी, अकास माथे खोलड़ी, ऊंका मुंडे पड़े लाल (लार), ऊंका पेट में पड्या जमाल॥—आम का टपकता रस

६१ एक लुगाई के बारा बोबा। सूअरनी (शूकरी)

—२६ सूबा तुकोगंज, इन्दौर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मालवी लोरियां शिशु गीत : बालगीत

डॉ. बसंतीलाल बंम

मालवी के शिशुगीत, बालगीत और लोरियों में जो विभिन्न प्रकार के गीत प्राप्त होते हैं, उनमें आनुष्ठानिक गीतों का बाहुल्य है। बालकों के आनुष्ठानिक गीतों में 'छल्ला भोला' 'गोगा' आदि प्रसिद्ध हैं और बालिकाओं के गीतों में 'घड़ल्या', 'संजापूजा' आदि गीतों को मान्यता दी गई है। इन गीतों में छोटे छोटे बालक-बालिकाओं की मनोगत भावनाएं और कलात्मक प्रवृत्तियां 'श्राद्ध-पक्ष' में मालवा के प्रत्येक घरोंदों में गोबर से बनाई गई, उभरी हुई रेखाओं में अभिव्यक्ति पाती हैं। 'गरबा' भी इसी प्रकार के 'मंगल-कलश' के पूजन अर्चन और साधना का त्यौहार है। मूल रूप से यह त्यौहार गुजरात का है, किन्तु इसकी लोकप्रियता ने कई प्रदेशों को प्रभावित किया है, नवरात्र में दीपमालाओं से जगमगाते हुए इन मंगल कलशों के आसपास वृत्ताकार में गीत गाते हुए सुहागिन नारियां व कुंवारी बालिकाएँ सारी रात बिता देता हैं। 'खेलगीतों' में सामूहिक खेल और व्यक्तिगत खेल खेलते समय एक विशेष प्रकार के गीत गाए जाते हैं। बालिकाओं के व्यक्तिगत खेलगीत लगभग एक जैसे ही हैं, किन्तु सामूहिक खेल गीतों में भिन्नता प्रतीत होती है। लड़कों के सामूहिक खेल गीत 'इलायची डब्बा' 'घूघेर माल' 'ऐले पेले पारके', 'अटली मटली' आदि हैं और लड़कियों के सामूहिक गीतों में 'गुड्डा-गुड्डी के गीत' 'बीरा के गीत' आदि प्रमुख हैं। व्यक्तिगत खेल गीतों में 'एक थो राजा', 'चिटूठी मिट्ठी', 'अटकन मटकन', 'तेरा नाम क्या', 'ताली ताली नंदा' आदि प्रमुख हैं। औपचारिक गीतों में 'पेला पितम्बर', 'सावन के गीत', 'बरसात के गीत', 'इंडिग विंडिग', 'पोथी बांचने का गीत', 'डैडक माता', 'पाणी बाबो', 'चिड़ियों के गीत', 'गिनती सीखने के गीत' व 'गाय के गीत' अपना महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। इन गीतों के साथ साथ इनमें हास्य-व्यंग्य और ऋतुओं के गीतों का भी समावेश हुआ है, लयप्रधान ध्वन्यात्मक गीतों में 'चांदे बैठी–चिड़खली', 'चांदा बाबा पोली दे', 'ठंड बाजे ठाड़ी,' 'धोई ले रे मूंड़ो, धोई ले रे,' 'भूर्‌या की जीजी' आदि ऐसे कई गीत हैं, जो ध्वनि-विज्ञान की दृष्टि से अलग अलग अपना महत्व रखते हैं, इन्ही गीतों को लेकर शास्त्रीय संगीत के सुविख्यात अन्वेषक एवं सुप्रसिद्ध गायक श्री कुमार गन्धर्व द्वारा रची गई इन धुनों से संगीत शास्त्रियों को एक नई दिशा का बोध कराया गया है।

क्रम संबद्ध कथा गीत बहुत कम पाये जाते हैं, अब तक हमें इस प्रकार के लगभग दस गीत उपलब्ध हो सके हैं। इन गीतों में मां का ममत्व उस समय जागृत हो उठता है, जब वह अपने लाड़ले को रूठते हुए देखती हैं।

'नाना रे तू बायर मती जाय, थारा पगल्या धूल में भराय।
धूल में भराय तो कसो करूं, आंबा रोटी रसो करूं।
रस में पड़िग्यो कांकरियो, नाना का बाबा ने मारियो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ठाकरियो ठकरई करे, नाना ऊपर लूण करे ।
लूण करंता, लागी बार, नानो भई जीमे चांवल दार ।'

० ० ० ० ० ० ०

'नानारे तू बागाँ मती जाय, बागाँ का जामफल तोड़ी-तोड़ी खाय ।
आवेगी मालण, देवेगी गाळ, नाना का झगल्या, टोपी लेगी छुड़ाय ।
नानो भई फिरे म्हारो अली गली, तन कुमलाणो चम्पा की कली ।
नानो भई म्हारो कां गयो ? ढोल बाजे जां गयो ।
हेला पाड्ड बाड़ी में, बोले चम्पा वाड़ी में ।

जब माँ इन लोरियों के धीमे धीमे स्वरों में अपने लाड़ले बेटे को झूले में झुलाते हुए अपने सुमधुर कंठ से गुनगुनाने लगती है, तब उस प्रकोष्ठ का वातावरण शांत, सरल और निर्मल बन जाता है और नींद की मस्ती संगीत की स्वर लहरी द्वारा उसके मानस पर अधिकार जमा लेती है। मां गीत अधूरा छोड़कर फिर अपनी दिनचर्या में संलग्न हो जाती है, त्योंही बालक फिर अचानक रो पड़ता है और माँ दौड़ी आती है। वह अपने धीमे-धीमें और मधुर स्वरों में गीत की दो चार पंक्तियां फिर गुनगुना जाती है। और शिशुका चेतन मन फिर नींद के अवचेतन आवरण से ढँक जाता है। इसी प्रकार की कुछ लोरियों को हम यहां उद्धृत करते है, जो सदियों से मालव जन के मन पर एकाधिकार जमाये हुए हैं:—

'नाना का पालना में रेशम की डोर, जो हुलरावे [1] उने घुघरी [2] ने गोर [3]
आवेगा काका, मामा, नाचेगा मोर, नाना का घर की पकी गई बोर ।'
'नाना की बई तो पाणी गई, घर में कुतरा बारी [4] गई ।
कुतरा ने तो कर्‌यो उजाड़ [5], नाना के पड़ीग्या घप्पा चार ।'
'नानो भई तो म्हारो रायां [6] को, दूध पिये दस गाया को ।
एक गाय नाना की दूध नी दे, नानो भई म्हांरो रोतो नी रे ।
रोतो नी रे तो कसो [7] करूं, आंबारोटी, रसो करूं ।
नानो भई म्हारो जीमतोई [8] जाय, बिल्ली बाटती चाटती ई जाय ।'
'नाना भई की तो दो-दो गाय, कूण [9] दुवे [10] ने कूण मेलवाने [11] जाय ।
काकासा दुवे ने बाबासा मेलवाने जाय, पीछे से नानो भई वो दोड्यो-दोड्यो जाय ।
मती [12] जाव नाना भई बायर [13] मती जाय,
छोटा छोटा पगल्या [14] धूल में भराय ।

प्रस्तुत लोरियों में मातृ हृदय के वात्सल्य रस की धारा अविरल रूप में प्रवाहित हो रही है। माता अपने पुत्र के लिये कई काल्पनिक सपनों का निर्माण करती है और उनमें ही खोई-खोई सी भटकती रहती है। कभी वह अपने लाड़ले को रेशम की डोर से बँधे पालने में झुलाती है, तो कभी उसे दस गायों का दूध पिलाती है, आम व रोटी खिलाती है। इतना ही नहीं, उसे उसकी भी चिन्ता है जो उसके लाड़ले को झोले दे रहा है।

यहाँ हम कुछ ऐसे गीत दे रह हैं जिनमें लयबद्ध गीत, कथा गीत, अर्थहीन शब्द रचना के गीत, और व्यंग्य, हास्य आदि विभिन्न प्रकार के गीतों का समन्वय हुआ है—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लयबद्ध कथागीत

(छन्द खेल)

१ चिट्ठी,[१५] मिट्ठी,[१६]
गुदगुदावणी,[१७] रस्तो बतावणी,[१८]
राणाजी को सीटो,[१९] ।

× ×

२ सुवो के सुई ? सुई,
थारी सासू मुई।[२०]
सुवो के सुई ? सुवो,
थारो[२१] सुसरो मुवो ।
तालो[२२] खुलेईनी, कुंची पावेईनी,[२३]
आजे रे लुवार का बेटा,
तालो खोलजे, खच ! खच !!

० ०

३ अटकन मटकन,[२४] दही चटोकन,[२५]
अगला झूले,[२६] बगला झूले,[२७]
सावण मास करेला फूले,
फूल फूल की बावड़ी,[२८]
राजो गयो दिल्ली,
दिल्ली से लायो सात कटोरी,
एक कटोरी फूटीगी,
राजा की टाँग टूटीगी ।

× ×

क्रम सम्बद्ध कथा गीत

(क्रीड़ा गीत)

४ पेला पितम्बर, दूजा हीरा,
तीजा कीड़ा, चौथा चाँद,
पांच का पंड्या, छे की छड़ी,
सात का सतनारायण, आठ का एंठवाड्या,
नौ का नाई, दस का दसेरा,
ग्यारा की गऊ, बारा की बऊ,
तेरे को तार, चवदा को चोर,
पन्दरा की पूनम, सोला की अमावस ।

× ×

बरसात के गीत

५ पाणी बाबो आयो,
ककड़ी भुट्टा लायो,

० ०

६ डेंडक माता पाणी दे, पाणी की पखाल दे,
म्हारा मामा को बाड़ सूखे,[२९]
डेंडक माता पाणी दे ।

[३०] में तेल,
छोरा छोरी बेच खाय, काय को पटेल ।

× ×

शीत काल का गीत

७ ठड बाजे ठाड़ी,[३१] पटेल लावे पाड़ी[३२]
पाड़ी ने कर्‌यो पोटो,[३३] लो पटेल रोटो,[३४]
रोटा ऊपर भाजी, पटेल को मन राजी[३५]

खेल गीत में ईश्वर का बाल रूप

८ अटली मटली दाम दड़ेलो,
दामा घरे आस पास
जीमे बेठ्या म्यानगार,[३६]
म्यानगार की काली टोपी,
काला हे किसन जी,[३७] गोरा हे मुकन जी,
रामजी ने डंको[३८] दियो,
जीत्या[३९] हनुमानजी ।

० ०

ध्वनि साम्य

९ थेपण थेपण छाणा[४०] चोर माथे बाणा,[४१]
चोर लईग्यो पिंडी,[४२] रोटी हुईगी ठंडी

० ०

१० चांदा बाबा पोली[४३] दे, घी की कचोली दे,
आदो[४४] लाडू भावे नी,
आखो[४५] लाडू देवे नी,
ढोल ढोली बजावे नी,
झम्मक लाड़ी आवे नी,

० ०

११ [४६]चांदे देठी चिड़खली,[४७]
[४८]आंगण बेठ्या पावणा,[४९]
गेली गोर, परणई दूं पोर,
ऐसो लऊं लाड़ो, दोई आंख बाड़ो[५०]

० ०

१२ भजो राधे गोविन्द, भजो राधे गोविन्द,
दाल बाटी[५१] खूट[५२] गये,
चूरमा का गंज[५३] भजो राधे गोविन्द ।

० ०

१३ चाँदे बैठी चिड़खली
उड़ई दो म्हारा दादाजी,
आँगण बैठया पामणा
जिमई दो म्हारा दादाजी,

० ०

राम की चिड़िया राम को खेत ।
खाव म्हारी चिड़िया, भर भर पेट ।।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उपर्युक्त बालगीतों में प्रथम गीत छोटे बालकों की उंगलियों को एक विशेष नाम से संबोधित करके गिनने और एक विशेष प्रकार का खेल खेलने के समय गाया जाता है। तीसरे गीत में राजा की हँसी उड़ाई गई है, जिसमें सावन मास और झूले का भी वर्णन आ गया है। चौथे गीत से प्रकृति के सौंदर्यपूर्ण दृश्य उपकरणों को ले कर बालकों को गिनती सिखाने और विभिन्न उपकरणों के नाम याद कराने में सहायता पहुंचती हैं। इसे कुछ बालक आपस में मिल कर अपने पर घटित करते हैं। बरसात में ग्रामीण पटेल की व्यंग्यपूर्ण हंसी पाँचवें व छठे गीतों में उड़ाई गई है, गांव का और शीत के गीतों का वर्णन क्रमशः छठे और सातवें गीतों में हुआ है, पटेल एक प्रमुख व्यक्ति होने के कारण वह भी बालकों के हास्य का पात्र बन गया है। आठवें व तेरहवें गीतों में राम, कृष्ण और हनुमानजी के साथ बालकों ने खेलना प्रारम्भ कर दिया है, किन्तु आठवें गीत को बालक और बालिकाएं अपने हाथों को उंगलियों के आधार पर उल्टा टिका कर एक विशेष प्रकार का खेल खेलते समय गाते हैं। नवें, दसवें और ग्यारहवें गीत में शब्द-ध्वनि और अर्थ-ध्वनि दोनों प्रकार के पदों का मिश्रण हुआ है, किन्तु उनमें गेय शक्ति की प्रधानता होने से वे बालकों के लिए सुगम, सरल और सुबोध बन गए हैं, बारहवें गीत में मालवा के प्रिय भोजन दाल बाटी और चूरमे का स्मरण है। इन गीतों में वस्तु वर्णन की स्वाभाविक अभिव्यक्ति हुई है और प्रत्येक प्रतीक को सुबोध एवं सरलतम ढंग से समझाने का प्रयास किया गया है। इन गीतों में जहाँ सारल्य एवं विनोद है वहीं प्रकृति की सहजात छटा भी दर्शनीय बन पड़ी है।

प्रस्तुत लेख में हम शिशुगीतों की विभिन्न प्रवृत्तियों का विस्तृत विश्लेषण नहीं कर सके। कुछ गीतों के बड़े होने के कारण तथा बालिकाओं के आनुष्ठानिक गीतों का बाहुल्य होने के कारण, उन सभी गीतों का विवेचन इस लेख की परिमित सीमा में संभव नहीं है, उन पर स्वतंत्र रूप से फिर कभी विचार किया जा सकेगा।

---

१ झुलावे, २ ज्वार अथवा गेहूं के बिना पीसे पका कर नमक मिरच डाल कर बना हुआ खाद्य पदार्थ, ३ गुड़, ४ घेरकर, रोककर, ५ नुकसान, ६ सुसम्पन्न परिवार, ७ कैसा, ८ भोजन करना, ९ कौन, १० दूध दुहना, ११ जंगल में चराने, १२ नहीं, १३ बाहर, १४ पाँव, १५ सबसे छोटी उंगली, १६ छोटी उंगली के पास वाली अनामिका, १७ बीच की उंगली, १८ तर्जनी, १९ अँगूठा, २० मरगई।

२१ तेरा, २२ खुलता नहीं, २३ मिलती नहीं, २४ शब्द समूह बिना अर्थ वाला, २५ चाटने वाला २६ सीधे हाथ को, २७ बाएँ हाथ को, २८ वापी, २९ गन्ने का खेत, ३० तुम्बी, ३१ ठिठुर कर खड़ी, ३२ भैंस की कटिया, ३३ गोबर का पोटा, ३४ ज्वार की रोटी, ३५ प्रसन्न, ३६ तलवारधारी सिपाही ३७ श्री कृष्ण, ३८ आदेश, ३९ विजयी हुए, ४० कंडे, ४१ जूते जोड़ियां, ४२ घास का पिंडा, ४३ नरम व पतली रोटी ४४ आधा, ४५ पूर्ण, पूरा, ४६ कच्ची दीवार, ४७ चिड़ियाँ, ४८ आंगन में, ४९ मेहमान पाहुना, ५० तिरछा देखने वाला, ५१ एक प्रकार का खाद्य पदार्थ, ५२ समाप्त होना ,५३ ढेर।

— सती दरवाजा, उज्जैन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मालवी के मृत्यु गीत

डॉ० चिन्तामणि उपाध्याय

तत्वज्ञानियों के लिये मृत्यु भय का कारण नहीं बन सकती। मानव जीवन धारण कर अपने कर्त्तव्य को सफलता के साथ पूर्ण किये जाने के पश्चात् वृद्धावस्था में कोई व्यक्ति यदि देश त्याग करता है तो वह शोक एवं वेदना की अपेक्षा गर्व और कर्त्तव्य की प्रेरणा का विषय बनता है। मालव एवं उसके दक्षिणी अंचल मे स्थित निमाड़ प्रदेश में किसी वृद्ध एवं सन्त की मृत्यु पर भजन ही गाये जाते हैं। गीतों के आयोजन में मृत व्यक्ति की शव-यात्रा श्मशान भूमि तक ले जाई जाती है झांझ एवं मजीरे मृदंग आदि वाद्यों के संगीतमय वातावरण में वैराग्य भावना का शांत वातावरण बन जाता है। मृत्यु के अवसर पर गाये जाने वाले इन गीतों को मसाणिया गीत एवं नारदी भजन कहते हैं। मृत्यु गीतों को नारदी-भजन की संज्ञा शायद उनमें निहित वैराग्य भावना के कारण दी गई है। नारदी भक्ति का उल्लेख कबीर ने भी किया है। " संसार की माया ममता के सब संघर्षों को तोड़कर आत्म-रूप में रम जाने वाले जीवनमुक्त साधक की भक्ति का आदर्श आत्म ज्ञानी एवं परम भक्त नारद ही हो सकते हैं। नारद भगवान के अधिक निकट हैं। आत्मा भी परमात्म-तत्व में मिलने के लिये भौतिक शरीर को छोड़कर परलोक के लिये प्रस्थान करती है। अतः मृत्यु के पश्चात् परब्रह्म के निकट जाने पर गाये जाने वाले गीतों को नारदी भजन की संज्ञा देना उपयुक्त ही जान पड़ता है। 'मसाणिया गीत' किसी युवा बालक अथवा स्त्री की मृत्यु पर नहीं गाये जाते।

मृत्यु गीतों की वैराग्य भावना

वैसे मरण का अवसर ही शोक के वातावरण को उत्पन्न करता है। किन्तु मृत्यु गीतों की वैराग्य भावना एवं वर्णित विषय इतना प्रभावमय हैं कि स्थिति का उल्लास आत्म स्वरूप का ज्ञान आदि भावनाएं और चिन्तनाएं हृदय को झकझोर देती हैं उसका प्रभाव श्मशान वैराग्य की अपेक्षा स्थायी होता है। यहीं लोकगीतों में दार्शनिक चिन्तन से काव्य का रस उमड़ता है। आकर्षण और राग की डोर में बँधा हुआ मनुष्य जब संसार को छोड़ता है उसके परिजनों का विशेष कर उसकी पत्नी का मनोविज्ञान विलाप करना और करुणा के साथ संसार की असारता एवं मानवी देह की नश्वरता का भाव जाग्रत करता है:—

अरे म्हारा हंसा रे लोभी जीवड़ा रे, काया री बाड़ी मेली मत जाओ
हंसा तू ने अपुण आया दोई जणा, अब अन्त अकेले जाय रे म्हारा हंसा....
तूने आपुण पिया दूध रे, अब जात पियो तम नीर रे म्हारा हंसा....
ओ हंसा माय बाप आपण सेव्या जणा, अब माय बाप छोड़्या मकान....३।१४२

प्राण पंछी के उड़ जाने की कल्पना में नश्वर देह और आत्मा के चैतन्य एवं शाश्वत स्वरूप का संकेत किया गया है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पींजरा से पोपट उड़ी गया अरे बैठ्या जमना किनार
जमुना में पोपट न्हइ रया भई पोपट थारा कारणे
अरे खासी बाग लगाई रे चम्पा चमेली दोई मोगरी
पड़ो रे पोपट श्री राम का —३।१४३

वैराग्य भाव के साथ ही सृष्टि एवं जनजीवन सम्बन्धी चिन्तन अधिक गूढ़ एवं गंभीर हो उठता है। वस्तुतः अन्य गीतों के समान मृत्युगीतों पर भी मध्ययुगीन सन्तों की वाणी का अभीष्ट प्रभाव है। सबद, तिरवेणी (त्रिगुण) अणहद, सूरत, अष्टकमल आदि पारिभाषिक शब्दों का प्रयोग निर्गुण विचारधारा को स्पष्ट करता है।

अरे सोवन वालो हालरो रे जाकी निरमल जोत,
सबद घात को पालणों अरे पाट्या तीन सौ साठ
एक खील का जड़ाव अरे जाये ठठिया ठाठ सोवन वालो....
आगासी फुलवारी बन्दियां लागा तिरवणी डोर
जुगत से झूला चला दिया अरे हेचा मन रंग मोल सोवन वालो....
अणहत घुंघरू बाजिया अरे सूरता करो विचार
अष्टकमल दिया जल चड़िया अरे लागा साँकल डोर सोवन वालो....
नद्दी सिपरा के घाट पै अरे बैठ्यो ध्यान लगाय
आवता देख्या हो पिंजड़ा अरे गोद लियो उठाय सोवन भालो....३।१४४

आत्मा और परमात्मा के प्रेम की अभिव्यक्ति का लौकिक आधार दाम्पत्य सम्बन्ध है। आत्मा एक नव-वधू है और परब्रह्म उसका प्रियतम। यह संसार आत्मा का नैहर है (मायका है)। प्रियतम आकर अपनी वधू को अपने घर ले जाता है। विवाह के पश्चात् ससुराल में वधू को ले आने की प्रथा को 'आणा' कहते हैं मृत्यु का आना ही मानो प्रियतम की ओर से प्रेषित किया गया प्रणय का आव्हान है। शव की अन्त्येष्टि क्रिया से पूर्व जो शृंगार सज्जा की जाती है वह आत्म रूप वधू का प्रिय के महामिलन के सभारम्भ का उल्लास है।

आणो आयो रे परिब्रह्म को सासरिया को जाणो रे
चालो म्हारा सात की सई होण अरे अपणा न्हावण जांव
अरे कँई देवा मंदिर सिदारां आणो आयो रे.....
चालो म्हारी सांत की सई होण अरे अपण माथो गुंथावां
कई गुन्थ्या कई गूंथनों मोतियन मांग पुरावां आणो आयो.....

इन गीतों का अपना शान्त, धीर एवं गम्भीर प्रभाव श्रोत्राओं के मन पर संसार की क्षण भंगुरता एवं असारता की अमिट छाप छोड़ता है। मालवी के लोक गीतों में इन मसाणियाँ गीतों का अपना विशिष्ट स्थान है।

—हिन्दी विभाग, माधव महाविद्यालय, उज्जैन

---

१ भगति नारदी मगन सरीरा.....कबीर ग्रंथावणी पृष्ठ १९८

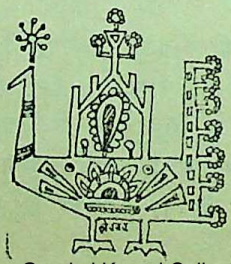

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डॉ. श्यामसुन्दर व्यास

आधुनिक मालवी कविता

"मालवी का गौरव आँगन का तुलसी चौरा बनने में अधिक है किसी
अधुनातन बैठक की शोभा बढ़ानेवाले केक्टस बनने में कम।
अपने संस्कारों एवं परिवेश में उभरकर नवीन दृष्टि
रखना एक बात है, अपने संस्कारों एवं परिवेश को
खुरचकर फेंक देना दूसरी बात। प्रथम उसका
जीवन है द्वितीय उसकी मृत्यु !"

हृदय की हूक जब कंठ की कूक बनकर निःसृत होना चाहती है तो कविता का जन्म होता है। हृदय की हूक जितनी स्वाभाविक है, कंठ की कूक भी उतनी ही नैसर्गिक। हूक भाव के घर से चलती है और कूक स्वर की देहरी से आगे बढ़ती है। हूक से कूक तक की प्रक्रिया अनुभूति से अभिव्यक्ति तक की यात्रा है। अनुभूति में मात्रा-भेद हो सकता है परन्तु अभिव्यक्ति में प्रकार-भेद होता है और भाषा-भेद भी। इसीलिए हूक भाव की बेटी है और कूक केवल कण्ठ का संगीत ही नहीं, कला का स्वर भी होती है। संवेदनशील हृदय की भाव-संपदा को संवेद्य बनाने वाली कला का नाम काव्य है और कविता इस कला की सर्वश्रेष्ठ संज्ञा है। संक्षेप में हम कविता को भावों की कला कह सकते हैं।

परिवेश में भावों का परिस्करण करने की अद्भुत क्षमता होती है तो भाषा में उनका संस्कार करने की शक्ति। जैसे हर माटी की अपनी-अपनी विशेषताएं होती हैं, वैसे ही भाषा के अन्तर्गत पाई जाने वाली प्रत्येक बोली की अपनी-अपनी विशिष्टताएं। मालवी का एक विशिष्ट गुण उसकी मिठास है और इसीलिए भावभिव्यक्ति के क्षेत्र में ओज की अपेक्षा माधुर्य की व्यंजना उसमें अधिक हुई है। मालव प्रदेश के परिवेश ने भी इस माधुर्य-वृद्धि में अपना योगदान दिया है। इसके लोक-गीतों में भी ओज की अपेक्षा माधुर्य गुण का प्राधान्य है। लखनवी नजाकत की तरह मालवी की भी अपनी एक मधुरता है। यही कारण है कि मालवी बोली में श्रुति-कटुत्व की अपेक्षा श्रुति-माधुर्य अधिक है और इसीलिए यहाँ के निवासी महीन चुटकी भरने में तो प्रवीण हैं, 'भाटा मार' बात कहने में चतुर नहीं।

'जनपदीय आन्दोलन' के परिणाम स्वरूप मालवी बोली के साहित्य ने भी एक करवट ली। इसका शुभ परिणाम यह हुआ कि 'लोक-गीतों' की समृद्ध परम्परा को समझने-समझाने से लगाकर मालवी में भी नवीन साहित्य का प्रणयन होने लगा। अपनी बोली की मिठास को समझकर, उसे सजाने-सँवारने का कार्य प्रारम्भ हुआ। मालवी की कविताओं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
में—जिन्हें हम आधुनिक मालवी कविताएं कह सकते हैं—एक ऐसा स्वर उठा जो परम्परित होकर भी नया है। परम्परित इसलिए कि वह अपने परिवेश से कटा नहीं है और नया इसलिए कि अपने युग की भावनाओं की ओर से उसने आँखें बन्द नहीं की है।

मालवी कवि को जो भाव-सम्पदा अपने परिवेश से प्राप्त हुई उसमें मालवा की सौंधी, काली चिकनी मिट्टी की गन्ध है। ग्राम्य सरलता है, ग्रामीण हास्य की मुक्त विनोदी छटा है। इस विनोद में जहाँ एक ओर परायी पगड़ी उछालकर सुख लूटने जैसा उल्लास है तो दूसरी ओर पुरातनता को पकड़कर नवयुग की नयी-नयी बातों के प्रति मन की 'भड़ांस' निकालने वाली मनोवृत्ति भी। लावणी की लटक, लोक-गीतों की लयात्मकता, लोकोक्तियाँ एवं मुहावरों में छुपी चुटकी बाजी और लोक-जीवन की रसात्मकता ने भी मालवी कविता की भाव-सम्पदा को समृद्ध बनाया है।

सर्वश्री नन्दकिशोर, बालाराम पटवारी, पन्नालाल नायाब, युगलकिशोर और शालिग्राम मास्टर की स्वर-साधना से अनुप्रणित होते हुए मालवी कविता ने प्रथम बार श्री आनन्दराव दुबे का कण्ठ-स्वर पाकर आधुनिकता का बाना धारण किया। युवा और किशोर कण्ठों का साथ पाकर उसमें एक नई रवानी फूटी और यह कहा जा सकता है कि आधुनिक मालवी कविता का इतिहास है। कवि सम्मेलन के मंच पर ही इसका उदय हुआ है और कवि सम्मेलनों के मंचों ने ही इसके विकास में योगदान भी दिया। जन-मन पर छा जाने के बाद ही इसके छपने की आंशिक व्यवस्था हो पायी। इसीलिए इसमें लुभाने-वाली छटा तो है, छपनेवाली कला का बहुरंगी निखार और 'नखरा' नहीं। आधुनिक होकर भी यह 'आधुनिका' नहीं बन पाई है। इसका परिणाम यह हुआ है कि लँहगे-लुगड़ी' से कुछ अधिक नई वेश-भूषा खोजने वालों को इससे सन्तोष नहीं होता। आधुनिक कला-बोध में वह चाहे 'कोरी' हो, मगर आधुनिक भाव-बोध को अपनाने में यह पीछे नहीं है।

जैसा कि मैं पहले कह आया हूँ, श्री आनन्दराव दुबे ने मालवी कविता को एक नवीन क्षेत्र एवं नवीन भाव-भूमि प्रदान करते हुए उसे गीतों में ढाला, कथात्मक कविताओं में बाँधा और सहज अभिव्यक्ति के माध्यम से लोकप्रिय बनाया। नत्थूसिंह 'तोमर' के गीतों वाला माधुर्य, दुबेजी के कंठ से भले ही न झरा हो, परन्तु मालवी लोकोक्तियों एवं मुहावरों की व्यंगात्मक छटा ने उनके काव्य को जन-जन के मन तक पहुँचा दिया। 'बसंत्या बरसात अई गी रे' 'रामाजी रइग्या ने रेल जाती री', नाना की लाड़ी' 'सेर चलां रे' 'हूं अद-ड़ाइग्यो' आदि रचनाएँ बहुत ही लोकप्रिय हुईं। दुबेजी की कविताओं में हास्य-व्यंग की छटा के साथ ही अभिव्यक्ति का जो सारल्य है, जन-जीवन की पीड़ा की जो मनोहारी झाँकी है, वस्तु-चित्रण और भाव-विन्यास की जो सहजता है, वह यदि अद्वितीय नहीं तो अनुपम अवश्य है। दुबेजी ने प्रयोग के नाम पर प्रयोग नहीं किये और इसीलिए उनकी कविता सहजता में साँस लेती है, कृत्रिमता में दम नहीं तोड़ती। विस्तार-भय से अधिक उदाहरण न देते हुए मैं दुबेजी के एक प्रयोग की चर्चा करूंगा। 'हूँ अद्ड़ाइग्यों' कविता में एक स्थल पर 'हेंडल' लगने के लिये उन्होंने 'बईसिकल ने सींग मार्‌यो' का प्रयोग किया है। इस प्रयोग में कितने प्राण हैं, इसे एक सरल ग्रामीण को सामने रखकर, सहृदयजन समझ सकते हैं। इसी कविता का एक 'झन्नाटा गन्नाटा खाती, टणन् टणन् घण्टी टणकाती' वाला अंश तो अपनी चित्रोपमता, ध्वन्यात्मकता एव रसात्मकता का अनुपम उदाहरण है।

आधुनिक मालवी कविता के दूसरे लोकप्रिय कवि हैं श्री मदनमोहन व्यास। व्यासजी की कविता में मालवा का जन-जीवन बड़ी ही सादगी के साथ अभिव्यक्त हुआ है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
और उनके काव्य-पाठ वाले मासूमियत के लहजे ने इन कविताओं को जीवन्त बना दिया है- 'म्हारो नाम बाल्यो हे,' 'मालवा की नानी', 'मालवा की जतरा' जैसी कविताएं उदाहरण स्वरूप रखी जा सकती हैं। सामाजिक विषयों पर भी व्यासजी ने बड़ी ही कुशलता से अपनी लेखनी चलाई है और उनके मुख से निकलता भोला व्यंग, इन कविताओं की वेधक शक्ति को तीव्र कर देता है। लोकोक्तियों एवं मुहावरों का सम्पन्न प्रयोग जहाँ उनकी रचनाओं को प्राणवान बनाता है, वहीं कहीं-कहीं इनकी अति ने भी उनके काव्य की सहजता को बोझिल कर दिया है। एक उदाहरण लीजिये—

"नई की बणी बरात सभी ठाकुर हुइग्या तम बराती,
आँदो अलग आरती गावे, वेरो गइर्‌यो परबाती।"

व्यासजी अगर किंचित सावधानी रखते तो अन्धे से प्रभाती और बहरे से आरती गवाते। ऐसा होने पर सम्भवतः उसमें अधिक निखार आ जाता। प्रयत्न-जन्य की अपेक्षा कुछ सहज व्यंगों ने व्यासजी की कविता को एक नया रंग प्रदान किया है। 'ट्रांजिस्टर' वाली कविता इसका उत्तम उदाहरण है। दो चार पंक्तियां देखिए—

"अरे इत्ता फायदा है कि कोई कँइ कँइ के
ट्रांजिस्टर सुणी ने भैंसा ज्यादा दूध दे,
भैंस भैंस ठेरी,

चारो चगली री है ने माथो हलई री है,
भैंस का आगे लता मंगेशकर गई री है।"

व्यासजी से मालवी कविता को बड़ी आशाएं हैं। एक सफल मंच कवि के साथ ही, कवि की गहरी भावुक दृष्टि, उन्हें अपने काव्य को माँजने में योगदान देगी, ऐसी आशा उनसे रखी जा सकती है।

तीसरे लोकप्रिय कवि हैं श्री गिरवरसिंह 'भँवर'। श्री भँवर की कविताओं में मालवी, राजस्थानी और निमाड़ी का संयुक्त रंग है। माधुर्य एवं प्रसाद गुण के साथ ही उनकी रचनाओं में ओज भी मिलता है। यद्यपि भँवरजी का झुकाव इधर खड़ी बोली के काव्य की ओर अधिक हो चला है, परन्तु लोक भावनाओं की कविताओं के लिए उन्होंने जो मैदान तैयार किया, वह स्तुत्य है। भँवर की गुनगुन वाली साधना, रस-पान और रस-दान के साथ ही लोक रंजनकारी भी रही है। भँवर आगे आगे बीन बजाते ही नहीं चले, अपने पीछे गुनगुनाने वालों की एक फौज लेकर आगे बढ़े हैं। यह अपने आप में एक बड़ी बात है। सेलाणी, कांवेरी की मां, आज म्हारी नानीजी पूनमचन्द होती, पियाजी मानो म्हारी बात, चालो बाना में आदि रचनाएं भँवरजी की कुछ उत्तम रचनाएं हैं। भँवरजी की रचनाओं में से एक-दो उदाहरण लीजिये—

हरो हरो यो खेत हमारो, रात जिका में चन्दो आवे,
और डागला पे बैठी ने, रोज चाँदणी गाणो गावे,
मोर मोरनी और पपइया अपणा जोणा से खेले,
अरे तमारा मन की राणी, कद से यो दुखड़ो झेले।'

× × ×

हल्दी रा छींटा चुनरी पे, हिंगलू रो टीको माथा में।
कुंकुम री लाली मांग भरी, मेंहदी री लाली हाथा में॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रृंगार और ओज की बड़ी ही मधुर एवं सशक्त अभिव्यक्ति श्री बाल कवि बैरागी की कविताओं में दृष्टि गोचर होती है। श्री बैरागी का झुकाव भी अब खड़ी बोली के काव्य की ओर अधिक हो गया है, परन्तु उनकी मालवी कविताओं में उनका बाल-कवि, बैरागी नहीं, पूरा अनुरागी बनकर उतरा है। उनकी प्रतिभा ने 'पनिहारी' बन कर, मालवी के पनघट पर ही नया-नया रस छलकाया है। भावाभिव्यक्ति, भाव-संयोजन एवं गीति तत्व की दृष्टि से बैरागी की मालवी कविताएं बहुत ही उच्च कोटि की है और बैरागी के कवि-हृदय की धड़कन इनमें पूरी ईमानदारी के साथ सुरक्षित हैं। बानगी के बतौर यहाँ कुछ पंक्तियां प्रस्तुत हैं:—

"मोटी मोटी आंख्या में नानो नानो काजर आंखा लागे नवी नवी,
आज नाक में नथ पहरी तो नाक कहे के म्हूं भी नवी।
नवी मांग में नवा नवा मोती कंकू की टीकी नवी नवी,
हँसि कामणी तो शरमइगी जूही की कलियाँ नवी नवी।"

'हरियालो आँचल' के प्रणेता श्री हरीश निगम का, मालवी की आधुनिक कविता में एक विशिष्ट स्थान है। 'टेगड़ी कड़व खायगी' की प्रसिद्धी के साथ ही उनका 'पाती-साहित्य' बहुत ही लोकप्रिय हुआ है। व्यंग के क्षेत्र में उन्हें अच्छी सफलता मिली है, पर मालवा की माटी और उसके संस्कार भी उनके काव्य में उजागर हुए हैं। उदाहरणार्थ उनकी 'भारत माता का हिरदा में जड्यो रतन सो मालवो' रखी जा सकती है।

अपनी निराली 'ढब' एवं संवादात्मक-काव्य रचनाओं के क्षेत्र में, भावसार 'बा' एकदम बेजोड़ हैं। मालवी की बड़ी ही हृदय-स्पर्शी अभिव्यक्ति उनके काव्य में हुई है। 'तराजू' 'नारंगी' खरबूजो' 'ताला-कूंची' जैसी रचनाएँ उदाहरणार्थ रखी जा सकती हैं। 'बा' के 'तेवर' देखने योग्य हैं। जैसे:—

देख रे आँधा, मत कर घाँदा, नवरा काँदा छीले।
थारा नीचे कितरा रेला बी पेलां देखी ले॥
कदी रेत पड्यो कदी खेत पड्यो ने गधे चड़ी ने आयो,
भाग भरोसे भेंट हुई तो म्हारा से इतरायो।

आधुनिक मालवी कविता के अन्य समर्थ कवियों में श्री मोहनसोनी, श्री नरहरि पटेल एवं श्री सुल्तान 'मामा' का भी अपना स्थान है। श्री सोनी एवं श्री पटेल ने कुछ बड़े ही सुन्दर प्रयोग किये हैं। श्री सोनी की 'परीक्षा', मालवी के कथात्मक काव्य में अपना एक अलग ही स्थान रखती है। इस कविता में श्री सोनी ने कहीं कहीं बड़े ही सफल प्रयोग किये हैं। यथा:—

उलझी थी लट यूं माथा की।
जूं रेखा अपना हाथां की॥

अथवा

मुरझ्यो मूण्डो जूं सुस्त कमल।
या दरदीली साकार गजल॥

श्री नरहरि पटेल की 'मालव की रात' और 'मत रो माता' नामक काव्य-संग्रहों की मालवी रचनाएँ जहाँ एक ओर लोक-गीतों और लोक-धुनों से अनुप्राणित हैं, वहीं दूसरी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और उन्होंने अपने युग को भी अपनी कविताओं में सँजोया है। कुछ परम्परित ढर्रे में नये प्रयोग भी हुए हैं। 'बोलो भायला' के अन्तर्गत एक प्रयोग देखिए:—

घोरा घोरा दूध ऊपर केशर को हे रग,
नीचे हरियाली धरती ने बीच ये पतंग।
बोलो भायला ?
'यो तिरंगो झंडो, —वाह रे भायला।

पूर्वकथित कवियों के अतिरिक्त आधुनिक मालवी कविता को समृद्ध बनाने में जिन अन्य कवियों ने योगदान दिया है उनमें सर्वश्री प्रकाश उप्पल, मानसिंह राही, बसन्तीलाल 'वंम', शशि भोगलेकर, बासीराम वर्मा, शिवनारायण उपाध्याय, पूनमचन्द सोनी, शिव चौरसिया, प्रेम नारायण सोनी आदि के नाम प्रसिद्ध हैं। इनमें से कुछ कवि तो आज भी साधना रत हैं और कुछ का झुकाव मालवी की अपेक्षा खड़ी बोली की ओर अधिक हो गया है।

आधुनिक मालवी कविता को समृद्ध बनाने वाले और भी ज्ञात-अज्ञात अनेक कवि हैं जिनके नाम, प्राप्त सामग्री के अभाव में, छूट गये हैं। कुछ प्रतिनिधि एवं लोकप्रिय कवियों की चर्चा ही मैंने यहाँ की है।

आधुनिक मालवी कविता के सन्दर्भ में मैं यहाँ एक दो बातें और कह देना आवश्यक समझता हूँ। सामान्यतः आधुनिक मालवी कविता की अधिकांश रचनाएँ 'गलाकारी' का चमत्कार लेकर 'मंचों' पर उभरी हैं; उनमें 'कलाकारिता' का अभाव है, ऐसा तो नहीं कहा जा सकता; परन्तु यह सत्य है कि अनेक रचनाओं का कला-पक्ष कमजोर है। कुछ समर्थ रचनाकारों ने अपनी अभिव्यंजना शैली को सँवारा है, परन्तु इस दिशा में अभी सुधार की आवश्यकता है। इसकी बात विषय-वस्तु से सम्बन्ध रखने वाली है। अनेक रचनाओं में शाब्दिक अन्तर के अतिरिक्त प्रायः वस्तु विषयक पिष्ट पेषण पाया जाता है। हास्य-व्यंग का स्तर भी कहीं कहीं बहुत उथला है। बीसी और तीसी के बीच की वयः वाली कविता से प्रौढ़त्व की आशा करना तो जल्दबाजी होगी, परन्तु यौवन के उन्मादी क्षणों को भी भटकन से बचाने के लिये साधना की सही दिशा आवश्यक है। एक रूपता से बचकर इसे विविधता प्रदान करना आवश्यक है। सबसे बड़ी और आवश्यक बात है मालवी की अपनी निजता। इसका संरक्षण एवं संवर्धन होना चाहिए। प्रयोग की झोंक में इसका रूप अपरूप न हो। यह जिस अंचल की बेटी है, उसकी सौरभ नष्ट न होने पावे। यह आवश्यक नहीं कि आधुनिक परिधानों के साथ ही इसमें आधुनिका के 'लटके-झटके' भी मौजूद रहें। मेरी विनम्र धारणा तो यह है कि मालवी का गौरव 'आंगन का तुलसी चौरा' बनने में अधिक है, किसी अधुनातन बैठक की शोभा बढ़ाने वाले केक्टस बनने में कम! अपने संस्कारों एवं परिवेश में उभर कर नवीन दृष्टि रखना एक बात है, अपने संस्कारों एवं परिवेश को खुरचकर फेंक देना दूसरी बात! प्रथम उसका जीवन है, द्वितीय उसकी मृत्यु! अस्तु।

• •

—गाँधी पार्क कॉलोनी, इन्दौर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पं. वासुदेव शर्मा

मालवी के आदि कवि पं. पन्नालाल शर्मा नायाब

सन् १९१२ ई. जब कि हिन्दी साहित्य में एकांकी नाटकों ने अपनी आँखें भी नहीं खोली थीं, उस समय मालवी बोली में 'मास्टर साहब की अनोखी छटा' नामक एकांकी का प्रकाशक एक अभूतपूर्व घटना है। साहित्य यदि जीवन का प्रतिबिंब है तो 'मास्टर साहब की छटा' हमारे ग्राम्य जीवन की एक सच्ची झलक है और इसे पं. पन्नालाल शर्मा 'नायाब' ने अपनी सशक्त लेखनी से तीव्र अभिव्यक्ति प्रदान की है। मालवी भाषा को इस पर सचमुच गर्व हो सकता है। इस छोटे से एकांकी का उन दिनों इतना प्रचार हुआ कि आगामी कुछ वर्षों में छः-छः संस्करण निकल गये। गाँव-गाँव में लोगों ने इसे रंगमंच पर खेलकर अपनाया। मालवी के आदि कवि पं. पन्नालाल शर्मा नायाब को लोग बाग आज भी 'छटा' के द्वारा तुरन्त पहचानते हैं।

कल्पना कीजिए शस्य श्यामला मालव भूमि वर्षा के दिन, मक्का के भुट्टों से भरे लहलहाते खेत, उनकी मेढ़ पर रखवाली के लिए बनाया हुआ मचान उस पर एक झोपड़ीनुमा घास-फूस की खोलड़ी, नीचे कोयलों से जगमगाती हुई सिगड़ी। किसान इस डागले पर खड़ा होकर फसल को नुकसान पहुँचाने वाले कौओं और तोतों के झुण्ड को उड़ा रहा हैं इसे मालवी मे 'होर्‌या ताड़ना' कहते हैं। ऐसे भरे सुहावने समय में एक किसान बालक स्वच्छन्द जीवन छोड़ कर पाठशाला की चहार दीवारी और शिक्षक की घुड़की के दम घोंटू वातावरण में बैठना भला क्यों पसन्द करेगा; मास्टर साहब लड़के को पकड़ कर उसकी टांगाटोली कर के मदरसे में ले जाना चाहते हैं और वक्ता पटेल उन्हें कैसा फटकारता है:—

वक्ता पटेल—बलद्‌या ना तो पूँद देखो गोदी खावेगा।
नाम मती लीजो छोरो भणवा नी आवेगा।
....
जाओ जाओ पंड्या तमे वेंड्या वइग्या हो।
करसाणों ना पाछे पड़ी कई लोगा हो।
पटलन —ऊँदी हूँदी घोड़ी टांगे छड़ी मारे तो।
दुःख नी देखाय छोरो एक म्हारे तो।

ये दिन तो खेलने-कूदने के हैं। किसान बालक डागले पर बैठेगा और भुट्टे खायेगा तथा होर्‌य ताड़ेगा।

दयाराम —मक्की ना तो खेत ऊपर होरया ताड़ेगा।
डागला पे बेठी छोरो मक्या झाड़ेगा।
....

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

घणी दया आवे म्हने म्हारा छोरा की।
पूरो कुण पाड़े अणी पंड्या हंड्या थी।

कवि मालवे के कृषक जीवन से कितना समरस हो उठा है ! किसान ऐसे समय अपने बच्चे को हर्गिज स्कूल नहीं भेजेगा और अगर झगड़ा करेंगे तो—

— घणी पंचात करोगा तो लट्ठ माराँगा।
एक हेड़ो नी ज पाक्यो डंड भराँगा।

ग्रामीण लोगों को पढ़ने लिखने से उन दिनों कितनी घृणा थी उसका दिग्दर्शन इन पंक्तियों में—

मदरसा का सामे वेटा निकल जे मती।
डाकी पंड्यो घणो खोटो पकड़ले कदी।

"मास्टर साहब की अनोखी छटा" कवि ने सन् १९१२ में लिखी जब कि वे ठीकरी (निमाड़) में हेड मास्टर थे और यही कारण है कि भाषा में निमाड़ी बोली की भी छाप है—

करुणावती—वेटा मती भण आपण माँगी खावाँगा।
चार खूंट का राजा काँई दुःख पाँवाया।
भणो भणी जाय फिरि नोकरी करेज।
गाँव गाँव रड़तो फिरे जीव तो डरेज।

यह भविष्यवाणी आज सत्य हो रही है कि जहाँ एक देहाती बालक ने थोड़ी सी उच्च शिक्षा पाई कि वह देहात से बिछुड़ कर शहरी जीवन में रम जाता है। माता पिता की सेवा शुश्रूषा और खेती बाड़ी को तिलांजलि।

कविवर पं. पन्नालालजी 'नायाब' ने 'छटा' के अतिरिक्त परिमार्जित शुद्ध हिंदी में—'भारत में फू और थू' नामक एक नाटक की भी रचना की। नाम करण में ही कितनी सशक्त एवं संक्षिप्त अभिव्यंजना है—फू....अर्थात् बीड़ी, सिगरेट, चिलम, गाँजा पी कर धुँआ छोड़ना...फू और तम्बाकू खाकर जहाँ जहाँ पिच्चक-पिच्चक थूँकना....थू यह रूपक भी सन् १९१४ में प्रकाशित हो चुका है। इसमें शराब, गाँजा, भाँग, तम्बाखू, चाय आदि व्यसनों ने देश को कितना जर्जर बना दिया है इसका मार्मिक वर्णन है।

ओ ! भारत वासी भाई। यह कैसी द्वंद्व मचाई।
फू-फू ने फुँका दिवाला ! थू-थू ने गजब कर डाला !!

इस नाटक में भारतेन्दु और द्विवेदी-काल की छाया स्पष्ट लक्षित होती है। इसके एक पात्र हैं मदिरासिंह ठाकुर, जो शराब पीकर नशे में धुत्त घूड़े पर पड़े हैं और कुत्ते उनका मुँह चाट रहे हैं। इसी समय उन्हें गाना सुनने की धुन सवार होती है। एक वेश्या आकर उन्हें मालवी बोली में यह गाना सुनाती है—

"सरकार थाँकी झाँकी प्यारी लागे म्हाने आज....खम्मा दारुड़ी।"

अणी दारुड़ी ए कीदो सत्यानास रे....छोड़ो दारुड़ी। शराब पी-पी कर घर में खाने को एक दाना नहीं बचा। धरती भी सब बिक चुकी है, घर में चूहे दण्ड पेल रहे हैं पर शराब नहीं छूट रही है—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धरती को एक चौसड़ो रयो नहीं हे पास ।
तो पो.थें सरदार हो, छत्रीपण रा नाज...खम्मा दारुड़ी ।

'म्हारा उकेड़्या दरबार–थाँकी झाँकी प्यारी लागे म्हाने आज' इस नाटक को पढ़कर भारुड़पुरे के ठाकुर तो इतने भड़क उठे कि उन्होंने बुक सेलर से 'फू-थू नाटक' की सभी प्रतियाँ मँगवा कर उनकी होली जलाई ।

कवि की लेखनी का इससे बड़कर और क्या सम्मान हो सकता है ।

श्री 'नायाब' का लिखा हुआ एक और छोटा-सा प्रहसन हैं जो प्रकाशित हो चुका है नाम है–'नौकरी का चस्का' इसमें एक किसान बालक अपने पिता से कहता है कि—

'बा हुँ नौकरी करलूँ रे । पिता कहता है–क्यों अपणो भाग बेंचे हे क्यों पोस्ती वणे हे । लड़का कहता है–बा तू नी समजे । नोकरी करे वी केसा गुड़-गुड़ बोले ने केसा कुट-कुट चाले । एक चार रुपट्टी को सिपई भी अपणा ने केसो टरकावे हे ।'

यहाँ भी कवि की पैनी दृष्टि भविष्य के पर्दे को चीर कर झाँक रही है ।

श्री 'नायाब' ८७ वर्ष के हो चुके हैं लगभग १७ वर्ष की आयु से इन्होंने लेखनी उठाई है और आज भी वह ढेर-सा मालवी साहित्य उगल रही है । इस छोटे से लेख में उनकी ७० वर्ष की दीर्घ तपस्या का मूल्याँकन करना संभव नहीं है किन्तु नीचे लिखे कुछ उद्धरण उनकी बहुमुखी प्रतिभा को पाठकों के सम्मुख प्रकट करने में सहायक होंगे ।

इस देश में सूदखोर महाजन सदियों से गरीबों का शोषण करते आये हैं कवि उनके प्रति कैसे उद्गार प्रकट करता है:—

राती राती पाग बाँधे माँय भरते गाबा ।
ऊपर दीखे लखपतियाजी भीतर कोरा बाबा ।
ऊँची-ऊँची हाट मांडे, खाली मेले डाबा ।
डरता री जो करसाण्याओ खेंची लेगा गाबा ।
जूती पेरे चाँपली, लटपट चाले चाल ।
खरो कमावे करसाण्यो ने लूटे वाण्यो माल ।

भारत में हिन्दू-मुस्लिम विद्वेष की जड़ में कौन है ? इसका विश्लेषण इन पंक्तियों में कितना सजीव हो उठा है:—

"मंदिर में भी तू ही तू, ओ मसजिद में भी तू ही तू ।
फिर क्यों तू-तू, मैं-मैं होती, अंधों को दीखा ना तू ।"

श्री 'नायाब स्वयं इसका उत्तर भी देते है—

"अंधे हैं टुकड़ों के मारे बुला रहा कोई तू तू ।
आपस में लड़ मरते नायाब, भारत के अंधे तू तू ।"

सामाजिक कुरीतियों पर भी इनके करारे व्यंग्य हैं । मृतक भोज पर वे लिखते हैं—

"इस मोती के चूरे ने लाखों मोती का चूर किया ।
विद्यामंदिर से लालों को, दूर किया मजबूर किया ।"

शोकाकुल पाहुने दूर दूर से मातमपुर्सी के लिए आते हैं । स्त्रियाँ गाँव के बाहर से पल्ला लेकर रोना आरंभ कर देती हैं—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"जीवित को शादी में खाते, खासा मजा उड़ाते हैं।
मरने पर रो रो कर आते फिर भी खाते जाते हैं।"

भला खाना कैसे छूट सकता है !

एक....ठाकुर साहब के जमाई बाई साहब का गौना लेने राजस्थान से पधारे। गाँव सड़क से ३ मील दूर, वर्षा का समय और मालवे का कीचड़। घोड़े की सवारी उन्हें आती नहीं और मोटर से नीचे उतरना उन्हें मंजूर नहीं आखिर ट्रेक्टर से मोटर को बाँध कर उन्हें लाये। ठाकुर साहब गाजे-बाजे से गाँव के बाहर उनकी अगवानी के लिए पहुँचे। इस धूम-धाम पर श्री 'नायाब' ने लिखा –

"धन धन थने बदावता, राठौरा रा बूंद।
माथे मोटर मेलतो; आतो कीचड़ खूँद।"

एक राजपूत से ऐसे ही शौर्य की अपेक्षा कवि कर सकता है।

केवल मालवी के कवि ही नहीं वरन श्री नायाब 'वनस्पति विज्ञान' के की धुरंधर आचार्य हैं। इन्होंने माँडव के घने जंगलों को खूब छाना है और विध्याचल पर्वत माला की जड़ी बूटियों की भरपूर खोज की है। सन् १९२१-२२ में जब इन्दौर के प्रिंस यशवंतराव औषधालय का उद्घाटन समारोह हुआ था, उसमें इन्होंने जड़ी बूटियों की एक भव्य प्रदर्शनी लगाई थी। उसे देख कर श्रीमंत महाराजा तुकोजीराव ने इन्हें एक स्वर्णपदक तथा प्रशंसा-पत्र से सम्मानित किया था। वास्तव में धूल से भरे इस हीरे की पूरी कद्र नहीं हो पाई है, कारण कि इनके निरंतर अध्यवसाय व श्रम का प्रतीक वह—सचित्र वनस्पति विज्ञान–नामक बृहद् निघण्टु अभी भी कपड़े के बस्ते में अप्रकाशित पड़ा है।

२३, तिलक नगर, इन्दौर–१

रंग चूंदड़ली

राता [1] फूलां रंगाणी कईं धोरा ओ चम्पेलीरा [2] फूल
रातड़ली रंग चूंदड़ली [3] !
घर जातां.....जी पूछे, गोरीए थारो वालो कुण, [4]
रातड़ली रंग चूंदड़ली !
बालपणा म्हारा माता बई वाला, पाछे म्हारो झरमर [5] बाप,
रातड़ली रंग चूंदड़ली !
भर जोबन केसरिया [6] वाला, गोद्यां ओ झडूल्यो पूत,
रातड़ली रंग चूंदड़ली !
आणें-गूणें वीराजी वाला, ओढ़ावे म्हाने दखणी को चीर,
रातड़ली रंग चूंदड़ली ! *

---

१ लाल, २ चमेली, ३ मालवी स्त्रियों की लाल रंगी सौभाग्य चूंदड़,
४ प्रिय कौन, ५ तेजस्वी, ६ प्रियतम।
* सौ० मनोरमा 'रमा' के अप्रकाशित संग्रह से।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बालमुकुन्द गर्ग 'मुकुन्द'

मालवी काव्य में राष्ट्रीय चेतना

यदि–भारत माता के हिरदा में जड़्यो रतन सो मालवो सत्य ही है तो मालवी की भी स्थिति लोक-साहित्य एवं लोक-भाषा के रूप में जन जीवन की सार्थक अभिव्यक्ति देने में समर्थ ही कही जावेगी। लोक-भाषाओं में मालवी का एक विशिष्ठ स्थान है। उन्नयन की प्रक्रिया में वैसे जितना समर्थ साहित्य भंडार हो जाना चाहिये था उतना हो नहीं पाया है फिर भी अद्यावधि जितना भी प्रणयन हुआ है उसके महत्व को नकारा नहीं जा सकता।

यहां हमारा अभिप्रेत मालवी-काव्य में जो राष्ट्रीय चेतना के स्वर मुखरित हुए हैं, उनसे है। राष्ट्रीय चेतना को मैं इस संदर्भ में एक व्यापक अर्थ में ले रहा हूँ जिसके अन्तर्गत युद्ध एवं संकट के समय की रचनाएं, निर्माण, श्रम, योजना, विकास आदि की रचनाएं समाहित हैं। अन्य लोक-भाषाओं की तरह विदेशी आक्रमणों के समय मालवी के कवियों ने अपनी राष्ट्र प्रेम की भावनाओं को सहज ही मुखरित किया है। उनकी सामयिक चेतना से जन-मानस में राष्ट्रीय भावनाओं का स्फुरण हुआ है।

मालवी के अग्रज-कवि श्री आनन्दराव दुबे की कविताएँ राष्ट्रीय भावनाओं से ओत-प्रोत मिलती हैं। इनकी विशेषता है कि ये ठेठ मालवी में काव्य रचना करते हैं। मालवा के प्रति दुबेजी की ममत्व एवं गर्व की भावनाएं इन पंक्तियों में दृष्टव्य हैं—

'खाँदे कुराड़ी, माथे पाणी, मालवा की माटी को कई मोल आंम्यो ?
मालवो पाम्यो रे, म्हारो मालवो पाम्यो !!'

यहाँ राष्ट्र के प्रति जो प्रेम एवं अनन्यता की भावना है वह मालवा तक सीमित है मालवा वा मातृ भूमि का क्या मूल्य ····? वह तो अनमोल है····अमूल्य है····। यही भावना चीन के आक्रमण के समय समग्र भारत के प्रति निष्ठावान होकर कुछ यूं अभिव्यक्ति पाती है 'यो घरऊ धुँवाड़ों छायो, उगमणे आंच लगाई रियो।' यही भावना 'भारत माता की गरबी' नामक रचना में और भी गहरी बनकर अभिव्यक्त होती है—

"थारा आँसू पे लागी लोइ की होड़।"

गिरवर सिंह 'भँवर' मालवी में ओज एवं माधुर्य के कवि के रूप में जाने जाते हैं। इनकी मालवी में राजस्थानी का पुट है। राष्ट्र की संकटापन्न स्थिति में उनका मानस भी क्षुब्ध-क्रुद्ध हुए बिना नहीं रहता तथापि यह आक्रोश जब अनुभूति के ताप में द्रवित हो अभिव्यक्त होता है तो उसमें उत्सर्ग की भावनाएं समाहित होती हैं एक वीर पुरुष की नारी के अन्तर का आलोकन वे यूं प्रस्तुत करते हैं—

'म्हारो माथो गुंथा म्हारे चुड़लो पैरा, लीली चुनड़ औड़ादे, म्हारी माय
म्हारा सायबजी रण में जावेला····।'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मालवी के अपने लोकप्रिय कवि जो सुदूर अंचलों में भी उतने ही लोकप्रिय हैं जितने मालवा में वे हैं श्री हरीश निगम। सहज व्यक्तित्व के धनी इस साधक ने दोहरे दायित्व का निर्वाह किया है। एक ओर इन्होंने अपने सृजन से मालवी को सँवारा है तो दूसरी ओर मालवी की एक जीवन पीढ़ी के प्रणेता होने का भी इन्हें श्रेय है। राष्ट्रीयता के संदर्भ में इनकी रचनाएँ विपुल हैं–हिमालय पर अशुभ की छाया पड़ते ही इनकी पीड़ा मुखर होती है– 'राती-राती बादली तू छोड़ी दे हिमाल्यो। हिमगिरि का हिमकण के हमने रस्ता से पाल्यो।' वीर पुरुष को अभिसार छोड़ रणभेरी की ओर उन्मुख होने की प्रेरणा इनकी नायिका देती है– रड़ियाली राता में सैजां छोड़ दे, रण भेरी से नातो सायबा जोड़ दे।' 'दिल्ली तो देखीली' मालव प्रेम एवं युद्ध सन्दर्भ में 'चलो रे चीन चलो···।' इनकी लोकप्रिय एवं प्रसिद्ध रचनाएँ है जिनमें मातृ-भूमि के प्रति प्रेम की भावनाएँ कूट-कूट कर भरी हैं इसी प्रकार शासन प्रेरित विषयों पर भी इनकी रचनाएँ पर्याप्त रूप में उपलब्ध होती हैं।

शिव उपाध्याय ने मालवी में 'योजना का आल्हा' नामक एक लम्बी रचना का प्रणयन किया है जिनमें आधुनिक भारत के निर्माण, योजना एवं प्रगति का विश्लेषण है। इसी रचना में कवि प्रश्न करता है राष्ट्र के शान्त उद्यान में किस विघ्न सन्तोषी ने बारूद का धुआं उठाया है····? वे उसे आगाह करते हैं कि आततायी भारत को पदाक्रांत करने का दुष्परिणाम तुम्हें भुगतना होगा। दृष्टव्य है—

'कोई भी हो हम कईर्‌या हाँ भारत पे जो आँख गड़ाय।
ऊके लगाई ठिकाने दांगा, दांगा ऊकी कबर छबाय ॥'

जगदीशचन्द्र भागीरथ शर्मा नामक मालवी कवि—'मेणत का बाजे मंजीरा' नामक रचना में श्रम का गीत इस प्रकार गाते हैं–

'हिलीमिली ने काम करीलो पालो सबसे प्रीत।
मेंणत का बाजे मंजीरा रे, सांचो गईलो श्रम को गीत॥'

मदन मोहन व्यास–'आओ ! आओ रे नवजवान' रचना में राष्ट्र के युवकों का आव्हान करते हैं–'यह है मरदां की पैचाण' अबे नी पाछा फिरां रे। आओ-आओ रे नव-जवान भारत माता पुकारे।' इस प्रकार सीधी सहज अभिव्यक्ति द्वारा कवि जन-जन को जगाने का प्रयास करता है।

सुल्तान मामा को 'मालवी कोकिल' का गौरव प्राप्त है वे अपने कांता सम्मत उपदेश द्वारा चाऊ को समझाते हैं, कि इस दिशा में मत बढ़ो पीछे पलट जाओ–"चाऊ सुनीलो चाऊ सुनीलो कि पाछा पलटी जाओ रे। अँई मत आजो रे, कि पाछा पलटी जाजो रे।" इसी प्रकार कवि श्रम की महिमा के प्रति भी ध्यान आकृष्ट करता है–

'बांधो रे ! बहती धारा, बाँधो रे बहती धारा।'

बाल कवि बैरागी एक ऐसा नाम है जिसने अपने कंठ माधुर्य एवं अनुभूति की तीव्रता के कारण दूर-दूर तक प्रसिद्धी अर्जित की है। इनकी यह विशेषता भी इस संदर्भ में उल्लेखनीय है कि जहां मालवी के अन्य कवियों की रचनाओं में मालवीयेतर भाषा बोलियों के शब्दों का प्रयोग मिलता हैं वहीं इनकी रचनाएँ पूर्णतया मालवीनिष्ठ ही है— दूसरा यह कि बैरागीजी प्रसिद्ध एवं लोक-प्रियता के व्यामोह में मठ बनाकर नहीं रह गये सतत सृजन के प्रति प्रतिबद्ध हैं···। बैरागीजी के 'धरती धूजेगा' गीत में चीनी आक्रमण के समय भारत के वीर नायक के पौरुष का उत्कृष्ट चित्र है, कवि शत्रु को ललकारते हुए घोषणा करता है—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'मत समझो भारत ने धरती बकर्‌या की या गांया की ।
चारा जूं काटूंगा फौज करोड़ सिपायां की ॥'

दूसरी ओर कवि जन-जन को जगाता है कि जननी तुम्हें पुकार रही हैं ठीक उत्तिष्ट जागृत प्राप्य....।' के रूप में । इसी प्रकार की भावनाएँ–'अइजावो मैदान में', 'आजादी जवान वईग्यी' रचनाओं में भी निहित है । दृष्टव्य है–'फिकर करो रे भय्या फिकर करो। थोड़ी-थोड़ी घर की फिकर करो' । 'आजादी जवान वईग्यी, घणी खेचातान वइग्यी ।'

कुंवर जगन्नाथ 'विश्व' को युद्ध सन्दर्भ ने विशेष रूप से अभिभूत किया है, अस्तु उनका एक काव्य संकलन–'जय जवान जय किसान' जनवरी ६६ में प्रकाशित हुआ है। उक्त संकलन में इस दृष्टि से कई रचनाएँ उल्लेखनीय हैं । 'कश्मीर हमारो प्राण हैं' शीर्षक रचना में 'स्वर्ग सरी को गाँव रूपालो, कश्मीर हमारो प्राण है । लहरावे यो अमर तिरंगो अन्तरिक्ष की शान है; जाग्यो हिन्दुस्तान है' तिरंगे को अन्तरिक्ष का गौरव बताकर कवि ने जिस उदात्त भावना को व्यक्त किया है वह स्तुत्य है । 'चलो रण में चलो रे, डूबी है माँ जगदम्बा 'आज बन्दूक उठानी रे' रचनाएँ वीरोचित भावों का संचार मानस में करने में सक्षम हैं ।

मालवी के गीति उद्यान को अभिनव गंध देने वाले पूनमचंदजी सोनी आततायी के भारत में रखे कदम-कदम का हिसाब मांगते से लगते हैं–"चेतई दो जइ बेरी ने, आगे मत बढ़जे रे । जितरा पग तू आगे आया, दूणा पाछे धरजे रे।" कवि की इस उदात्त भावना की पंक्तियां भी इस सन्दर्भ में उल्लेखनीय हैं–

'पगल्या, पूजो रे बलद्‌या का कंकू घोल घोल वेगी ।
पगल्या पूजो रे धरती का, कंकू घोल-घोल वेगी ॥'

सादगीपूर्ण शैली एवं भाषा का तीखापन भावों की कचोट लिये भावसार 'बा' एक हास्यव्यंग्य के कवि के रूप में सामने आते हैं । 'काम करां ।' रचना में कवि प्रेरित करता है–कर्म सतत कर्म की ओर । 'रण भेरी' शीर्षक 'बा' के युध्द-गीत में एक विलास निमग्न पति को शेरनी पत्नी की फटकार है जो तीखे व्यंग के साथ मुखर होती है कि व्यर्थ ही सासूजी के दूध की प्रशंसा हो रही है, ससुराजी ने जो हथियार टांग रखे हैं उन पर जंग लग रही है....आदि । यह पंक्तियां दृष्टव्य है—

—"कायर वी पड़े जो म्हारा काने भणकार, तो लाजे म्हारो कंकू ने चूड़ो लागे भार ।
म्हारा सूरा हो जुझार, बेरी ने खदेड़ो अपणी सीमा के पार ॥"

इन पंक्तियों को पढ़–सुनकर वीरोचित भावों का संचार मानस में हुए बिना नहीं रहता । भारतीय शौर्य की सार्थक अभिव्यक्ति 'बा' के इस गीत में मिलती है ।

मोहन सोनी मालवी की नई-पीढ़ी के एक सुमधुर गीतकार के रूप में जाने-जाते हैं । प्रेम एवं श्रृंगार के इस कवि को दोस्त लोग मजाक में मालवी का 'प्रसाद' भी कह देते हैं....। राष्ट्रीय भावनाओं की अभिव्यक्ति सोनी ने चीन एवं पाकिस्तान के आक्रमणों के समय दी है । 'योजना' का स्वागत भी कवि ने अपने एक गीत में किया है ।—"एक आंस में सनो, एक साँस सब बनो । सबकी साँस हमारी है अपना देश में जी ।" वीरोचित भावों का संचार सोनी की "शिवाजी" कविता में मिलता है भारतीय इतिहास की इस पुनीत घटना में हमारी सांस्कृतिक-राष्ट्रीय गरिमा का निर्वाह होता है–दृष्टव्य है शिवाजी का स्वरूप—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"जिनकी मुट्ठी में हवा बसी, आंधी कम्मर में कसी-कसी।
जिनसे हर ताकत राजी है अइर्‌या महाराज शिवाजी है।"

शिव चौरसिया के सम्बन्ध में मैंने "माटी की सोरम" संकलन की समीक्षा के समय भी लिखा था कि 'ये मालवी में विचार एवं चिन्तन-प्रधान यथार्थ-दृष्टि के कवि हैं।' अस्तु इस संदर्भ में भी यही कहना है। ग्राम्य-संस्कृति की सूक्ष्म-पकड़ एवं चित्त वृत्तियों का सहज विश्लेषण इनकी रचनाओं में मिलता है। "रतनारों उजियार करो" शीर्षक रचना में कवि का मानस राष्ट्र की चिन्ता में तल्लीन लगता है–"विपद जाल में देस घिरइर्‌यो। चन्दरमा के राहू खइर्‌यो। वण कान्हा थे चक्र सम्हालो, अणी घड़ी जई वार करो। रतनारो उजियार करो॥" "फौलादी इन्सान" एवं "गाम" रचनाओं में भी राष्ट्रीय भावनाओं का कवि ने उत्तम संचार किया–"गाम, रीढ़ की हड्डी बनके, थामे सारो देश।

ई, काठा तो देस मर्‌यो नी खईग्यो कितरी ठेस॥"

मालवी के प्रति यदि चौरसिया एवं मोहन सोनी पूर्ण प्रतिबद्ध रहते हैं तो इन कवियों से आशाएँ बहुत हैं....।

मालवी के इन प्रमुख कवियों के अतिरिक्त भी कई अन्य कविगण मालवी की काव्य-साधना में सतत जागरूक एवं सक्रिय हैं इस लेख का आधार प्रकाशित सामग्री रहा है अन्यथा मौखिक-परम्परा में श्री नरेन्द्रसिंह तोमर के राष्ट्रीय गीतों एवं राजेन्द्र आर्य की 'मीरा' रचना को इस सन्दर्भ में कदापि विस्मृत नहीं किया जा सकता...।

मालवी-काव्य में राष्ट्रीय-चेतना का जो प्रखर स्वरूप हमें देखने को मिलता है वह चाहे समसामयिक सन्दर्भों की देन हो चाहे श्रम, योजना, विकास, निर्माण आदि शासन-नीति-प्रेरित विषयों के कारण हो, सृजन की दृष्टि से वह प्रशंसनीय है....स्वागत योग्य है...। आज व्यक्ति अपने स्वयं के जीवन के प्रति अपने परिवेश के प्रति जहाँ प्रतिबद्ध नहीं रह पाता वहीं मालवी के यह कवि गण राष्ट्र एवं राष्ट्र की अन्यान्य समस्याओं के प्रति प्रतिबद्ध रहते हुए काव्य का प्रणयन करते हैं तो उसका स्वागत एवं मूल्यांकन करना भी हमारा कर्तव्य हो जाता है। इनकी ये भावनाएँ और भी उदात्त, विराट, व्यापक आयामों में अभिव्यक्त हो यही कामना है।

—हरसिद्धी मार्ग; उज्जैन (म. प्र.)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मालव कवि और पार्वती

मालवे में बीती
मेरे कैशोर्य की वे सपनीली
वैशाख-सन्ध्याएँ :
गाँव बाहर के वनाँगन में
म्हेंदी-फूलों महकती कुइया पर
पानी भर रही कोई अकेली पनिहारिन :
साँझ की गहन नीरवता में
कुइया की गहराई में
भरने को छटपटाती
उसकी गागर के 'डुब-डुब' निःस्वन में,
किसकी खोज में डुबकी खा रहा
मेरा व्याकुल किशोर मन....!

मालवे के उस दूरान्तगामी मैदान के
निस्तब्ध छोर पर,
उस अचीन्हें वनान्त की
साँझिया सुवर्णिमा में
कूक रही कोयल :
किस अनजन्मी साँवली अनामा की
विदग्ध कजरारी मोहिनी से
पागल हो उठा मेरा किशोर मन....!
....मालवे की उन्मादक चाँदनी रातों में
किसी छत पर बिछी
अपनी एकाकिनी किशोर शैया में
जब मैं गहरे-गहरे बेला-फूलों के गजरे में
गाल ढाल कर सो जाता,
तो उसकी जन्मान्तरगामी विरहाकुल गन्ध में
किस अनागता की
मुक्त केशाविल-लैला-सूरत
तैर-तैर आती थी....!

० ० ०

और कालिदास के मालव के
कवि-किशोर के हृदय की वह व्यथाभरी पुकार,
पृथ्वी की अब तक अनथाही,
गहराइयों को बींधती हुई,
जाने कितने लोकों और कालों की
अनगिन आत्माओं की
सम्वेदन-घाटियों को
पार करती हुई
हिमालय के चूड़ा-मर्मों में जा कर गूँज उठी :
....और हिमानी की पर्त-पर्त को तराशती हुई
'कुमार-सम्भव' की श्लोक-राशि
रूपायमान होने लगी...

मालव लाड़ला

वीरेन्द्रकुमार जैन

और लो....
हिमालय के हार्द में से उत्कीर्ण होकर
तुम उतर आयी ओ मेरी पार्वती,
मेरे गीतों के अक्षर-महलों में–
हिमालय से बहुत दूर....
मालवे से बहुत दूर....
इस समुद्र के श्रीफल-किनारे पर....!
....और एक वासन्ती साँझ औचक ही
प्यार से मचलकर,
वह बेला-फूलों का गजरा
तुमने बाँध दिया मेरी कलाई पर....!
....और जाने कब, जाने कब....
तुम्हारी खोज में विकल–
मेरे विगत कैशोर्य की वे
म्हेंदी-महकती सन्ध्यायें,
पारान्तर की गहन नीरवता में
कूकती वे कोयलें,
बेला-फूली चाँदनी रातों की
वे असह्य तनहाइयाँ–
तुम्हारे सर्वांग में साकार होकर
मेरे आलिंगन में बँध आयीं....!
....और लो, देश-कालान्तर्गामी
इस महा समुद्र के
उत्ताल तरंगित जंघा तटों में
जाने कब
हिमालय की वह अन्तिम चूड़ा
चुपचाप विसर्जित हो गयी....!

गोविन्द निवास, सरोजिनी रोड,
विले पारले (पश्चिम), बम्बई–५६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मालवी मेला

अनन्तकुमार पाषाण

बीत गये नीले-नीले पच्चीस वर्ष
सूर्यास्तों के रेणु पथों पर,
उड़ते मेघों के पहियों पर
चले गये, सुनसान विगत के अन्धकार में,
लीन हो गये;
किन्तु एक कर्पूर-शिखा सी
उज्ज्वल स्मृति काँप रही है—
रेसीडेन्सी में आमों के पेड़,
स्याह जब पड़ जाते थे,
रेसीडेन्सी गार्डन में बाँसों के
पुल से धीरे-धीरे
दिन लजवन्ती के पौधों को,
चूम नदी के टापू पर चढ़
जब उस पार उतर जाता था,
जहाँ नौलखे के जंगल में,
कब्रिस्तान क्रिश्चनों का था,
सड़क पास से जिसके होकर
जाती थी होल्कर कॉलिज को,
और चीर कर बयावान को
नदी बह रही थी निस्वर हो,
बन्दर औ' लंगूर छुपे रहते थे
पेड़ों की डालों में,
नौ-दस वर्षों का एक लड़का
लहरों पर पत्थर तैराकर,
कम्पित लहरों पर लहराते
कमलों को देखा करता था,
हनुमानजी के मन्दिर में
शुरू आरती हो जाती थी,
और सामने एक पीर की दरगा भी थी,
सब कुछ था ऐसे जैसे यह सदा रहेगा,
यह इन्दौर नहीं बदलेगा,
किन्तु नदी के इस प्रवाह को रोक सकेगा
कौन कूल का आदिमवासी ?
सहसा रात उतर आती थी !
सहसा रात बिखर जाती थी !
रात दस बजे पीतल की पीली थाली में
दीप सँजोये सौ आटे के घी से भरकर
मेरी माँ मन्दिर जाती थी,
पीछे-पीछे पहन खड़ाऊँ छोटी,
माँ का आँचल पकड़े
मैं जाता था,
दरगा के बरगद के ऊपर
कोई विहग बोल उठता था,
चाँद लगाकर बाजी मेघों से
नभ में भागा करता था,
जलते थे सौ दीप, पुजारी दाढ़ीवाला
तोड़ नारियल,
आधा तो खुद रख लेता था,
आधा हमको दे देता था ।
इसी तरह दिन उड़ जाते थे.....
दोपहरी को दीवारों पर,
खीच लकीरें 'विकेट' बनाकर
खेला करता था मैं क्रीकेट,
ताँगे जब आते-जाते थे,
खटिकों की बदकों से गुन्जित
सन्ध्या दबे पाँव तब आकर
द्वार बन्द करने लगती थी,
एक दूधवाला आता था,
और दूध पीकर सब बच्चे
सो जाते थे.....
और सड़क वह चक्कर खाती
अमलतास के पीले फूलों की छाया में
टेलिग्राफ ऑफिस से होकर,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सेन्ट्रल जेल के बहुत निकट से
रेसीडेन्सी क्लब जाती थी,
गोरे जहाँ नाच करते थे,
एक 'बोट हाऊस' भी तो था,
मोर जहाँ नाचा करते थे,
महुवे के फूलों की मादक सुरभि
हवा के कन्धों पर चढ़
सहसा श्वास पकड़ लेती थी,
वहाँ जहाँ 'स्क्वॉश'-कोर्ट थी,
एम. सी. सी. का मैच हुआ था,
सेन्ट्रल इंडिया लॉन टेनिस का
टूर्नामेन्ट हुआ करता था।
और रात को निर्धन जनता
कवि-सम्मेलन-जैसी एक सभा रचती थी
जिसे 'रामदंगल' कहते हैं।
मिल के श्रमजीवी कवि जिसमें
एक-दूसरे का मुकाबला
डटकर करते थे प्रतिभा से
आशु-काव्य के चमत्कार के,
नूतन स्वर निर्मित होते थे—
कहा किसी ने—
'टूर्नामेन्ट, टूर्नामेन्ट, टूर्नामेन्ट रे !
हिन्दुस्तां का इंग्लिस्तां से टूर्नामेन्ट रे !"
पूरी करी समस्या फौरन—
"उसमें शामिल हुए प्रोफेसर,
कॉलेज-स्टूडेन्ट रे,
टूर्नामेन्ट रे !"
कहा किसी ने गीत बनाकर—
"बापू, बुढ्ढे का तोड़ो सिगार !"
बुढ्ढा माने मोटा चर्चिल,
इंग्लिस्ताँ का प्राइम मिनिस्टर !
तभी किसी ने रामायण का,
अभिनव रूप निखार दिया था—
"श्री राम ने सीता स्वयंवर में,
शिवचाप के टुकड़े कर डाले !"
तभी दूसरा बोल उठा था—
"किसने था किसको शाप दिया,
औ वह था किसको ले डूबा !
जयद्रथ के सिर ने गोदी में,
गिर बाप के टुकड़े कर डाले !"
मिल के श्रमजीवी वह सब कवि,
मेरे शिशु-कवि के शिक्षक थे—
मेरा स्वर तलवार बाँध कर,
खड़ा हुआ है,
गीत लहू के नये,
वेग-सा उमड़ चला है,
जगनिक और चन्द दरवाजे,
पर आ मेरा काव्य सुनेंगे !
कालिदास का सुप्त मालवा
उज्जयिनी की लुप्त हर्म्य-पाँतों ले होकर
सुप्त अलिन्दों पर दीपावली जला रहा है,
तोरण और पताका,
मालवा-महत प्यार से हिला रहा है !
खण्डवा के स्टेशन से जुड़
हलवाई था—लाल-लाल आलू के रस के साथ
पूरियाँ जो देता था,
माखनलाल चतुर्वेदी और
'आगामी कल' के सम्पादक
श्री प्रभाग शर्मा का खण्डवा
खण्डवा की उस बड़ी धर्मशाला में मैंने
कितनी बार रात काटी है।
रेलों की आवाज बड़ी मीठी लगती थी,
कैसी गाढ़ घनिष्ट हवा थी,
कितना कसा-कसा-सा था सब।
बीत गये पच्चीस वर्ष पर
उज्ज्वल धवल कर्पूर-शिखा-सी एक—
एक अनवरत याद बची है।

शाम हो रही है,
अम्बर में चक्कर काट रहा है कौव्वा,
महाकाल के मन्दिर में
आरती शुरू हो चुकी कभी की,
नीचे सीढ़ी के चरणों में
शिप्रा का जल अंजलि में भर
मेरा कालिदास बैठ कर उकड़ूं
क्या क्या सोच रहा है—
उज्जयिनी के कई विगत हैं,
बीच पथों पर इतिहासों के रथ हैं, घोड़े
खोल दिये हैं महाकाल ने,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शिप्रा में उनको नहलाता
राजभवन-वृद्ध सारथी,
पीछे मुड़ कर हाथ हिला कर
मेरे कवि को बुला रहा है,
और वहीं मन्दिर के बाहर एक भिखारी
अपनी छोटी-सी लड़की को सुला रहा है।
शबे मालवा। रात बड़ी मोहक होती थी।
इसी रात की मोहकता को
हिन्दी की वह कला-वाहिनी
'रश्मि-नीरजा' की कवयित्री पकड़ सकी है।
वह चलचित्र-अतीत बन गये,
लेकिन अब भी सायकिल की पाँतें दिखती हैं,
और युवा कवि पैडिल तेज़ मार लेते हैं।
कहीं कहीं वेस्पा और लम्बरेटों की
धका पेल अब होती होगी।
मालव भूमि सुधादात्रि है।
तुम्हें याद होगा जरूर वह
मेला 'देवगुराड़्या' गिरि का,
जिसमें मालव की मोहक रमणियाँ
भाल पर तिलक लगाकर
'बोरला'—सज्जित पूजा करने को आती थीं—
और 'जवारे' के दिन भी थे
जब छोटी-छोटी कुमारियाँ
जौ के कोमल हरित अंकुरों को
गमलों में भर हर घर के
द्वार-द्वार जा कर गाती थीं।
सरसों के खेतों से चलकर बड़ी सुबह मैं
यहां खड़ा हूँ
जहाँ तराने जाने वाली बस रुकती है—
कहाँ गया मेरा मकान ? 'नरेन्द्र-भवन' वह ?
आधी रात रेंकने वाले गधे कहाँ हैं ?
पनचक्की कुप-कुप चलती थी,
वहाँ एक रैशन-आफिस है !

बदल गया, सब बदल गया है—
अभी याद है फूस बिछी बैलों की गाड़ी
जिसमें सोये-सोये सेंधवा जा कर मैंने
दूध पिया था !
भीलों के वह काले-काले भोले चेहरे !
मेरे शैशव का परिचित वह खरगोन कहाँ है ?
नीमाड़ी लोरी की मुझको
एक पंक्ति ही सिर्फ याद है—
"उड़री म्हारी सगुन नी चिड़िया !
अरे सगुन की चिड़िया तरु के ऊपर बैठी
रुद्र नीर 'पातल पानी' को देख रही है !
पीपलिया पाले के जल से शिव-मन्दिर में
एक बेल का पत्र चढ़ा कर कोई गया है।
औ बिलावली-टैंक खड़ा है—आहत लहरें
बार-बार पत्थर पर अपना भाल पटककर
चीख रहीं हैं—
बीत गया सब ! विगत हो गया।
अब न कहीं केशू के पत्तों में पेड़े मिलते
जबकि पालिया पर आ रेल खड़ी होती है,
सभी जगह आधुनिक यंत्रयुग
मेरी स्लेट पोंछ कर उस पर
इश्तिहार चिपकाने को बेचैन खड़ा है !
चला गया सब ! किन्तु एक कर्पूर-शिखा-सी
मालव-भूमि कल्पना के सूने मन्दिर में
अभी दीप्त है,
महुवे के फूलों का सौरभ
अब भी भिगा-भिगा जाता है जब निशीथ को,
तब कोई नारी-स्वर मेरे भीतर से उठ
कह उठता है—
उड़ री म्हारी सगुन नी चिड़िया....
उड़ जा, उड़ जा, औ लौट आ
तेरी मालव-भूमि तुझी में जाग रही है !

—सिद्धार्थ कॉलेज, बम्बई

• •

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

माटी की गन्ध

म्हारा मालवा की माटी !

म्हारा मालवा की सांवली-सी माटी, रूपाळी
थारा कन-कन पे मीठा-सा गीत वारूँ
थारा तन-मन पे हिरदा की प्रीत वारूँ !

चूनर में साजे है टेसू का फूल लाल
धूल लागे होली की उड़ती गुलाल
खेतां में फसलां की अइगी बरात
सखी, प्यारी है मालवा की चाँदनी-सी रात
म्हारा सावन की बादली-सी माटी, निराली
थारा पग-पग पे कोयल का गीत वारूँ
थारा तन-मन पे हिरदा की प्रीत वारूँ !

तोरन बन्ध्या है बाजू बन्द-सा सखी
थारी माँगा में किरना ने रोली भरी
थारी बीछा की छमछम या लागे रसीली
सखी, माथा पे बदली ने गगरी धरी
म्हारी दुल्हन-सी मदमाती माटी, लजीली
थारा जोबन पे दुनिया की रीत वारूँ
थारा तन-मन पे हिरदा की प्रीत वारूँ !

थारा पगल्या पखारे हे शिप्रा की धार
थारा कन-कन में बिखर्‌या हे मोती हजार
गोकुल का साँवला भी आया था द्वार
सखी, मेघदूत आया था गावा मल्हार
म्हारा विक्रम की लाड़ली-सी माटी, सुहानी
थारी डग-डग पे जन-जन की जीत वारूँ
थारा तन-मन पे हिरदा की प्रीत वारूँ !

गोदी में भोज राजा खेल्या सखी
थारी झोली में झूल्या है कवि कालिदास
थारा मांडू की रूपमती रानी दीवानी
सखी, गलियाँ में घूम्या है पिंगला का नाथ
म्हारा आंगन की मतवाली माटी, सजीली
थारा घर-घर में मंगल का दीप वारूँ
थारा तन-तन पे हिरदा की प्रीत वारूँ !

सौ. पुखराज पाण्डेय
आगर (मालवा)

एकलव्य हूं !

सोगन खइने कइर्‌यो हूँ,
भणने की प्रतिभा का दन में
'कपड़ा नी था रोटी नी थी'
अरे साब ! पट्टी ने पेम तक छोटी नी थी।
थो गरीब, पण बहोत निपुण,
बिन किताब बोली देतो थो, आखी कविता;
पर मास्टर सौ-सौ सवाल करने के देता।
पइसा वाला मूँजी दादा के ईर्ष्या थी,
भणीनी जावे, नी तो छोरो गजब करेगा।
तीन आना फीस का नी दिया;
तेरा आना 'ताश' का दइद्‌या,
और दादा ने म्हारे ताश खेलते सिखायो।
पहर-पहर तक करी मजाकाँ,
पाँच मिनिट भी कदी, गणित हल नी करवाया
फिर भी मैं कुछ लग्यो सीखणे,
तो 'बाबू भय्या' का मोटा कुँवर साब ने-
मास्टर से आमनो कर्यो
'सर, आप मुझे कुछ भी नहीं बताते--
इस बम्मन के छोरे को सब सिखा रहे हैं।'
तो उनने भी जात को बामण कइ ने
इस्कालर्शिप नी दी,
अब बोलो हरिजन हुइ जउँ कईं ?
फिरभी सीखीग्यो कुछ बिद्या,
जो कर देती चमत्कार कुछ
तो ऊका प्रयोग में आड़े अइग्या मूरख।
'जो पोथी में नहीं लिखा वह क्यों कहते हो?'
और अबे कुछ करने की है बड़ी तमन्ना,
तो अब हाथ-पाँव निर्बल है।
कितरी बखत अँगूठा काट्या
चाँदी की जूती खाने वाला समाज ने।
'मैं एकलव्य हूँ।'

-मदनमोहन व्यास
देवास (म. प्र.)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"जीवन फूल चढ़ई डालो"

खेत खला मोती उफणावे, और समुन्दर मथ डालो।
मालव की माटी में अपणा, जीवन फूल चढ़ई डालो॥

अम्बर में चमक्या यूं तारा ज्यों फूलां की डाली,
गगण गला में चन्दो लागे, चमके ज्यूं खुंगाली,
चन्दन जैसी ठण्डी रातां दूध सरीखी चांदनिया,
मखमल जैसी नरम दूब है धरती की रोमाली;
माखण की टिकली सो चन्दो पूनम की राता वालो।

चारण जैसा पंछी चहके करे भोर की अगवानी,
हवा परोडे गावे ऐसी जैसी मीरा दीवाणी,
पूरब में केसर बिखरी री ज्यों जोवण की हो लाली,
फूल गुलाबी ऊग्यो सूरज हरषायो जग को माली;
सोणा री थाली सो सूरज इमे प्यार को रस ढालो।

कमल पांखड़ी का सांते सब बालूड़ा आख्यां खोले,
किलकारी से धरतीमाँ की गोद जसोदा सी डोले,
घट्टी की आवाज प्रभाती गई के अब तो उबरई री,
माँ की ममता पाणे सारु बच्चा मण का स्वर खोले;
हल बक्खर बलराम सरीखा लईके चाल्यो मतवालो।

दूर लाल चुनड़ी में लिपटी अयरी राधा मतवाली,
सूरज सा मुखड़ा के ढाँके जाणे बदली रूपाली,
यौवन फूंके शंख दिशा में अंग-अंग टेसू फूल्या,
आँख्यां है डल झील सरीखी हाथ चिनारां की डाली;
चटनी रोटी खइके हरख्यो गंगा जल पीणे वालो।

बाट में अयरी कामधेनु ज्यों धूल अबीर उड़ाती रे,
बछड़ा होण की आशा का ई सपणा नवा जगाती रे,
अलगूंजा की स्वर लहरी अब गूंजी री है कांकड़ पे,
संझा राणी जैसे अपणी उलझी लट सुलझाती रे;
घर घरमें लो दीप जलीग्या गांवमें छइग्यो उजियालो।

बन्सीवट का नीचे ज्ञानी पोथी मन की खोलिर्‌या,
पंचायत का सत्य न्याव के अपणा हिरदे तोलीर्‌या,
एक चिलम से चौपाला में परिचय देवे एकाको;
परगति की गंगा की धारा गाम-गाम में मोड़ीर्‌या।

चाँदणीया धोवी री मुखड़ो,नभ को दिखतो थो कालो,
मालव की माटी में अपणा, जीवन फूल चढ़ई डालो।

मोहन जोशी 'आचमन'
तराना (म. प्र.)

बरस्यो हे मन हरसावे

दूर देस से आयो बादळ,
बरस्यो हे मन हरसावे।
हरी-भरी धरती हुइगी,
ने जीव जगत मंगल गावे।
आसमान का आड़ी देखो,
बजे नगारा घनन् घनन्।
चमक दमक से बिजली नाचे,
कड़ड़-कड़ड़ धुन झनन्-झनन्।
गाजे बाजे अइ रे सवारी,
पांव पखावण की तैयारी।
हुई उरावण हीरा मोती,
जद इन्दरराजा आवे।
हरी-भरी धरती.....

नाचे मोर मोरनी हरके,
सारस जोड़ो, डोली रियो।
पीयू पीयू 'पण' नी पीणे हे,
चोंच बन्द कां खोली रियो।
हीजे पपइय्यण कोयल गावे,
चुगे चिरकली न्हावण जावे।
बगलो बैठो पाणी किनारे,
कब को ध्यान लगावे।
हरी-भरी धरती.....

इन्दरराज ने धरती बांट्यो,
बांटी ने परवार्‌या।
पाणी का बँटवारा खातर,
मनक बण्यां तरवार्‌या।
पाणी बई ने जई रियो हे,
बई ने ऊ कंई कई रियो हे।
'अभी बखत हे पाळ बांधळो,
फिर सागर में जावे।
हरी-भरी धरती.....

कितरो पाणी हे अपणा में,
जांची परखीर्‌यो करतार।
पण घणी तीस ने पाणी थोड़ो,
तीस्या की बढ़ती भरमार।
देर होय अन्धेर कदी नी,
होय अबोलो बैर कदी नी।
अन् जळ घन भण्डारो बादल,
धरती खे हई जावे।
हरी-भरी धरती.....

आनन्दराव दुबे
इन्दौर (म. प्र.)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भाटो फेंकी माथो मांड्यो

१

पटेल बा से पटवारीजी ऐसो केवा लागा,
छोरा का वारा मे ओलम्बो देवा लागा।
तमारो छोटो छोरो चालाक, बदमाश,
ने बेईमान है—पण हाँ,
सब तरे की धोखा बाजी पे,
ऊँको अच्छो ध्यान है।
पटेल बोल्या,–हूँ तो ऊँका मारी कायो हुइग्यो,
राते भी घणो मार्‌यो भूखोज सुइग्यो।
विचार है, दशमी भणई दूँगा,
पटवारी स्कूल भरती करई दूँगा।
ई सब अवगुण, गुण में बदली जायगा,
आते साल ऊ छोरो, पटवारी बणी जायगा।

२

लकड़ी का पिंजरा में चिड़िया बैठई,
चौराया पे जोतसी ने दुकान लगई।
भीड़ भाड़ देखी ने एक डोकरी रुकी,
लिफाफो उठायो, माय चिट्ठी दिखी।
अस्सी बरस की डोकरी ने बिगर भणी,
बंचावे भी किसे भीड़ भी घणीं।
एक छोरो बोल्यो ला माँ हूँ बाँची दूँगा,
जैसो लिख्यो वेगा वैसोज कूँगा।
लिख्यो थो, प्रश्न पूछने वाले—
'तुम्हारी अल्हड़ता और सुन्दरता,
को देखते ही आदमी मगन हो जायगा,
आते महीने में तुम्हारा लगन हो जायगा।'

टीकमजी भावसार 'बा'

कंठाल, उज्जैन (म. प्र.)

पद्मा को पाणी

लाल खून से लाल वइगयो पद्मा को पाणी,
मन में दुनियां का हैरानी,
पर भारत ये सब ठाणी,
मानवता की मोत वई गई लो सरे आमने,
चिंगार्‌या से घघकी गई लो धरती धाणी।

जीती गयो जमीन भलई याह्‌या खान,
पर हारीग्यो वू बंगला की मीठी मुस्कान,
हारी ने भी जितीग्यो है 'बंगला देश',
न्योछावर करदी धरती पे प्यारी जान।

कत्ल काँड ने लूट-पाट से धरती काँपी,
दरद-द्वेष ने दुखवा देखी दिशा सब हाँपी,
फेर भी क्यूं मौन वणी या दुनियां सारी,
कैसी दुनियां, कैसो दानव, कैसो पापी।

'स्वरण बाँगला' रक्त सन्यो हुंकारीर्‌यो हैं,
मन का बल से शत्रूआने मारीर्‌यो है,
क्राँति को बजी गयो बिगुल हर कोणा से,
'उठ जागो 'हत्यारा सम्मुख' पुकारीर्‌यो है।

—विक्रम विक्रान्त

मुलथान (धार)

म्हारा देश में

सुवे केवड़ा जैसी है तो चम्पा जैसी रात रे।
सावन अइके कर जावे है अमरत की बरसात-
म्हारा देस में!
हां के म्हारा देस में भगवान है किरसाणी भेस में
म्हारा देस में!
खरो कमावे खोटो खावे फिर भी भोला-भोलारे
अपना परसीना से जिणने धोया सबका छाला रे
इन जोगी का आगे फीकी, सिंगत की जम्मात
म्हारा देश में!
पात-पात हरियाला रेवे बलिदानी का बल से रे
काँदो रोटी रोज खिलावे, उजला-उजला हाथ
म्हारा देश में!
बिसनू उफने धान खळा में लछमी भर-भर देवे रे
हवा चले तो दांता हुन में पल्लो दाबी लेवे रे।
कदी-कदी हँस के कई देवे घणी बेसरम जात।
म्हारा देश में!
खुद के खातिर जीनो जग में बोलो केसो जीनो रे
सांचो जीनों उनको है के जो टपकाय पसीनो रे
छाती पे गोली भी झेले ऐसी नर की जात–
म्हारा देश में!

मोहन सोनी

उज्जैन (म. प्र.)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मालव महिमा

मालव री महिमा, कई गाऊँ मैं दुनियाँरा आगे
मालव री महिमा लहरावे हर बगियारा डेरे,
मालव री महिमा ने गावे पंछी साँज-सवेरे।
आँख मसलती सूरज-किरणाँ जब पूरब में झांके
ऐसी दमके धूल कि सोनो फीको-फीको लागे।
मालव री महिमा कई गाऊँ में दुनियाँ रा आगे
अठे प्रेम री पूँजी रा रखवारा धोरे-धोरे,
विष्णु बोवे सींचे जीवन लछमी हरक बटोरे।
'कल-कल' करे किलोल,
नरबदा, क्षिप्रा, चम्बल राणी—
कवियाँ री कल्पना जणाँ ती,
रस री भिक्षा मांगे।
मालवरी महिमा कई गाऊ मैं दुनियाँ रा आगे
रातां बिखरे पत्ता-पत्ता पर मोती री लड़ियाँ,
झाड़ाँ ती हँसती मुसकाती गले मिले बेलड़ियाँ
चन्दन जैसो महके घर-घर
कालिदास रो जस है—
दुशमन करे घमण्ड वणीने
विक्रम उलटो टाँगे।
मालवरी महिमा कई गाऊं में दुनियांरा आगे।
अखातीज करमाण जगाड़े,
राखी हृदय मिलावे,
नित्य नया त्योहार अठे है,
नया-नया सुख लावे।
याद करावे रावण रो वध,
जय रो पर्व दशेरो
दीवाली रा दीवा देखी दूर दलिद्दर भागे।
मालव री महिमा कई गाऊं,
मैं दुनियां रा आगे।

नटवरलाल 'स्नेही'
नागदा (म. प्र.)

पूरब में सूरज उग्यो

पूरब में सूरज उग्यो रे अबे वेगा-वेगा चालो!
आलस की उठो अबे नींद भगइदो
साहस की उठो अबे नींद भरइदो
गई रात, रात गई—
तारो डूब्यो रे अबे वेगा-वेगा चालो!
पीपल का पान सी आई परबाती
कमलणी का ब्याव सारु जाग्या रे बराती
विन्ध्या का माथा पे—
चन्दन उग्यो रे अबे वेगा-वेगा चालो
धूम मची बैल गाय घण्टी टंकार की
झिझिमिझण २ झाँझर झनकार की
धूल उड़ी धूप में—
के कंकू उड़्यो रे, अबे वेगा-वेगा चालो!
गाम-गाम गूंजी हे कान्हा की बासुरी
लकड़ी लो हाथा में कांधा पे कामरी
धरती की छाती को—
धीरज डग्योरे अबे वेगा-वेगा चालो

नरहरि पटेल
इन्दौर

कदी कदी ऐसी बी हुई जाय है।

कदी कदी एसी बी हुई जाय है।
पसे पाणी ने पंगत का भोजन,
ज्यादे पिवाय है ने खवाय है।
अपणो लेणो याद रे,
पण परायो को हे जो भुलाय है।
कदी कम न खायो,
ने गम नी खायो।
तो चलती चटोरी जीब का खातर,
हकनाक मे हकीम ने हाकम का
घर भराय है। कदी कदी.....
पकड़ लो सांप को मूंडो,
मूंडे जैर हे-पण काट्ये नी कटाय है।
धणी तू मूंछ का मनवया,
बचई ले पूंछ बिच्छू की।
अब डंके नी डकाय है,
पण हुईगी अदावत आदमी से
तो रुंवें रुवे डंक,
ने काया जैर को बातण हुई जाय है।
कदी कदी.....

आनन्दराव दुबे
इन्दौर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक मालवी व्यंग्य कविता : हरीश निगम

टूटी ताकड़ी से ईमान खे तोलां
तो किस्तर तोलां ?
दो जना लड़ीर्‌या है, इनका बीच में
बोलां तो किस्तर बोलां ?

(१)

भारत की राजधानी से भई
मुर्गा दइर्‌या है बाँग ।
जगे जगे हुइर्‌या आन्दोलन
और बढ़ी मांग पर मांग
सोला हाथ की साड़ी पेरी
फिर भी न ढँकी जांग
और जो दुखी र्‌यो थो
वाँ पड़ी जोर की डांग
सत्ता की कोठड़ी में सब बुरइग्या है,
न्याय को कमाड़ खोलां,
तो किस्तर खोलां,
टूटी ताकड़ी से ईमान खे
तोलां, तो किस्तर तोलां ?

(२)

लाया था भेंस ढूंढी के
वा निकलीगी बांगड़ पाड़ी
अइं देखो तो अरब सागर,
और वंइ बंगाल की खाड़ी
तो चोराया पे फसीगी है,
समाजवाद की गाड़ी ।
मोटा मोटा काजी मुल्ला
सब सब बुझइर्‌या अपनी डाढ़ी ।
जूड़ा में बन्ध्या दो बैल
इनके खोलां तो किस्तर खोलां ?
ईमान खे तोलां तो किस्तर तोलां ?

(३)

घर नवो बणायो थो पर,
छाणी रईगी उपे मगरी ।
बड़ो शहर बसायो थो,
वां रइगी कोरी नगरी ।
विकास की योजना बनी,
वी रइगी अध कचरी,
जाँ अटूट पानी भर्‌यो थो,
वाँ देखइरी कोरी बजरी ।
भ्रष्टाचार की बांदरी लबूरी री है,
घर आंगन में डोलां तो किस्तर डोलां ?
ईमान खे तोलां तो किस्तर तोलां ?

(४)

पाड़-पड़ोसी भला र्‌ख्या था,
वी सब बईमान निकलीग्या ।
जिनखे मालिक समझा था,
वी पासवान निकलीग्या ।
जिनखे घर की कूंची दइदी,
वी कोरा मिजवान निकलीग्या ।
जिनके सगा भई समझा था,
वी याह्याखान निकलीग्या ।
चक्र व्ह्यू में मुजीब घिरीग्यो है,
युद्ध का बन्धन खोलां तो किस्तर खोला
ईमान से तोलां तो किस्तर तोला ?

शिप्रा आश्रम, माधवनगर, उज्जैन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चटक म्हारा चम्पा !

चटक म्हारा चम्पा,
आई रे ऋतु थारी,
आई रे ऋतु थारी,
अई-अई रे ऋतु थारी,
चटक म्हारा चम्पा,
आई रे ऋतु थारी !
फगुनईगी रे क्यारी-क्यारी,
जुवनईगी कलियाँ कचनारी
रँगरस रूप का मधु मेरा में
तरसी-तरसी चाँदणी ने पालकी उतारी
चटक म्हारा चँपला,
आई रे ऋतु थारी....

आई रे ऋतु थारी,

शरद पूनम को चन्दो चटक्यो मझरी माझल रात
धरती पर बखरीगी गगन की छल्ला भरी परात
किरण-किशोर्याँ ताना मारे कर कर लम्बा हाथ
सोवे कमल जगावे कमली
रोई रोई रात काटे चकवी बिचारी
चटक म्हारा चँपला आई रे ऋतु थारी.....

परिमल न्ही द्यो परमेसर ने यो भी सुख कईं कम है
जण में बिरहा को सुख कोईनी व्हा भी कईं पूनम है
पीड़ा नाचण के बिन सूनी जीवन की जाजम है
पाँखड़ियाँ की जाजम वाथर
तो आखी ऊमर नाचेगा छबीली छनगारी
चटक म्हारा चंपा आई रे ऋतु थारी....

तरसी तितर्याँ न्हीं भींजे तो मनड़ों मत कर छोटो
भूखा भँवरा न्हीं रीझे तो कईं माने तू खोटो
भूखा की भरमार भरी हैं तरस्या को कई टोटो
बन्ध तुड़ई ने गन्ध उड़ई दे
तो लप लप करती लपकेगा नागणियाँ नखरारी
चटक म्हारा चँपला आई रे ऋतु थारी....

थारी सोना रूपाँ की पाँखड़ियाँ नख लागे कुम्हलाय
मीठी गन्ध उड़े तो दुनियाँ अघ वेन्डी वेई जाय
यूँ मत सोच जनम यो थारो कई अरथे न्ही आय
कोई बिरहण तो चूंटेगा ही
साजनियाँ की सेजाँ पे पूजेगा कामणगारी
चटक म्हारा चँपला आई रे ऋतु थारी....

मुरझाणों तो है ही रे वेन्डा
मुसकई ने मुरझाव
दूध पताशा का ढोल दुरीग्या,
कईं तो तरस बुझाव
रंग रस रूप का मधु मेरा में,
मन चावे उई गाव
थारी छायाँ मैं छाने छाने
छलिया ने छबीली,
देईरी लौंग सुपारी
चटक म्हारा चँपला,
आई रे ऋतु थारी.....

• •

आई रे ऋतु थारी !!

–बाल कवि बैरागी
पुतलीघर बंगला
भोपाल (म. प्र.)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इक तारा पर गइर्‌यो देखो, एक मतवाळो रे !
गयो इँदारो गाँव से अबे आयो उजाळो रे !!

हिळी मिळी ने सभा बणइली सहकारी
कम्बळ को उद्योग चलायो हे भारी
जो गरीब था, श्रम करने वाळा उनने
करी गरीबी से लड़ने की तइयारी
ब्याज खोरना को भइ निकळ्यो, अबे दिवाळो रे
गयो इँदारो गाँव से !

ताळ, तळइ, नाळा पर बंधा बँधवाया
मिळी तकाबी कुवा खेत पर खुदवाया
तीन चड़स का थाळा से नी काम चल्यो तो,
पूनाजी पाणी को अंजण लइ आया
हळ ट्रेक्टर से खेत सँवारे, सिव जी को साळो रे
गयो इँदारो गाँव से !

लग्यो रेडियो खबराँ वाळो मन भावे
घर बैठे दुनियाँ की बात सुणइ जावे,
सुणों बारताँ रादू बा की रेडिया में
ग्राम सभा में गीत बसंती माँ गावे
भेराजी में मिळे अकल को नरो मुसालो रे
गयो इँदारो गाँव से !

गाँधीजी गंगा लाया सब न्हइर्‌या हे
सतजुग को सन्देस विनोबा दइर्‌या हे
जनपद पंचायत हमने हे आज बणइ
अपणा हाते अपणो राज चलइर्‌या हे
फूट गुलामी के दइद्यो अब देस निकालो रे
गयो इँदारो गाँव से !

पाँच बरस की बणइ योजना सुख पइर्‌या
मेहनत करने वाळा तो, होळी गइर्‌या
अब हराम को खाणो भइया खतम हुवो,
गादी तकिया का गुलाम सगळा रोइर्‌या
गंगा सरको हुइग्यो देखो, गंदो नालो रे
गयो इँदारो गाँव से, अब आयो उजाळो रे !

सूख गयो उजाळो रे !

नरेन्द्रसिंह तोमर
ग्राम पोस्ट–पिवड़ाय जिला–इन्दौर (म. प्र.)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर भोगी मालवो !

फूल में फूल बड़ो कूण, पर भोगी केवड़ो ।
देश में देश बड़ो कूण, पर भोगी माळवो ।
माळवा देस की असी रीत हे,
परदेसी से करे प्रीत हे ।
क्रेणे वाळा खरी कइग्या,
जसो फूस को तापणों,
असीज परदेसी की प्रीत हे !
छोटा-मोटा गांव घणेरा,
उपजे-निपजे घन धरती में,
भोळा भाळा भला भाव का,
माळव धरती का सपूत हे ।
आंबा, मऊआ का बाग बागीचा,
जामुण, इमली रस सूं सरसें ।
रंग रातड़ळी मेंहदी मेके,
आफू डोड़ा खस-खस बरसे ।
झरना झरे, पताळ में,
तिनछो तिरछो बेवे हे ।
जां नीलकण्ठ पर धार पड़े,
रैदास कुण्डी ऊपर सरसे है ।
ऊँचा-ऊँचा करखड़ा,
नीचे बेवे नाळा नद्दी ।
चंचल चम्बल में झाड़ घणा
गम्भीर नदी को गेरो जळ है ।
हर-हर करती नरबदा बेवे,
शिप्रा पल-पल थकाण हरे ।
कपिल मुनी कम्पेल का,
जमदग्नि ऋषि जानापाव
सांदिपन गुरु जहां पढ़ाता;
कृष्ण सुदामा एक निसाल, एसो अवन्ति धाम ।
मुंडे बोले मांडव का मेल,
प्यारो, मेसर को घांट नरबदा मैया को;
बम्बई नी छोटी बेन बनी,
इन्द्रपुरी अहिल्या मां नगरी ।
मालवा को दाणादार गोळ,
मानो मिसरी को घोळ ।
रमझोळ सांटो मीठो केवाय,
गाँव-गाँव की धरती में निपजे ।
खातेगांव, ताजपुर, तराना को घी,
चिकणो चमकदार अमृत सो पी ।
माळवा को पकवान, सुण्यो हे कदी नाम ?
राखोड्या लाडू ने बाफला को नाम ।
खइ पी ने लेवे डकार,
चोबीस घण्टा की या है पक्की खुराक ।
माळवा की थोड़ी माटी के किसनजी
लेइ गया, था उज्जीण से,
वीनने उड़ई दी थी बिरज में ।
उनी माटी से बिरज में मची गई धूम,
उनी बिरज की माटी को गुण-गाण,
सूरदास भी करी ने थकी ग्यो,
इका वास्ते माटी चोर सूं ही,
कन्हैयो माखनचोर बणी गयो ।
माळवो माँ पारबती को पियर है,
बापा शंकर को ससुराल है,
यां कदी दुःख दलिद्दर नी आवे,
हर वखत बहार है, बारा मासी
यां चेत की चांदणी चटके,
यां केवड़ो, कदम्ब, चम्पा, चमेली फूले ।
सदा बहार मोगरो, गुलाब हँसतो रे,
केसर्‌या रंग में केसूड़ी कसमसाय,
फागण का ढप ढोल ताल मरदंग सरसाय ।
गरबो गरबीलो हीड़ ने हलूरा तीज गावे,
छला भोला की भोलकी में लोक-गीत भावे ।
काल-पुरष इना कल्याणी मानव मां का है,
गुण निधान माळवा सपूत रण बांका है ।
माळवा में राजा भोज, हुया,
तो गंगु तेली भी जन्म्यो थो,
विक्रम जैसो हुओ परतापी,
तो कवि कालिदास भी पनप्यो थो ।
'नवीनजी' नवनीत सा उपज्या,
हरिभाऊ जैसो चिन्तक,
तो बालकवि बैरागी जैसो वैतालिक,
माळवा मिट्टी गीतां सू धरती धूजावा वारो
अन्तर करुणा मालव मां की ।
माळवा की मीठी वाणी,
सुनन के रिषी 'गौतम' इच्छा करे है ।
गेरी गम्भीर मालवा मां या धरती,
सदा-सदा अखूट अखण्ड बणी रे ।
ने आपणो रस आखा देश ने वांटती रे ।

—भागीरथ दुबे 'गौतम'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

म्हारो प्यारो गाँव !

ओमप्रकाश पंड्या :
देवगुराड़िया (इन्दौर)

म्हारो प्यारो गाँव, गाँव में अमराई की छाँव
छाँव जो सबके दे आराम, कि तमखे पास बुलावे रे
मीठा गीत सुणावे रे, चलो भई गाँव रे !

असा गाँव का रेणे वाला, सीदा सादा, भोळा भाळा
झूठ कपट वी कइँनी जाणे, सबकी सुनळे सबकी माने,
सत्य प्रेम की बोली बोले, य्हाँ हर घर में लछमी डोले,
सुख-दुख में सब एक दूसरा हात बटावे रे,
कि तमखे पास बुलावे रे, मीठा गीत सुणावे रे ;
चलो भई गाँव रे !

दन निकल्यो ने रात चली गइ, मुर्गा की आवाज सुणइ गइ,
घर-घर घट्टी चलणे लागी, बइना दही बिलोणे लागी,
खेत खळा की फिकर पड़ी गइ, सबका मनमें बात समइ गइ
ऊ देखो कोई सूरो, परबाती गावे रे, कि तमखे पास बुलावे रे
मीठा गीत सुणावे रे, चलो भइ गाँव रे !

हलधर को हल धीरे धीरे, धरती की जद छाती चीरे,
मेनत का मोती बिखरावे, माटी से सोनो उपजावे
दूर छाँव में बेठ्यो मोहन, काळी धोळी गाय चरावे
राधा पनघट से पाणी की गगरी लावे रे,
कि तमखे पास बुलावे रे, मीठा गीत सुणावे रे,
चलो भइ गाँव रे !

●

कां वांसली वजाड़े रे !

पूनमचन्द सोनी
नयापुरा चौक, उज्जैन

बेठो देवर मगरी पे, कां वांसली वजाड़े रे ?
बारे-बारे बरसां का सूता, सांप ने जगाड़े रे ! कां वांसली वजाड़े रे ?
भरी पाँख में दुखड़ा राखूं, छाना दई-दई थपकी रे,
झूलना झूलाड़ूं सपना, राते लई-लई झपकी रे ;
तू वैरी बण, मत बूंदे बेठी, नींद ने उजाड़े रे ? बारे-बारे.....!
बैरी, निंदिया में जग सूतो, करे ठिठोली सपना में,
रात भूलगी केई गोरी, केई खोई अपना-अपना में;
तू सुख–सांता में सूता का, मत बारना उगाड़े रे ! बारे-बारे.....!
अंई बाळे छाती, बोल पपइयो, बैरी बेठो बागा से,
मन भुरमावे काली कोयल, प्रीत जणे कोई कागा से;
तू बना मोरनी का मोर्‌या, मत भादवो गजाड़े रे ! बारे-बारे.....!
याद पिया की सावन सरकी, आँख्यां में जोई राखूं रे
वखरेनी म्हारा मन का मोती, साँस-साँस पोई राखूं रे
तू रंग वखेरी फागन का, मत फाग ने लजाड़े रे ! बारे-बारे.....!
चले वायरो बादल गाजे, माथा पे कड़के बिजली,
नस-नस में झन्नाटा फूटे, छैल छिप्यो काळी बदली !
तू बिना मीत के गीत की, कां पालकी सजाड़े रे ? बारे-बारे.....!

● ●

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विरहणी अने बेलड़ी

मत उगे बेलड़ी म्हारे आंगण, फूल फलां मत फलजे रे,
सेज सुहानी, रंग रंगानी, पवन बावरी सांड़थली,
झरमर मती मचलजे रे, फूल फलां मन फलजे रे !

कूण थने पावेगा पाणी कूण करेगा रखवाली,
लाड़ लड़ावे कूण थारा बई, हालर झूमां, हाली,
मंदर जातां फूल तोड़तां, कूण थने फेरां देगा
बोल म्हारी अणबोली गोठण कूण थारा वाला लेगा–
पियु मन भानी, फूल सजानी, रंग-रंगानी बेलड़ली;
विरहण ने मन छलजे रे, फूल फलां मत फलजे रे !

मेहनत घणी पड़ी जद थारे, क्यारो मांड्यो आंगण में–
तपत तावड़ो झेल्यो माथे, उनाला में फागण में,
छाला पड़ग्या जमीं खोदतां, दुखे आज भी बांयड़ली,
आस लगाई कद बोलेगा, थारी डाल पे कोयलड़ी,
घड़ी वा टलगी आग सुलगगी, बलगी मन की आसड़ली
थू तो पण मत बलजे रे, फूल फलां मत फलजे रे !

दो बरसां पेल्यां ही म्हारे माथे लागी टीली रे,
घणी पियारी चूनर ओढ़ी, माथे पीली-पीली रे,
क्वांरी बणगी अमर सुहागण, तन मन खूब रंगायोरे,
सेजां चढ़तां साजनवारी बायांरो सुख पायो रे।
गुन-गुन गाती, लाड़ लड़ाती, तन में ढलगी मूरतड़ी,
दिन दूणी तू ढलजे रे, फूला फलां मन फलजेरे !

रातां कटतां देर नी लागी, दुश्मण चढ़ग्यो डेली,
बिछगी जद बारूद बरफ में, दीवाली रे पेली,
ओर हिमाले चढ़ भारतरी मां ने टेर लगाई,
दीवाली रे माथे देखो होली चढ़ने आई–
उठो हिन्दरा लाल शीश पर काल बुलावे मायड़ली,
हिम आलय मत गलजे रे, फूल फलां मत फलजे रे!

शूर सजन म्हारा बिदा मांगली, फौजां भरथी वेग्या रे,
गेणां गांठा सोनो चांदी, नींद आंखरी लेग्या रे ;
खुशी-खुशी म्हें बिदा कराया, मां की पीर मिटाजो रे,
इंच-इंच धरती लेल्यो, जद घरां लौट ने आजो रे–
पियुनी आया विरहण करग्या, भरि-भरि आवे आंखड़ली,
आंसूड़ा मत ढलजे रे, फूल फलां मत फलजेरे !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लोई रंग सूं रंग्यो हिमाल्यो, खुल्या सरग रा द्वारा,
बोल बोल म्हारी अमर बेलड़ी कठे पियूजी म्हारा,
देग्या अमर अमानत म्हारे, गोदयां खेलण हारी,
देख लाल रो सुघर मूखड़ो, जाऊँ रे वारी वारी,
लाल रतन म्हारो अमर नवो धन मन की पूरे आसड़ली-
शूरा मरद निकलजे रे, फूल फलां मत फलजे रे !

कं. गिरवरसिंह भँवर

सोयटड़ा ने भेज संदेसो पियू रो लेने घर आवे,
सीमा पर कोयल ने पोंचा, अठे अकेली कइँ गावे,
जद तक आवे सजन लाड़ला, थूं आगे मत बढ़जे रे,
पियु दरसण मूं करलूं जद तक, थूं महलाँ मत चढ़जे रे !
सर्र सराती, फर्र फराती, चले पवन जो बावड़ली,
धीमी-धीमी चलजे रे, फूल फलां मत फलजे रे !

पियु का सांथे पाणी सींचू, थने सुहागण कर दूंगा,
कंकू मेंहदी धूप दीप से, थारी गोद मूं भर दूंगा–
सोगन थने सुहागरी म्हारा पियु ने झट ही घर ल्यादे,
म्हारी आंख रो पाणी साजन पेल्यां पेल थने प्यादे–
जदतक आवे पियु मन भावे, सुण-सुण गोठण सांथड़ली,
जड़ सूँ मती निकलजे रे, फूल फलां मत फलजे रे !

भँवर साधना मंदिर
बेटमा, (इन्दौर)

• •

आज चली परदेस !

म्हारा दउजी के दो सन्देस–
के, म्हारे कँई लेने भेजोरे बिदेस ।
कँईरे जगत की रीत हटीली,
छूटीरे दउजी की डेली ।
बिसक-बिसक म्हारी बेन्यां रोवे
रोवे रे, 'जीजी' इकेली
चाँद सरीखी म्हारी भाभी रोवे
बीरा के मन लागी ठेस–
के, म्हारे कँई लेने भेजोरे बिदेस ।
पाड़-पड़ोसन को लाड़ लुटीग्यो
छूटीरे अम्बुवा की छइयाँ,
हरिया खेत म्हारा बाबुल का छूट्या
नरम भतीजा की बहियाँ,
हल्दी-मेंहदी ऐसी रचइ है–
बनायो दुलहनियाँ को भेस–
के, म्हारे कँई लेने भेजोरे बिदेस ।

ओ म्हारा राम ! कोइकी बेटी से
दउजी को घर मत छुड़वाजे,
बाबुल की बगिया की काली कोयल
अबे गीत सुनाने मत आजे,
थारा गीताँ की बावली बेन्याँ
आज चली रे परदेस–
के, म्हारे कँई लेने भेजोरे बिदेस ।
एक रात में तोड़ी दी रे
ममता बरस-बरस की,
परदेसी के दान में दइदी
मेहनत सोला बरस की,
एसी अँगना में सेहनई बाजी ने
एमा पुजाया गणेस–
के, म्हारे कँई लेने भेजोरे बिदेस ।
म्हारा दउजी के दो सन्देस–
के, म्हारे कँई लेने भेजोरे बिदेस ।

–सुलतान 'मामा'
–तराना

दादा चिन्तामणि उपाध्याय की सुकन्या सौ. कमलेश की बिदाई के अवसर पर–

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निकष

मालवी लोक साहित्य की दो दिशाबोधक कृतियाँ

मालवी लोक गीत एक विवेचनात्मक अध्ययन—डॉ. चिन्तामणि उपा०
मालवी लोक साहित्य—डॉ. श्याम परमार ।

मालवी लोक-गीत एक विवेचनात्मक अध्ययन—डॉ. चिन्तामणि उपाध्याय

प्रकाशक—मंगल प्रकाशन, गोविन्द राजियों का रास्ता, जयपुर, मूल्य २० रु., पृ. सं. ४४८ ।

लोकगीतों की स्रोतस्विनी के अविराम प्रवाह में मालवा की सौंधी माटी की गन्ध से गमके मालवी लोक गीतों का अपना मौलिक महत्व है । 'देश मालवा गहन गम्भीर, डग डग रोटी मग मग नीर' वाले इस प्रदेश के हरे भरे अंचल की तरह न केवल इसके लोकगीतों का आँचल हराभरा है अपितु उनमें इसके विपुल रसस्निग्ध धान्यों की तरह रसमयता एवं मिठास भी है । ये लोकगीत उन अज्ञातनामा कालजयी लोक-मानस के निसर्ग पुत्रों एवं पुत्रियों की देन हैं जो अनादिकाल से मालव अंचल में बसे लोककंठ का भूषण बने हुए हैं । इन लोक गीतों के लौकिक सुख एवं पारलौकिक सुखाकांक्षी रूपों के हमें सर्वत्र दर्शन होते हैं । डॉ० चिन्तामणि उपाध्याय ने अपने इस शोधप्रबन्ध में मालवी बोली की उस रसगंध-गरिमा को समेटा है जो उसकी माटी ही के अनुरूप है । अपने इस प्रबन्ध के प्रथम अध्याय में उन्होंने लोकगीतों के उद्गम, पम्परा निर्वाह, प्रकृत स्वरूप, लोकगीतों की मनोभूमि, रूढ़ियाँ और कला रूप पर अत्यन्त ही गंभीरता से विचार करते हुए भारतीय लोकगीतों की प्राचीन परम्परा में उनका स्थान निरूपित किया है, जिसमें उनकी चिन्तन-परक दृष्टि का आकलन स्पष्ट ही परिलक्षित होता है ।

इस शोध प्रबन्ध के द्वितीय अध्याय में मालवा की धरती, भौगोलिक एवं सांस्कृतिक पृष्ठभूमि, जन जातियाँ, लोक साहित्य की स्थिति, उसके लोक गीत एवं उनका वर्गीकरण आदि विषयों पर गम्भीरता पूर्वक विचार किया है । इसी संदर्भ में उन्होंने स्वयं एवं अपने साथियों के सहयोग से निर्मित 'मालव लोक साहित्य परिषद्' की स्थापना तथा कार्य विवरण पर भी विचार किया है । इसी अध्याय में विद्वान लेखक ने मालवी लोक साहित्य की स्थिति पर भी विचार किया है । अपने संकलन कार्य का विवरण देते हुए लेखक ने स्वीकारा है कि उसका यह संकलन कार्य उज्जैन, शाजापुर, इन्दौर, बड़नगर, रतलाम, मन्दसौर आदि प्रमुख नगरों एवं इनके निकटवर्ती ग्रामीण-क्षेत्रों से किया गया है ।

तृतीय अध्याय में शिशुओं के और कन्याओं के सभी प्रकार के गीतों का समावेश किया गया है । मालवा के बालक-बालिकाओं के इन गीतों के कतिपय उदाहरण प्रस्तुत करते हुए लेखक ने उनके मनोवैज्ञानिक पहलुओं पर भी विचार किया है । साथ ही पशुपक्षी, पुष्पवृक्ष, वस्त्राभूषण, खाद्य पदार्थ, जातियों के नाम, प्रकृति के दृश्य एवं गाड़ी, रेल, पालकी, तलवार, रोकड़ा आदि के सामान्य ज्ञान सम्बन्धी गीत भी दे दिए हैं । ये गीत मालवा के अंचल में बालकों के द्वारा उन्मुक्तता से प्रयुक्त होते हैं । मालवा की कन्याओं के संजा तथा घड़ल्या के गीतों की भी विवेचना प्रस्तुत की गई है । नारियों के गीतों में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जन्म-संस्कार, लोकाचार, बधावा, जच्चा, हालरा, लोरियाँ, अंगरणी, कुलदेवी-देवता, घनबऊ सौत, पगल्या, सूरज पूजा के गीत प्रमुख हैं। विवाह के गीतों में वरयात्रा, कन्या का शृंगार, प्रीतिभोज, अग्नि प्रदक्षिणा, हस्तमिलन के गीत हैं। इनमें मालवा की अपनी वैवाहिक परम्परा की विवेचना भी कर दी गई है। मालवा में गणपति पूजन को वन्याक (विनायक) पूजन कहते हैं। गणपति के गीत भी इस अंचल की अपनी विशेषता लिए हुए हैं। इसी संदर्भ में रातीजगा (रतजगा) के भी गीत दिए गए हैं जिनमें देवी देवताओं का आवाहन और पूजा की जाती है। इस अवसर पर गीतों का वातावरण ऐसा सम्मोहक बन जाता है कि मृतक कुल देवता की आत्मा परिवार के किसी सदस्य के शरीर मे आकर इच्छित प्रश्नों के उत्तर देती है। इन्हीं गीतों में माता शीतला, भेरूजी, मोतीबापजी, छींक माता आदि के गीत भी आते है। मायरा के गीतों में अपने भाई के मंगल उत्कर्ष के प्रति बहिन की कामना देखते ही बनती है। यज्ञोपवीत, वर यात्रा, कामण के साथ ही गाल-गीत भी प्रसिद्ध हैं। जमाई (जामातृ) से ससुराल में बुद्धिविनोद के पूछे गए प्रश्नों को मालवी में 'पारसी' कहते हैं। हर प्रश्न गीत की कड़ी के अन्त में जोड़ा जाता है, "को सा जमई म्हारी पारसी, तुरता करोनी बिचार"। स्त्रियों के गीतों में त्यौहारों, ऋतु गीतों एवं पर्वों से सम्बन्धित गीतों की भी बहुलता है। इस तीसरे अध्याय में लेखक ने नारी गीतों का अत्यन्त ही भावमय एवं तथ्यपरक मूल्यांकन किया है।

चतुर्थ अध्याय में पुरुष गीतों का विवेचन भी अत्यन्त ही उपयोगी है। इनमें मुक्तक तथा प्रबन्धात्मक दोनों ही प्रकारों के गीतों के दर्शन होते हैं। मुक्तक में छल्ले (दोहे शृंगारी) फाग तथा किलंगी-तुर्रा के गीत हैं। इन्हीं के साथ भक्ति परक गीत भी दे दिए गए हैं। प्रबन्धात्मक गीतों में सोरठ, निहालदे, चम्पादे, माच तथा भक्ति प्रधान गीतों में कृषिगीत, तेज्या-धोल्या, चन्नन कुँवर, हीड़, ग्यारस आदि के गीत प्रमुख हैं। पुरुषों के गीतों का एक और रूप संगीत नाट्य माच में उभरा है, जो मालवे की अपनी विशेषता है। निर्गुणी गीतों में निर्गुणी गीत, रामदेवजी के गीत आदि पर विचार किया गया है।

पंचम अध्याय में मालवी लोकगीतों की विशेष प्रवृत्तियों पर लेखक ने तुलनात्मक विचार प्रस्तुत करते हुए कुण्ठा, यौन संकेत, प्रतीक शैली, जादू-टोने, अंधविश्वास एवं गीतों की संवादात्मक शैली पर भी विचार किया है। लोक-गीतों में वर्णित विशिष्ट चरित्रों के अन्तर्गत नारी के विविध रूप माता, प्रेयसी, नणदल, सास, बहू, बेटी, सौत के साथ ही पुरुष चरित्रों में देवर, जेठ, श्वसुर, भाई के सम्बन्धों पर भी विचार किया गया है। इसी खण्ड में गीतों की रस प्रतिष्ठा पर लेखक ने विचार करते हुए उनके संगीत के शास्त्रीय पक्ष पर भी प्रकाश डाला है।

छठे अध्याय में लेखक ने मालवी लोकगीतों के परिप्रेक्ष्य में प्रकृति और जनमानस से उसके तादात्म्य की भावभूमि पर विचार करते हुए गोयरा, ग्राम, खेती बाड़ी, खेत-खलिहान, नदी सरोवर वृक्ष-लता, पशुपक्षी तथा बारह-मासी पर भी विचार किया है। अंतिम अध्याय में मालवी लोकगीतों के महत्व का प्रतिपादन करते हुए उनके सम्बन्धों पर राजस्थानी और गुजराती गीतों के आधार पर भी विचार किया है। बदलते युग में सिनेमा का प्रभाव आदि का संकेत करते हुए इन लोकगीतों की रक्षा की दिशा में प्रयत्न पर जोर दिया है।

कुल मिलाकर मालवी लोकगीतों के अध्ययन की दिशा में विद्वान लेखक का यह कार्य अभिनन्दनीय है। मालवी भाषा के अनुरागियों को इस पुस्तक की प्रति अपने पास अवश्य ही रखनी चाहिए।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(२) मालवी लोक साहित्य – डॉ. श्याम परमार

प्रकाशक हिन्दुस्तानी एकेडेमी, इलाहाबाद, मूल्य २० रु. पृ. सं. ५०६

मालवी भाषा और उसके लोक-साहित्य के क्षेत्र में डॉ. श्याम परमार की यह मूल्यवान एवं महत्वपूर्ण कृति डॉ. चिन्तामणि उपाध्याय के शोध-प्रबन्ध के एक पक्षीय पहलू द्वारा छूटे हुए क्षेत्र को छूकर बहुत बड़े अभाव की पूर्ति करती है। इस कृति का क्षेत्र पटल व्यापक है। इसमें विद्वान लेखक ने मालवी लोक-साहित्य के सम्पूर्ण पटल को स्पर्श करने का सफल प्रयास किया है। मालव की परम्परागत सांस्कृतिक चेतना, जीवन प्रवाह के अध्ययन के लिए मालव प्रदेश के लोक साहित्य का यह मूल्यांकन अत्यन्त ही महत्वपूर्ण बन पड़ा है। प्रस्तुत शोध प्रबन्ध की प्रस्तावना में भारत में लोक साहित्य के संकलन एवं प्रकाशन की प्रगति पर लेखक ने संक्षेप में विचार प्रकट किया है। प्रथम अध्याय के (अ) खण्ड में मालव, मालवा की सीमा, जातियों का अन्तरावलम्बन, मध्यभारत की बोलियां और मालवा, मालवी का क्षेत्र, मालवी का मानचित्र आदि पर विचार करते हुए अवन्तिजा मालवी ही को मालवी का विशुद्ध रूप स्वीकार किया है। मालवी के अन्तर्वर्ती विभाजन में कांठल, बागड़, राठ, सोंधवाड़ उमठवाड़, खिचीवाड़ा, निमाड़ आदि का भी उल्लेख किया है। इसी अध्याय में व्याकरण की दृष्टि से मालवी के सामान्य रूपों पर विचार किया है। 'बारह कोस पर बोली बदले' वाली उक्ति के आधार पर उज्जैनी (आदर्श मालवी), उत्तरी मालवी जिसमें रतलाम, जावरा, मन्दसौर, कोटा के समीप डांग प्रदेश पर राजस्थानी का प्रभाव दिखाया है। दक्षिणी मालवी में नर्मदा उपत्यका का मध्य उत्तर प्रदेश दिखाया गया है। पूर्वी मालवी में नरसिंहगढ़, सीहोर, दक्षिण झालावाड़ और भोपाल का पश्चिम क्षेत्र लिया गया है, जिस पर बुन्देली का प्रभाव है। पश्चिमी मालवी में जोबट, अलीराजपुर, झाबुआ का क्षेत्र आता हैं जिस पर भीली, गुजराती, बंजारी और खिचीवाड़ी का प्रभाव है। लेखक का यह वर्गीकरण अब तक की मान्यताओं में ग्रियर्सन से थोड़ा आगे बढ़ा है।

मालवी के विकास के साथ ही लेखक ने मालवी लोक साहित्य के संकलन का महत्वपूर्ण विवरण दे दिया है। ग्रंथ के द्वितीय अध्याय में लोकगीत साहित्य को समेटा है। जन्म, विवाह तथा मृत्यु के त्रिकोणात्मक बिन्दुओं की पृष्ठ भूमि में उन पर विचार किया है। विद्वान लेखक ने अपनी चिन्तनपरक दृष्टि और अनुभूतिपरक विवेचना का परिचय देते हुए इस त्रिकोण के हर पहलू को स्पर्श किया है, जिसमें मालवा की सांस्कृतिक गरिमा के अनुरूप यथातथ्य मूल्यांकन अत्यन्त ही स्वाभाविक एवं मौलिक बन पड़ा है।

अध्याय तीन में मालवी लोक साहित्य की धार्मिक परम्पराओं की विवेचना प्रस्तुत की गई है। इस विवेचना में मालवा की संत काव्य धारा, कलंगी तुर्रा, मृत्युगीत, निर्गुणी गीतों पर विचार करते हुए लेखक ने यह स्वीकारा है कि मालवी का अधिकांश निर्गुणी-गीत-साहित्य अभी सन्तों के कंठो में ही निवास करता है और अलिखित है। मालवा की नाथ साहित्य की धारा पर उज्जैन के राजा भर्तृहरि और गोपीचन्द का बहुत अधिक प्रभाव है। सगुण धारा में चन्द्रसखी तथा अन्य गीतकारों की चर्चा उल्लेखनीय हैं। गीतों में देवी-देवता, गंगाजी के भजन, गर्बा, देव महाराज, तेजाजी, भेरूजी, गोगाजी आदि की चर्चा प्रमुख है। अध्याय चार में मालवी लोक-नाट्य माच पर रंग मंचीय दृष्टिकोण से लेखक ने विचार किया हैं। इसी परिप्रेक्ष्य में मालवी माच के प्रवर्तन बालमुकुन्द गुरू, राधाकिसन-गुरू, भेरू गुरू आदि का उल्लेख ऐतिहासिक दस्तावेज है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अध्याय पाँच में विद्वान लेखक ने मालवा के अंचल के लोक कथा साहित्य (वार्ता) को समेटा है। उसे वर्गीकृत कर, उस पर अपने द्वारा संकलित, प्रकाशित परिप्रेक्ष्य में विचार किया है। कथाओं को ऐतिहासिक, अर्द्ध ऐतिहासिक, व्रतकथाएँ, पशु-पक्षियों की कथाएँ, चतुराई सम्बन्धी कथाएं, चमत्कार प्रधान कथाएँ आदि विभेदों में विभक्त कर उन पर विचार किया गया है। विवेचन के अन्त में अंतर्प्रान्तीय साम्य का भी उल्लेख कर दिया हैं।

अध्याय छह में मालवा के अंचल में बिखरे लोकोक्ति साहित्य को समेटा गया है। कहावतें ज्ञान की दुहिता एवं अनुभव की निचोड़ हैं। इनका अनुभव सर्वकालीन और सार्वदेशिक है। लेखक का कथन है कि उसके पास ऐसी दो-हजार कहावतों का संग्रह है। इसी अध्याय में डॉ. परमार ने मालवी प्याली या प्रहेलिकाओं पर भी विचार किया है। और इन्हें प्रकृति, पशु-पक्षी, वस्त्रों, कृषि आदि भागों में बांटा हैं।

मालवी लोक साहित्य के सम्पूर्ण आकलन के निचोड़ के साथ ही उपसंहार में विद्वान लेखक ने मालवा की लोक कला के पक्ष पर कलम उठाई हैं। इस प्रकरण में मांडना परम्परागत आकृतियाँ सांझी, मेंहदी-भांत और गोदना पर नृतत्व शास्त्र की दृष्टि से विचारानुशीलन किया है। अंत में लेखक ने यह लिखकर इस मूल्यवान कृति का समापन किया है कि 'मालवी लोक-साहित्य का यह अध्ययन एक जन पद की लोक भाषा और परम्परा का साधारण परिचय मात्र है। इसके व्याप्त रूपों का अध्ययन दूसरा चरण होगा। 'परिशिष्ट' में बाल-गीत संझागीत जन्म संस्कार सम्बन्धी गीत, विवाह के गीत, देवी देवताओं के गीत, चन्द्रसखी के गीत, ऋतु-गीत लोकोन्मुखी संत परक लोक गीत आदि के साथ ही कुमार गंधर्व द्वारा तैयार की गई मालवी गीतों की कुछ स्वर तालिकाएँ भी दे दी हैं। लेखक ने मालवी लोक साहित्य के संकलन के लिए जिन-जिन स्थानों की यात्रा की है उनकी सूची दे दी गई हैं। किसी ग्राम का सर्वेक्षण करने के लिए उपयोगी पर्यवेक्षण पत्र का नमूना भी दिया है।

यह ग्रंथ मालवी लोक साहित्य के अध्ययन को पूर्ण दिशा देता है। इसके प्रस्तुतीकरण से मालवा के लोकांचल की इस मधुर बोली के विविध पक्षों को समझने और उनमें पैठने का मार्ग मिल जाता है।

डॉ. चिन्तामणि उपाध्याय तथा डॉ. श्याम परमार द्वारा प्रस्तुत मालवी बोली के लोक साहित्य पक्ष को उजागर करने वाली ये दोनों कृतियाँ निस्संदेह मूल्यवान हैं। मालवी भाषा और उसके अध्ययन की दिशा में आने वाली पीढ़ियों तथा लोक साहित्यानुरागी शोध जन इन दोनों कृतियों से अवश्य ही लाभान्वित होंगे।

—प्रकाश उपाध्याय
४९, अहिल्यापुरा, इन्दौर

माटी की सोरमः—

संपादक श्री चैतन्य गोपाल 'निर्भय'। प्रकाशक—काव्यम् उज्जैन। पृष्ठ संख्या १०४। मूल्य २–२५।

प्रस्तुत काव्य-संग्रह में मालवी के चार कवियों सर्व श्री पूनमचन्द सोनी, भावसार 'बा', मोहन सोनी और शिव चौरसिया की रचनाएँ संग्रहीत हैं। 'शुभाशंसा' लिखी है डॉ. शिवमंगलसिंह 'सुमन' ने और 'माटी की सोरम को रूप' उभारा है पं. सूर्यनारायणजी व्यास ने। साथ ही प्रत्येक कवि के काव्य पर संक्षेप में प्रकाश डाला है कुछ मालवी-काव्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मर्मज्ञों ने। श्री पूनमचन्द सोनी पर लिखा है डॉ. दुर्गाप्रसाद झाला ने। भावसार 'बा' पर प्रकाश डाला है डॉ. बसन्तीलाल 'बंम' ने। श्री मोहन सोनी की काव्य प्रतिभा का परिचय कराया है डॉ. श्यामसुन्दर निगम ने तथा श्री शिव चौरसिया की काव्य कला का निरूपण हुआ है डॉ. चिन्तामणि उपाध्याय द्वारा। इस प्रकार यह संग्रह मालवी काव्य के आस्वादन के साथ ही मालवी काव्य कला का भी परिचय देता है। मालवी काव्य-संग्रहों के अभाव में इस संग्रह की उपादेयता और बढ़ जाती है।

सर्व प्रथम, संग्रह में श्री पूनमचन्द सोनी की दस रचनाए हैं। इन रचनाओं में कवि की भावुकता बड़ी सरलता के साथ अभिव्यक्त हुई है। सादगी इन रचनाओं का सौन्दर्य और सहजाभिव्यक्ति इनकी विशेषता है। उदाहरणार्थः—

खाय उछाला लट माथा की, चढ़ी उमर का दरिया पे।
गदराणी कचनार कली, सोना सो रंग उमरिया पे।

इसके पश्चात् श्री टीकमचन्द भावसार 'बा' की दस रचनाएँ प्रस्तुत की गई है। 'बा' में मालवी का माधुर्य बड़े ही टकासाली ढंग से अभिव्यक्त हुआ हैं। हास्य के पुट के साथ उनकी 'तर्जे बयाँ' देखने योग्य है। 'तराजू', 'नारंगी', 'खरबूजों' एवं 'ताला-कूंची' में उनका संवाद कौशल मुहावरेदानी एवं तेवर देखते ही बनते हैं।

'बा' की रचनाओं के बाद श्री मोहन सोनी की नौ रचनाएँ इस संग्रह में है जिनमें 'परीक्षा' भी है। 'परीक्षा' श्री सोनी की एक बहुचर्चित प्रसिद्ध रचना है। श्री सोनी की कविताओं में मालवी की मिठास के साथ ही उनकी कवि प्रतिभा भी दृष्टिगोचर होती हैं।

अंत में श्री शिव चौरसिया की पन्द्रह रचनाएँ हैं। प्रायः सभी गीत हैं जिन पर लोक-गीतों का रंग चढ़ा हुआ है 'रे की रोर' का। इनमें कुछ गीत अच्छे बन पड़े हैं।

कुल मिलाकर 'माटी की सोरम' अपने चार साधकों के माध्यम से मालव और मालवी की 'सोरम' का अच्छा परिचय देती है। मालवी कविता के रसास्वादन एवं विकास-चरण को समझने की दृष्टि से प्रस्तुत संग्रह पठनीय एवं संग्रहणीय हैं। काव्यम् एवं उसके साधनों का यह प्रयास स्तुत्य हैं। • •

—डॉ. श्यामसुन्दर व्यास

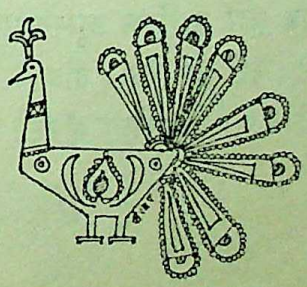

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्टेट बैंक ऑफ इन्दौर

(स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया की सहायक बैंक)

२, बम्बई आगरा मार्ग, इन्दौर

बम्बई और मध्यप्रदेश का बड़ा व्यवसायिक केन्द्रहोन में बैंक की शाखाहोन। मियादी जमा रकम पर सूद की बहोतज ही अच्छी बड़ोत्री। विदेशी मुद्रा का कामकाज को भी अच्छो इन्तजाम। कारीगरों इंजीनियरहोन का औजार खरीदने वास्ते कर्जा की सहूलियत। और कीमती चीजाँ, जेवरहोन की सुरक्षा के वास्ते लाकर को अच्छो इन्तजाम। स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया ओर उणकी सहायक बैंकहोन की ३००० से ज्यादा शाखाहोन का मार्फत कामकाज को इन्तजाम। इन्दौर बैंक याने अपणीज बैंक।

कार्यालय नगरपालिका,

रतलाम म. प्र.

प्रदेश की साहित्यिक मासिकी 'वीणा' के मालवी अंक के प्रकाशन के अवसर पर हम हार्दिक शुभकामनाएँ प्रेषित करते हुए यह आकांक्षा प्रकट करते हैं कि 'वीणा' इसी प्रकार भाषा एवं प्रदेश की विभिन्न बोलियों की सेवा करती रहेगी।

वी. एम. कोठारी

अध्यक्ष

नगरपालिका, रतलाम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मालवी मेला मेरी नजर में……

सुजलाम् सुफलाम् मालवा का सुरम्य नगर रतलाम, ८ जून का मंगलमय ऐतिहासिक दिवस, नगर के हलचल एवं कोलाहलपूर्ण वातावरण से दूर, शान्त-प्रशान्त पथगामिनी के पार्श्व में स्थित श्रमशिविर के द्वार पर लगी आम्र पल्लवों की मंगलमयी वंदनवारें, कर्ण-कुहरों में रस घोलने वाली शहनाई की सुमधुर ध्वनि बरबस ही आगन्तुकों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित कर रही थी। मालवा के सुदूर अंचल से आये कवि, लेखक, चित्रकार, कलाकार और मालवी के सहज अनुरागियों का जमावड़ा धीरे-धीरे एकत्र हो रहा था। आगन्तुक अपने परिचित मित्रों से भुजा पसार कर भेंट रहे थे। परिचित-अपरिचित एक दूसरे से जिज्ञासावश पूछ रहे थे 'यो कस्यो मेलो हे ?' कईं कईं होगा इमें ? ने कूण-कूण आवेगा ? प्रश्न उछलते और इन प्रश्नों को स्वाभाविक उत्तर मिलता–'यो तो मालवी बोलवा वालाओन को जमावड़ो हे, इमें कवि, लेखक, ने मुकताज लोग आवेगा। सुणीर्‌या हाँ के दिल्ली सूं राष्ट्रकवि दिनकरजी भी अईर्‌या हे। मालवी माँ को मुख ऊजळो करवा वाळो लाड़लो कवि बाल बेरागी इमें रुचि लेईर्‌यो है। ओर भी बड़ा बड़ा पण्डित होण इमें भाग लेइर्‌या हे। विनयमोहनजी, भगवतशरणजी ने मालवा की जूनी राजधानी उज्जीण का विश्व-विद्यालय का कुलपति डॉ. सुमन भी पधारी र्‌या हे। एक ने पूछो–"तो इका माँ वी लोग कईं कईं तमासो करेगा ?" श्रोता के मुख पर मुस्कान फैल गई–"बोला–ऊको वरणन करवा की म्हारी सक्ती नी हे, तम भी आवजो इना मेला में ने देखीने रस लीजो।"

धीरे-धीरे सभी आगत महानुभाव एकत्र हो रहे थे। ठीक समय पर दिनकरजी पधारे। साथमें डॉ. सुमन, प्रदेश के सूचना एवं प्रकाशन राज्यमन्त्री बालकवि बैरागी, आचार्य विनयमोहनजी भी थे। मालवी वेशभूषा में कुमारियों ने मंगल कलश लेकर तोरण द्वार पर उनका स्वागत किया। दिनकरजी के ललाट पर कुंकुम और अक्षत लगाकर मालवी की भावना ने राष्ट्रकवि का पुनीत अभिनन्दन किया। श्रम शिविर का सभा-कक्ष युवक चित्रकार डी. सी. जयन्त के मालवी परिवेश के चित्रों से सजा था। मंच पर पृष्ठ भूमि में संजा की किलाकोट की आकृति पन्नी में दूर से ही चमचमा रही थी। भावुक मालवी जनता आबालवृद्ध-नारी सभी के मुखों पर औत्सुक्य एवं उल्लास की रंग वर्षा हो रही थी। सभाकक्ष में तिल रखने की भी जगह खाली नहीं बची थी।

वन्दे मातरम् के पश्चात् मालवी के मधुर गीतकार नरेन्द्रसिंह तोमर ने अपने इकतारे पर गवरीनन्द गणेश की वन्दना की। प्रदेश के सूचना एवं प्रकाशन राज्यमन्त्री बालकवि बैरागी ने अपने भाषण में कहा–"रतलाम में हर वर्ष कम से कम एक कवि सम्मेलन मालवी का होता है। इस बार यह संकल्प मालवी मेले के रूप में मूर्त हो रहा है। मैं मालवी मेले की रूपरेखा दिनकरजी, सुमनजी तथा अतिथियों के सम्मुख स्पष्ट कर दूं। इस अवसर पर मैं मालवी में अपने विचार प्रकट न करके खड़ी बोली में ही प्रस्तुत कर रहा हूँ। इसके पीछे मेरे इस दृष्टिकोण ही की व्यापकता है कि हम मालवी की बात सब तक पहुंचा सकें। वर्षों से रह-रह कर यह बात मन-मस्तिष्क को कचोटती रहती थी कि हम मालवी बोलने वाले रचना-कार एवं कविगण एक मन्च पर बैठें और उसकी रक्षा और समृद्धि की दिशा में प्रयत्नशील हों।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

केवल मालवी के साहित्यकारों ही में नहीं वरन देश के वरिष्ट भाषाविदों में यह प्रश्न आज भी चर्चा का विषय बना हुआ है कि मालवी भाषा है अथवा बोली ? और यदि बोली है तो वह कौन सी प्रक्रिया है जो बोली को भाषा का रूप दे देती है । जन गणना की दृष्टि से मालवी बोलने वालों की संख्या कई लाख है । हमारे कुछ साहित्यकार मित्र निमाड़ी को मालवी से स्वतन्त्र भाषा अथवा बोली के रूप में स्वीकार करते हैं और उनमें से अनेक निमाड़ी में लिख भी रहे हैं । मैं, भँवरजी, हरीशजी आदि जब मध्यप्रदेश के बाहर जाते हैं तो अपनी ओर से एक दो रचनाएँ मालवी की अवश्य ही सुनाते हैं । लोग आग्रहपूर्वक सुनते हैं और यदि किसी कवि सम्मेलन में मालवी कविता नहीं सुनाते तो हमें लगता है हमारी यात्रा अधूरी रह गई है ।

जबसे हमें अखिल भारतीय मंचों पर मालवी के बारे में बोलने का अधिकार मिला है, तभी से हमने बार-बार इस प्रश्न पर विचार किया कि क्यों न हम सब लोग मिलकर बैठें और मालवी को आगे बढ़ाने की दिशा तय करें । मालवी की सबसे बड़ी कमजोरी यह रही है कि इस भाषा का पर्याप्त गद्य नहीं लिखा गया। भाषाविदों की मान्यता है कि जिस भाषा में गद्य नहीं होता उसका व्याकरण नहीं होता । यह भी एक तथ्य है कि जिस भाषा का व्याकरण नहीं होता उस भाषा अथवा बोली का स्वरूप बदलता रहता है । इन्ही सब कारणों से हमें मालवी-मेला आयोजित करने की प्रेरणा की दिशा मिली और उसका मूर्तरूप आपके समक्ष है जो मालवी के पथ को अधिक प्रशस्त करेगा ।

मालवी मेला रतलाम में आयोजित किए जाने के भी कुछ कारण हैं । रतलाम एक ऐसा नगर हैं जहां प्रतिवर्ष नगर पालिका अपनी ओर से मालवी-भाषा का एक कवि सम्मेलन आयोजित करती है और कभी-कभी तो दो भी हो जाते हैं । यहाँ की जनता संध्या से सुबह ५ बजे तक डटी रहकर मालवी के गीत सुनती हैं, लोकगीत सुनती है, और लोक-नृत्य देखती है । इसी आशा से मैंने श्री दिनकरजी को इस मेले में आने के लिये आमंत्रित किया है । जागरूक बुद्धिवादी के नाते आप सबसे एक बात स्पष्ट कहना चाहूँगा कि इस मालवी मेले के पीछे हमारी कोई मांग नहीं हैं, कोई राजनीतिक मांग नहीं हैं । महामालव बनाने की कोई योजना नहीं है । इसके पीछे मात्र एक बात यह है कि मालवी के विकास के द्वार खुलें । मालवी लिखने वाले जब आसाम में मालवी के गीत सुनते हैं, जब लोकगीत सुनते हैं तो वहाँ के लोग मालवी पसन्द कर लेते हैं । जब मैं श्रीनगर में, या भँवरजी कलकत्ते में या बंगाल में गीत गाते हैं । तो लोग मालवी को समझने की कोशिश करते हैं, प्यार करते हैं । अब रतलाम के इस मालवी मेले में आदरणीय दिनकरजी, सुमनजी, आचार्य विनयमोहनजी और हम सबके मिलकर बैठने से मालवी को दिशा मिल सकती है, इस सम्बन्ध में हम आप सभी का आशीर्वाद चाहते हैं ।

मालवी भाषा में संवेदना हैं, संप्रेषणीयता है, जिससे हम देश के सामने कहीं भी सिर ऊंचा करके खड़े हो सकते हैं । यदि हमने सिर ऊँचा कर खड़े रहने की प्रेरणा के लिए रतलाम की मिट्टी को अपने माथे से लगाया है और यहां आपने आशीर्वाद दिया है तो हम यह विश्वास करते हैं कि मालवी का भविष्य निश्चय ही उज्ज्वल है । मालवी मरेगी नहीं जिंदा रहेगी । मैंने पहले भी स्वीकार किया है और मैं कह भी चुका हूँ कि इस आयोजन के पीछे कोई राजनीतिक प्यास नहीं हैं, कोई भाषा का झगड़ा नहीं है । हमारी एक मात्र प्यास है साहित्य की, संस्कृति की । जब कहीं कोई गुजराती गीत बजता है तो हमारी आँखों में आँसू आ जाते हैं इसलिए नहीं कि गुजराती गीत क्यों बज रहा है, बल्कि इसलिए कि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
गुजराती के साथ-साथ मालवी का एकाध गीत बज जाता तो हमें कितना अच्छा लगता। जब बी. बी. सी. से कोई बंगला गीत गाया जाता है तो हमें लगता है कि क्या मालवी निर्धन है, क्या मालवी कंगाल है ? अपनी स्थिति पर हमें क्षोभ होता है और इसीलिए केवल एक दिशा ज्ञान के लिए आप लोगों से, इनसे-उनसे और जहाँ-तहाँ जो भी इस देश में दिखाई देता है उन सब से रेलों में, मेले-ठेलों में जहाँ भी हमें प्रेरणा मिल सकती है हम लेंगे और विश्वास है कि अगली बार जब हम मिलेंगे तो हम आपके चरणों में मालवी की वे कलियाँ चढ़ाएँगे जो मालवी-मेले के परिणाम स्वरूप खिलेंगी, मुस्कुराएंगी और अपनी सुगन्ध बिखेरेंगी। इस मेले के आयोजन में हमारा यही उद्देश्य निहित है। हमें बहुत कम समय मिला है अतः इस आयोजन में त्रुटियां रह जाना स्वाभाविक हैं। हम मालवी-मेला लगा कर ही मौन न बैठेंगे। हम निमाड़ में जाकर निमाड़ी के मेले लगाएँगे, बुन्देलखण्ड में जाकर बुन्देली के मेले लगाएँगे, बघेलखण्ड में जाकर बघेली के मेले आयोजित करेंगे और छत्तीसगढ़ में जाकर छत्तीसगढ़ी के पाँव पखारने की कोशिश करेंगे।

माननीय दिनकरजी के इस मेले में आने से हम सबको विशेष प्रोत्साहन मिला है। दिनकरजी से मेरा निवेदन है कि आप अपने कार्यक्रम में से मध्यप्रदेश के लिए पाँच दिन ऐसे निकाल लें जब मध्य प्रदेश में हम लोगों तथा प्रदेश की बोलियों को दिशा निर्देश देकर हिन्दी की सेवा करने का मौका दें। आज मैं अपनी सारी जिन्दगी की तपस्या आपके चरणों में अर्पित करता हूँ—आप जिस कुर्सी पर बैठे हैं वह गौरव से मण्डित है। आप हिन्दी सलाहकार न भी होते तो इसमें कोई फर्क नहीं पड़ता। देश के लिए आपने 'परशुराम की प्रतीक्षा' लिखी तो दूसरी ओर 'उर्वशी' जैसा महाकाव्य भी लिखा। आपके पास श्रद्धेय सुमनजी बैठे है जो सदैव हमारी लगाम खींचते रहते हैं और सारथी की तरह ठीक दिशा देते रहते हैं। यहाँ विनय की प्रतिमूर्ति विनयमोहनजी भी विराजे है जिनसे हमारी नई पीढ़ी को विनय के संस्कार ग्रहण करने हैं।

मुझे खुशी है कि कुछ समाचार-पत्रों ने इस अवसर पर परिशिष्ट भी निकाले। जहाँ-जहाँ मेले लगेंगे, जहां-जहाँ तम्बू लगेंगे, वहां-वहां मैं बालकवि बैरागी मध्यप्रदेश सरकार का सर झुकाने का पूरा प्रयत्न करूंगा। मैं यहां मिनिस्टर बनकर नहीं बैठा, मैं साहित्यकार पहले हूँ, मेरा रिश्ता राजनीतिक प्यास से नहीं, साहित्यिक प्यास से है। मुझपर साहित्य का कर्जा है उस कर्ज को चुकाने के लिए एक मिनिस्टर के नाते आपका आशीर्वाद मांगता हूँ। एक मिनिस्टर के नाते मैं पूरा-पूरा प्रयत्न करूंगा कि जहाँ-जहाँ और जिस-जिस जगह ऐसे आयोजन होंगे बोलियों के चरणों में मैं मध्यप्रदेश सरकार की भावांजलि अर्पित कराऊँगा। और अगर नहीं कराऊँगा तो ये पीढ़ियाँ मुझ पर थूकेंगी जिसे पोछने के लिए न तो मेरी माँ का आंचल आगे बढ़ेगा और न ही मेरी बीवी का।

इस अवसर पर यहां हमने एक छोटा-सा कार्यक्रम और रखा है और इसे रख कर हम संतुष्ट हैं, खुश हैं, गौरवान्वित हैं। डॉ. चिंतामणि उपाध्याय का ५० वाँ जन्म-दिवस है और नगर पालिका के अध्यक्ष महोदय तथा मेले के अध्यक्ष महोदय उन्हें अभिनन्दन-पत्र भेंट कर रहे हैं। अगर मेरा वश चलता तो मैं यह समारोह रतलाम में न होने देकर भोपाल में भाषा विभाग की ओर से कराता, सांस्कृतिक परिषद् की ओर से कराता या साहित्य-परिषद् की ओर से कराता और डॉ. उपाध्याय जैसे मनीषी के चरणों में पं. श्यामाचरण शुक्ल से नमस्कार करवाता। ये मेरे मन की बात थी, लेकिन रतलाम के लोगों ने मुझसे ये मौका छीन लिया। मध्यप्रदेश के मुख्य-मंत्रीजी उपासनीजी तथा कृष्णकांतजी व्यास जैसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
पत्रकारों का अभिनन्दन कर सकते हैं तो वे किसी न किसी दिन साहित्यकार को भी नमस्कार करेंगे और वह दिन सचमुच बहुत बड़ा होगा, बड़े ही जश्न का दिन होगा। मैं बहुत-बहुत आभार मानता हूँ आपका नगर पालिका के माननीय कोठारीजी का और सब दोस्तों का जिन्होंने किसी न किसी रूप में इस मेले में आकर इस मेले की गरिमा में वृद्धि की है। यहाँ बहुत से विद्वान एकत्रित हुए हैं, बहुत से पी. एच. डी. बैठे हैं और पी. एच. डी. निर्माता भी। लोक भाषा के क्षेत्र में कार्य करने की इस मेले से शोधार्थियों को अवश्य प्रेरणा मिलेगी।

जिन भाइयों को इस आयोजन से असंतोष हैं मैं चाहता हूँ कि वे अपनी नाराजगी को धो दें और मालवी मां के चरणों में अपने आप को समर्पित करदें।

वैरागीजी के इस प्रेरणादायी भाषण के पश्चात इस आयोजन के प्रमुख अतिथि राष्ट्र कवि दिनकरजी ने इस मेले का विधिवत उद्घाटन करते हुए अत्यन्त ही भावभीनी शब्दावली में उपस्थित मालवी प्रेमियों को सम्बोधित करते हुए कहा:—

मैथिली यानी यह सोचिये मिथिला मालव भूमि से बहुत दूर है। मैं मिथिला का रहने वाला हूँ और आप मालवा में उत्सव मना रहे हैं। कोई कारण होगा कि इस सभा का नाम आपने मेला रखा है। मैं इस मेले का विधिवत उद्घाटन कर रहा हूँ। मालवी से मेरा परिचय बहुत कम है लेकिन देश की भाषाओं और बोलियों से जो परिचय है, उस नाते मालवी से भी कुछ परिचय है। मुझे याद है कि अभी कुछ वर्ष पहले दिल्ली में किसी भाई ने मालवी का एक लोकगीत सुनाया था। वह लोकगीत एक निःसन्तान महिला के बारे में है। उस महिला को कोई सन्तान नहीं है। तो वह कहती है 'आटा पीसकर मैंने बरतनों में भर दिया है लेकिन कोई है नहीं जो मुठ्ठी में भरकर बिखेरे। बरतनों में मैंने पानी भर कर रख दिया है लेकिन उसके बिना घर उदास है उस पानी को पछीटने वाला कोई नहीं। तो उप भाषाओं की महिमा बहुत बड़ी है और जितना समय आगे बढ़ता है इन भाषाओं की महिमा बढ़ती जाती है।

मैं एक बात खुपिया आप से कह दूँ जो मेरे मन में बहुत दिन से लगी है। हिन्दी गद्य की भाषा है, बहुत प्रबल है, कविता की भाषा बहुत प्रबल है, नाटक की भाषा बहुत प्रबल है, लेकिन गीत की भाषा नहीं है। महादेवीजी ने गीत लिखे, बच्चनजी ने गीत लिखे, सुमनजी ने गीत लिखे, सब गीत छपे, चले लेकिन जनता में कोई गीत नहीं पहुँचा। हमारी चालीस साल की उपलब्धि यही है कि खड़ी बोली के गीत जनता की जबान पर नहीं चढ़े और ईसुरी की छाप जनता की जबान पर चढ़ गयी, बिश्राम के बिरहे जनता की जबान पर चढ़ गए। कोई कारण है कि उप-भाषाओं में स्वाभाविकता अधिक है। जनता अपने को अधिक पाती है इन भाषाओं में। इसलिए भाषाओं की उपेक्षा नहीं करना चाहिये, उनकी सेवा करनी चाहिए उनके मुहावरे, उनके शब्द कोषों में जमा किये जायें। लोकगीत जो हमारे सिद्ध साहित्यकार हैं वे भी पढ़ें, लोककथाओं को अच्छे लोग भी पढ़ें देहातियों के लिए ही न छोड़ें।

हिन्दी और उप-भाषाओं का सम्बन्ध मुझे लगता है कि जैसे संस्कृत और प्राकृत का सम्बन्ध था वही सम्बन्ध हिन्दी और उसकी उप-भाषाओं में है। सब लोग इस देश में प्राकृत बोलते थे। संस्कृत किसी की मातृ भाषा नहीं थी। इसलिए वह सब की भाषा हो गयी। उच्च चिन्तन के लिए, उच्च निर्माण के लिए संस्कृत और हार्दिकता के लिए प्राकृत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह रिवाज रहा था। नाटकों में जो गीत मिलते हैं, वे प्राकृत में मिलते हैं और संस्कृत इतनी उत्कृष्ट भाषा संसार में बेजोड़ भाषा आज भी उसके जोड़ की भाषा नहीं है। वह भाषा जिसमें मनुष्य जाति के प्राचीनतम ग्रन्थ विद्यमान हैं। संस्कृत की महिमा इस प्रकार समझिये कि उससे पुरानी चीज दुनिया में कहीं नहीं है। लेकिन संस्कृत में गीत नहीं लिखे जाते थे। बहुत मुश्किल से जयदेव हुए, उन्होंने गीत लिखे उनके गीत फैले जरूर लेकिन अपवाद—नियम नहीं। तो जहाँ तक साहित्यिक क्षमता का प्रश्न है मेरा ख्याल है कि हिन्दी और उसकी उपभाषाएँ साथ-साथ चल सकती हैं और उपभाषाओं में साहित्य निर्माण का काम हो इससे हिन्दी की कोई क्षति नहीं है। क्षति—जब तक साहित्यिक कार्य कीजिए, तब तक उपभाषाओं से हिन्दी की क्षति नहीं हो सकती। प्राकृत सब बोलते थे लेकिन देश भर में हिन्दी का भी वही हाल है।

हिन्दी किसकी मातृ भाषा है, मेरी माँ हिन्दी नहीं बोलती, मेरे लड़के की माँ भी हिन्दी नहीं बोलती और यह समझिये कि जब-जब मैं मैथिलीशरणजी के यहां जाता था बुन्देलखण्डी बोलता था। टण्डनजी बोलते थे हिन्दी, लेकिन अवधी को नहीं छोड़ते थे तो **इस प्रकार सारे देश में हिन्दी जहाँ है उसके नीचे एक और भाषा है जिस भाषा में हम घर में बोलते हैं और बात करते हैं और सार्वजनिक रूप से हम हिन्दी का इस्तेमाल करते हैं।** शायद दिल्ली अपवाद हो तो हों उनके यहां, उनकी हिन्दी दो भाषायें हो सकती हैं। तो आसाम से लेकर और गुजरात तक मेरे ख्याल से एक ही भाषा है लेकिन उसका कोई निश्चित नाम नहीं हो सकता। इसलिए उसे अनेक नामों से पुकारते हैं। इसमें गुजराती है, राजस्थानी है, बृजभाषा है, बुन्देलखण्डी है, मिथिला है, भोजपुरी है, असमिया है, बंगला है और हिन्दी एक विचित्र भाषा है जिसने आसाम से लेकर गुजरात तक को जोड़ रखा है।

हिन्दी की पूर्वी सीमा बिहार—बिहार में जन्मे विद्यापति, लेकिन विद्यापति बंगाल के भी कवि माने गये, असमिया में भी उनका अनुकरण हुआ।

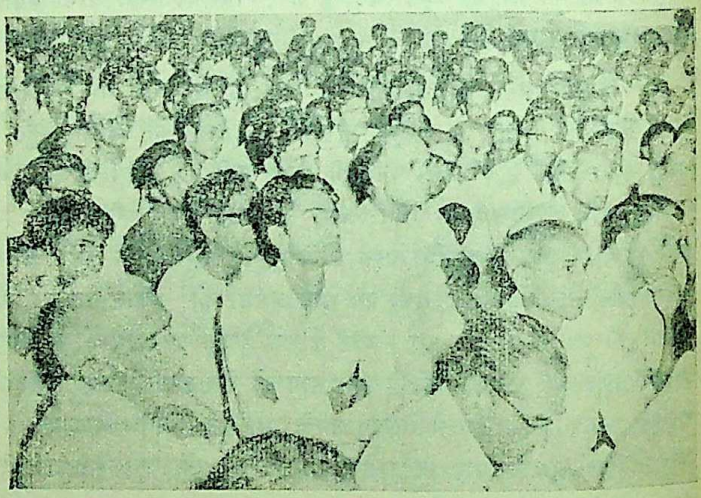

मालवी मेले में उपस्थित साहित्य सेवी डॉ. श्यामसुंदर व्यास, रामनारायण उपाध्याय, श्री निर्मोही, श्री मुकुल, श्री देवव्रत देव, श्री ललित, डॉ. पवनकुमार मिश्र, श्री जयदेवप्रसाद दुबे, प्रो. पी. डी. शर्मा प्रभृति मालवी के अनुरागियों का जमावड़ा।

हिन्दी की पश्चिमी सीमा है राजस्थान, राजस्थान में मीराबाई जन्मीं तो गुजरातियों ने कहा कि वे हमारी भी कवयित्री हैं। उनकी भाषा में गुजराती है। इस प्रकार आसाम से गुजरात तक भाषा एक है लेकिन बदलती जाती है। "कोस-कोस पर पानी बदले–आठ कोस पर बानी" आठ मील निकल जाओ तो भाषा में थोड़ा परिवर्तन आ जाता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है, लहजा बदल जाता है, फिर बदलते-बदलते बहुत बदलती जाती है भाषा। नतीजा है कि अगर गुजराती आदमी आसाम जाय और गुजराती में बोलना शुरू करे तो उसका एक काम न बनेगा लेकिन हिन्दी में बोलने से थोड़ा बहुत काम चल जाता है। इसी तरह से असमिया अगर गुजरात में आसामी बोलना शुरू करे तो उसका भी कोई काम नहीं चल सकता, हिन्दी में काम चल जायगा। यह भी एक रहस्य पूर्ण बात है कि उत्तर में ऐसा क्यों हुआ। संस्कृत की बेटियां हैं सब। तो संस्कृत

मंच पर पृष्ठ में डॉ. सुमन, डॉ. चिन्तामणि, श्री नागपाल। पार्श्व में श्री निगम, श्री कोठारी आसीन।

की परम्परा में जब नई भाषाओं का जन्म होने लगा, बोलियों का जन्म होने लगा तो एक ऐसी भाषा भी गढ़ ली गई जो बिना सीखे हुए भी गुजरात से आसाम तक समझी जा सकती है। लेकिन दक्षिण में यह बात नहीं थी। जो प्राचीन द्राविड़ भाषा थी उसके उदर से चार भाषायें प्रगट हुईं लेकिन एक भी ऐसी भाषा नहीं जन्मी जो चारों क्षेत्रों में समझी जा सके। अगर कहीं दक्षिण में भी हिन्दी की तरह जोड़ने वाली भाषा पैदा हो गयी होती तो आज देश की भाषा विषयक समस्या इतनी कठिन नहीं होती। एक हिन्दी और एक दूसरी भाषा-दो राष्ट्र भाषायें हो गयीं होती; लेकिन दक्षिण में ऐसी कोई भाषा पैदा नहीं हुई जो उत्तर में पैदा हुई। वह थी हिन्दी और हिन्दी को संस्कृत का उत्तराधिकार मिला है। संस्कृत की तरह से ही इसके भीतर चिन्तन की शक्ति, अभिव्यक्ति बहुत प्रबल है, गद्य में। कविता भी बहुत कारीगरी से लिखी जा सकती है लेकिन संस्कृत में जैसे गीत नहीं लिखे जाते वैसे ही हिन्दी में भी गीत नहीं लिखे जा सकते और गीतों के लिए सिनेमावाले जब आते हैं तो गजल के पीछे पड़े रहते हैं। गजल से थकते हैं तो फालतू काम करते हैं लेकिन जब बढ़िया चीज निकालना चाहते हैं तो लोकभाषाओं में प्रचलित जो धुनें हैं उनको लेकर गीत बनाते हैं।

हिन्दी के दो रूप हैं, एक रूप हिन्दी और दूसरा रूप उर्दू। उर्दू की जड़ लोक भाषाओं में है ही नहीं। हिन्दी की जड़ लोक भाषाओं में हैं। लोकभाषाओं से उसने कभी अपना सम्बन्ध कायम नहीं किया। हिन्दी में एम० ए० पास करने के लिए ब्रजभाषा और अवधी भी पढ़नी पड़ेगी। उर्दू में पास करने के लिए उर्दू ही काफी है। फिराक साहब कहते हैं कि यही कारण है कि उर्दू नागर भाषा है और हिन्दी ग्रामीण भाषा। माडर्नाइट्स अर्थात् जो आधुनिकता के प्रेमी हैं वे तो नागर भाषा पर बड़े लुभाते

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
हैं, लेकिन न्याय और धर्म से सोचो तो भाषा कौन सी अच्छी है—जो केवल शहरों को सम्भाले या ग्रामों को भी सम्भाले। ग्रामों को जो सम्भाले वही भाषा भारत की परम्परा की भाषा है और नगरों को सम्भालने वाली सिर्फ आधुनिकता लाने वाली भाषा है। अब एक दूसरा पक्ष है उपभाषाओं का। वह पक्ष यह है कि जब तक साँस्कृतिक और साहित्यिक कार्य होते हैं तब तक तो हिन्दी और उसकी उपभाषाओं में कहीं कोई भेदभाव नहीं रह सकता, दोनों एक दूसरे को पुष्ट करती हैं। लोक भाषाओं का क्या हाल है ? संस्कृत का आक्रमण बड़े जोर से हो रहा है लोकभाषाओं पर। मैथिली में सिर्फ विभक्तियां ही मैथिली की होती हैं। शब्द संस्कृत सम्बलित रहते हैं। लेकिन जब राजनीति घुसेगी तो दिक्कत पड़ेगी। अब राजस्थान में आन्दोलन है कि राजस्थानी को पहले साहित्य अकादमी की भाषा बनाया जाय फिर संविधान की आठवीं अनुसूची में प्रवेश कराया जाय। मैथिली का तो घोर आन्दोलन है हमारे बिहार में कि इसको संविधान में स्थान हो। इसका स्पष्ट अर्थ है कि हमको एक प्रान्त दो। साहित्य अकादमी में पहुँचानेवाली बात संस्कृत और साहित्य तक ही है पर आठवीं अनुसूची में पहुंचाने का मानी है कि हिन्दुस्तान को सर्जरी की मेज पर लिटाओ, इसको अभी और चीरेंगे। एक भीतरी अवस्था की बात है। अगर देश मालदार हो जाय, काफी धनी हो जाय और ऊपर की एकता बनी रहे तो पचास प्रान्त भी हो जायें, इससे हिन्दुस्तान का क्या बिगड़ता है। अगर पचास प्रांत अपने को पाल सकें। १००-५० साल में ५० प्रान्त हो जाएँ तो हो जाएँ लेकिन हमारे यहाँ इतिहास की एक शिक्षा बड़ी खराब है। वह शिक्षा यह है कि इस देश की आयु तभी तक रहेगी जब तक इसका केन्द्र मजबूत होता है। जब केन्द्र कमजोर होता है तो भीतर भी उपद्रव बाहर से भी आक्रमण होते हैं।

नादिरशाह जब आया था तो उससे पहले ईरान के बाजारों में यह अफवाह फैल गयी थी कि मुगल विलासी हो गए हैं, आपस में एकता नहीं है। इसलिए नादिरशाह भारत पर चढ़ दौड़ा और ऐसा विचित्र हुआ कि जीत कर चला गया, उसकी कृपा ही थी कि वह जीत कर चला गया, गद्दी पर भी बैठता, तो उसे कौन रोकता ? तो अगर केन्द्र में बल रहता है तो उसे कौन हरा सकता है ? बौद्ध साम्राज्य के समय का हाल देखिये, फिर शकों को हराया गया उस समय का हाल देखिये। हर समय जब आपका केन्द्र बलवान होता है तब देश पर आक्रमण नहीं होता है। अगर होता है तो दुश्मन को ढकेल दिया जाता है। लेकिन जब आपका केन्द्र कमजोर होता है तब आप पर मुसीबत आती है। अभी अभी कैसा विस्फोट हुआ। यानी चुनाव के पहले हमारी प्रधानमंत्री अमरीका जाने लगी थीं तो अमरीका का एम्बेसडेर हवाई अड्डे पर नहीं गया और जब वे अमरीका में उतरीं तो वहाँ भी न आया, हवाई अड्डे पर स्वागत करने के लिए। लेकिन जब देखा कि ३५० मेम्बर उसके आ गये तो ११४ करोड़ रुपये की सलामी लेकर सामने आया और चारों तरफ बढ़ाई हो रही है इन्दिराजी की, लम्बे-लम्बे लेख निकल रहे हैं। अमेरिका में यही वह चीज है। चुनाव के पहले हमारी अवस्था थी कि हम डिसइण्टीग्रेटेड थे। प्राँतों में तो संविद सरकारें थीं ही, केन्द्र में बिना कहे संविद सरकार थी। उसीका यह परिणाम था कि सारा संसार जो धन के मद में है, धन के मतवाले देश हैं, कहते थे कि हिन्दुस्तान को राईट आफ करो—इसका नाम सूची में से काटो—असली देश हिन्दुस्तान नहीं है, असली देश पाकिस्तान है। पाकिस्तान ठहरेगा हिन्दुस्तान जायगा। नाबालिग बड़े हो गये हैं दुनिया में धनी लोग। लेकिन जब हुए और केन्द्र की ताकत बढ़ी तभी सभी अपनी-अपनी जगह पर होशियार हो गये। चिण्ता उनको आज भी है लेकिन अब चिन्ता उनको हिन्दुस्तान की है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पाकिस्तान की नहीं। इस दृष्टि से सब देखने पर यह हमारी देश-भक्ति का तकाजा है कि हम अपने आप से पूछें कि हम अपनी भाषा के उत्साह में कहीं अलग प्रान्त तो नहीं मांगने वाले हैं ? और वह भी मैं कहता हूं कि देश धनी हो जाय, अमरीका की तरह से धनी हो, सब प्रान्त मजे में रहें। हर जगह गवर्नर और मिनिस्टरों का खर्चा बढ़ेगा। करो मौज मजे से राज। लेकिन आज जिस हालत में हिन्दुस्तान है, मेरी यही प्रार्थना है कि सर्जरी की मेज पर हिन्दुस्तान न लाया जाय। इसे अलग रखना चाहिए, बनने देना चाहिए, ताकत हमारी बढ़नी चाहिए। इसलिए शुद्ध शिक्षा की दृष्टि से देखा जाय तो बोलना ही पड़ेगा। शुद्ध डेमोक्रेसी तो यही है कि जिस भाषा में माँ बोलती है उसी भाषा में शिक्षा दो। अगर मालव की मातायें शुद्ध मालवी में बोलती हैं तो उस नियम से हिन्दी में शिक्षा नहीं होनी चाहिये, शिक्षा मालवी में होनी चाहिये। लेकिन एक दूसरी मुसीबत देखिये। जब हिन्दी को शिक्षा की भाषा बनाने में देश को पसीना छूट रहा है मालवी और मैथिली को जब हम शिक्षा की भाषा बनाना चाहेंगे तो हमारी क्या दुर्दशा होगी ? आप जानते हैं न कि अंग्रेजी के समर्थकों की सबसे बड़ी दलील यह है कि अंग्रेजी विश्व ज्ञान की कुंजी है, इसलिए अंग्रेजी से सम्बन्ध न तोड़ें। उस भाषा के जरिये तुम्हारे देश में संसार का ज्ञान बहकर आता है। इसलिए उस पाइप लाइन को कायम रखो और वर्तमान नीति में मैं भी इसका समर्थन करता हूं कि हिन्दी में पढ़ो, अंग्रेजी से ज्ञान लो और संस्कृत से शब्द लो यह हमारी वर्तमान शिक्षा नीति हो सकती है। अंग्रेजी नहीं रही तो हम लोग मूर्ख थोड़े ही रह जायेंगे। अपनी भाषाओं के उत्थान के लिए केवल अंग्रेजी ही नहीं, कई भाषाओं की जरूरत है। आज तो अन्तर्राष्ट्रीय संपर्क में जो व्यक्ति आता है वह ४-५ भाषाएँ जानता है। इसीलिए अंग्रेजी की जो महिमा है वह घटती नहीं है, हमारे विरोध से। सच बात है कि अंग्रेजी में ऊँचा साहित्य है, अंग्रेजी में ज्ञान भरा हुआ है। हम हिन्दी को उसकी बराबरी में लाना चाह रहे हैं कितनी कोशिश हो रही हैं। प्रत्येक प्रान्त को १-१ करोड़ रुपया मिला है कि तुम हिन्दी की किताबें निकालो। यूनिव्हरसिटी वाले लगे हुए हैं, वाइसचान्सलर लगे हुए हैं, प्रोफेसर लगे हुए हैं। सरकारों ने ग्रन्थ अकादमियां कायम की हैं लेकिन तब भी दिक्कतें बढ़ रही हैं। तो क्या अगर किसी के मन में यह हो कि हम मालवी में शिक्षा देने लगें, प्रायमरी शिक्षा तो दे ही सकते हैं, प्रायमरी शिक्षा देने में कहीं कोई कमी नहीं हैं। लेकिन उच्च शिक्षा कैसे दें। ऊँची शिक्षा देने के लिए मालवी में अच्छे लेखक चाहिए, अच्छे प्रेस चाहिए, मालवी में पाठक चाहिए। मालवी को पोषण मिलना चाहिए समाज से। जो पोषण अभी हिन्दी तक को नहीं मिल रहा है। गीत कवित्व की भाषा तो बहुत सी भाषायें हैं और एक सिद्धान्त यह भी है कि दुनिया की कोई भाषा नहीं हैं जिसमें यूनिवर्सिटी न चल सकती हो। यह तो भ्रम ही नहीं करना चाहिए कि दुनिया की कोई भी भाषा इतनी असमर्थ नहीं है कि उसमें यूनीवर्सिटी शिक्षा न दी जासके। लेकिन शिक्षा देने के लिए तैयारी की बहुत बड़ी जरूरत है, बहुत काम करने की जरूरत है और अब हम लोग एक काम कर रहे हैं कि हिन्दी को पुष्ट कर दें। उस काम के लिए मुझे पूरा भय है कि यदि हिन्दी में ज्ञान–विज्ञान की पुस्तकें नहीं आईं और हिन्दी क्षेत्रों में अगर मौलिक वैज्ञानिक उत्पन्न नहीं हुए तो दिनकर और दुष्यन्तकुमार के चलाने से हिन्दी भाषा बनने वाली नहीं टिकने वाली नहीं है। ऐसी बहुत सी भाषायें हैं जो विज्ञान की दौड़ में आगे नहीं बढ़ सकीं, पीछे रह गयीं। अब गीत-कवित्व तो बहुत चलता है, बाकी कुछ नहीं। बहुत से देश हैं जो अपनी भाषा में कविता तो लिखते हैं लेकिन विज्ञान विदेशी भाषा में पढ़ते हैं क्योंकि उनकी भाषा में है ही नहीं। अफ्रीका वालों की मुसीबत हो रही है। तो इस युग

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में बहुत सी भाषायें पीछे छूट गयी हैं। हिन्दुस्तान की कई भाषायें आगे बढ़ने की कोशिश में हैं और उनको उम्मीद करनी चाहिए कि अपनी भाषाओं को रास्ता मिलेगा, मौलिक वैज्ञानिक उत्पन्न होंगे, विज्ञान को भाषा पचा सकेगी, उस दृष्टि से उप भाषाओं के उपयोग का मैं समर्थन नहीं करूंगा। प्रायमरी शिक्षा तक तो चल सकता है लेकिन मैं इसकी बहुत जोरदार सिफारिश करूंगा कि उप भाषाओं में साहित्य की रचना की जाय, उपभाषाओं के पत्र निकाले जायें, उपभाषाओं के मुहावरे, उप भाषाओं की अभिव्यक्तियां, इनके कोष बनाये जायं जो हिन्दी विद्वानों को उपलब्ध हों। हिन्दी में शब्दों की अभी भी कमी है। प्रान्तीय भाषाओं, उप भाषाओं, जनपदीय भाषाओं में ऐसे-ऐसे शब्द हैं जिनको देखकर याद पड़ता है कि इनका प्रतिशब्द हिन्दी में तो है ही नहीं। ऐसे शब्दों का कोष निकालना चाहिए जो शब्द हिन्दी में नहीं हैं और उप भाषाओं में है। उनका प्रयोग करने से हिन्दी का कल्याण होगा। हिन्दी और उप भाषाओं के बीच संघर्ष का कारण एक ही देखता हूँ कि वह राजनीतिक-प्रेरणा से आई तो एक प्रान्त की मांग हो जाती है। प्रान्त की मांग अभी ५० वर्ष नहीं करनी चाहिए। ५० वर्ष में देश सुखी हो जायगा, धनी हो जायगा तब मुमकिन है कि ५० प्रान्त भी हो जायें तो सम्भाल लें, अभी नहीं सम्भाल सकते। अभी तो सब जगह अभाव दिखाई पड़ता है। ज्यों-ज्यों प्रान्तों की संख्या बढ़ती जाती है त्यों-त्यों केन्द्र की शक्ति कम होती है। ज्यादा नहीं लेकिन क्षीण अवश्य होती जाती है। इसलिए केन्द्र की शक्ति यदि बनी रहेगी—पहले देश रहेगा—तभी तो प्रान्त रहेंगे। देश की स्वाधीनता बने, देश की शक्ति बढ़े और देश में, अपने देश में ऐसी भाषायें तैयार हो जायँ जिनसे शिक्षा और शासन पूरी तरह से चल सके।

मैं आप सब मालवी के प्रेमियों को धन्यवाद देता हूँ कि मुझे छोटा सा मौका दिया कि मैंने यहां आकर अपनी श्रद्धांजलि मालवी के चरणों में अर्पित की।

इसी अवसर पर विक्रम विश्व विद्यालय के कुलपति माननीय डॉ. शिवमंगलसिंह "सुमन" ने अपनी भावस्निग्ध वाणी से रस वर्षा करते हुए इस मेले को आशीर्वाद दिया और कहा कि डॉ. चिन्तामणि उपाध्याय का सम्मान मालव भूमि की साधना का सम्मान है। इस रूप में हर बार हर आदमी दस-बीस वर्ष बाद भी कहेगा कि बाल कवि बैरागी ने एक काम तो अच्छा किया बाकी काम का हिसाब तो दूसरे लोग लेंगे। मालव की गौरवपूर्ण गरिमा का गुणगान करते हुए डॉ. सुमन ने कहा कि मालव भूमि की स्थापना आज से ५००० वर्ष पहले हुई है। संस्कृत के अलावा गुणाढ्य की 'बृहत्कथा' मालवा में ही लिखी गई थी। उन्होंने कसम खाई थी कि इस कथा को मैं न संस्कृत में लिखूंगा और न प्राकृत में यहाँ की उस भाषा में लिखूंगा जो मन्दसौर के आसपास दशनाम या अवन्ति दशपुर के नाम से बोली जाती है। भारत का सम्पूर्ण कथा साहित्य उसी बृहत् कथा का ऋणी है और ऋणी है इस मालवा की मिट्टी का। क्षेमेन्द्र की 'बृहत् कथा मंजरी' और सोमदेव के 'कथा सरित्सागर' दोनों ही की जीवन धारा गुणाढ्य की 'बृहत् कथा' से संचरित है।

मालवा के प्रशस्त हरे-भरे मैदान यहां की मादक वनश्री आत्म विभोर कर देने वाली है। मंदसौर की तरफ या जब कभी अफीम के खेतों की रंगीनी दिखती है—खेतों की ऐसी शोभा शायद दुनियां में कहीं नहीं होगी। इतने सुन्दर रंग बिरंगे खेत या तो कश्मीर में केसर के होंगे या फिर मालवा में अफीम के फूलों के। गोस्वामी तुलसीदास ने भी अपने 'मानस' में मालवा का स्मरण किया है। वे लिखते हैं—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'काशी मग सुरसरि क्रम नाशा।
मरु मालव महिदेव गवासा।।'

इस दुनियां में एक ओर काशी है तो दूसरी ओर मग-मगहर भी है जहाँ मरने से नर्क प्राप्त होता है। कबीरदास ने चैलेंज दिया था कि—

'जो कबीर काशी मरे तो रामहि कौन निहोर'

तो वे मगहर में जाकर मरे। काशी, मग, सुरसरि (गंगाजी) है तो कर्मनाशा भी है इसी प्रकार जहां एक ओर रेगिस्तान है, मरु-भूमि है, तो दूसरी ओर मालव जैसा हरा भरा प्रदेश भी हैं। महिदेव ब्राह्मण हैं तो गवासा यानी कसाई भी है। भारतवर्ष में सबसे सुन्दर हरियाली यदि कहीं मिलती है जो आँखों में भर जाती है तो वह मालव की है जिसका प्रमाण गोस्वामीजी जैसे महाकवि 'मरु मालव मही देव गवासा' के रूप में प्रस्तुत करते हैं।

मालवी बोली बड़ी समृद्ध है, इसमें शब्दों का विपुल भण्डार है। मेरे हाथ में इस समय 'वीणा' का अंक है जो बहुत सुन्दर निकला है उसमें मालवी गहनों पर जो शब्दावली दी गई हैं उसकी ओर भी दृष्टिपात कीजिए कैसे-कैसे शब्द है हमारी मालवी में! बहुत सुन्दर अंक निकाला है 'वीणा' का। मालवी भाषा के सम्बन्ध में जरा देख लीजिए उसके शब्द कोष को जिसने मेरा ध्यान आकर्षित किया है।

आप कहीं खेतों में काम करते लोगों को देखिए तो आँखों के आगे एक रंगीन चित्र उभर आता है। मालवा के अपने गीतों से, संगीत से जो स्वर लहरी फूटती है वह बड़ी हृदयोत्तेजक होती है। बैलगाड़ी में बैठ कर जब कार्तिक मेले में लोग स्नान करने आते हैं तो उनकी शोभा निराली ही होती है। यहाँ के सौन्दर्य में तीन-तीन रंगीन कलर हैं। यहां की प्रकृति के, यहाँ की खेती के और यहां की मिट्टी के। यह मिट्टी ऊपर से काली और भीतर से गोरी है। काली मिट्टी में कपास पैदा होती है जो सफेदी पैदा करती है। साधना वही है जो ऊपर से काली दिखाई देती है और भीतर से गोरी। अन्तरात्मा गोरी है। सात्विकता जिससे विकीर्ण हो वह भावना यहाँ है।

मालवा के सब से बड़े कवि कालिदास थे। उनका प्रत्येक श्लोक हीरे का टुकड़ा है, और पूरा काव्य हीरे की माला हैं गुथी हुई; किन्तु उससे भी बड़ी महिमा है यहाँ के लोक-गीतों की। कालिदास की कविता में लोकगीतों की तरह से अविकल कल-कल करती हुई निर्झर की धारा नहीं है वह तो लोकगीतों में ही पाई जा सकती है।

सच्चे अर्थ में मेले का रूप देने के लिए, मेला माने जहाँ हम लोग मिलते है, हृदय से हृदय मिलता है, आत्मा से आत्मा मिलती है, ऐसा ही वातावरण यहाँ उपस्थित हुआ है। न किसी को भूख लग रही है, न प्यास लग रही है, सभी तन्मयतापूर्वक बैठे सुन रहे हैं। आज यह जो मालवी मेला हुआ है इसकी परम्परा आगे प्रवहमान हो, दोनों रूपों में। एक रूप में जैसा बैरागीजी ने कहा हम चाहते हैं जितनी भाषाएँ हैं सभी का मार्दव प्रकट होना चाहिए। हमारे लोकगीतों का विधिवत अध्ययन हो और जो नई पीढ़ी आ रही है मालव मिट्टी को समझे। उसको समझ उसके मार्दव को खड़ी बोली में लाए। खड़ी बोली को राष्ट्रभाषा बनाने के लिए यह उपकरण जरूरी है। मालवी, निमाड़ी, बुन्देली, बघेली, छत्तीसगढ़ी, गुजराती और मराठी सब के मार्दव को यदि निष्ठा के साथ खड़ी बोली में पूरित किया जाय तो वह भारत की आत्मा की भाषा बन जाएगी। यहाँ महामालव का नारा बुलन्द नहीं किया जा रहा है। यहां मालवी के मार्दव से खड़ी बोली की खराश मिटाई जा-रही है उसको और भी मधुर, कोमल प्रयोगात्मक बनाने का प्रयत्न चल रहा है। यही इस मेले की विशेषता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कालिदास उज्जैन के थे कि नहीं—मालवा के थे कि नहीं—यह कोई नहीं जानता न कहीं लिखा है कि अमुक जिले में पैदा हुए थे, उनकी पैदाइश की तारीख अमुक थी। किन्तु कालिदास ने सबसे अधिक लिखा है मालवा पर इससे लोग कहते है कि वे अवश्य ही यहाँ के रहे होंगे।

जिन आंखों से कालिदास ने मालवा की भूमि को देखा है हमें उन आंखों को वापस लाने की जरूरत है नहीं तो मालवी मेला निरर्थक होगा। मानस हम इसीलिए पढ़ते हैं कि तुलसी की वह आंख हमको मिल जाए जिसने भारत को एक सूत्र में आबद्ध देखा था। हम चाहते हैं कि मालवी मालवा का वर्णन करें, मैथिली मिथिला का, अवधी अवध का तो सब मिलकर विराट भारतवर्ष का वर्णन उसमें होगा और भारत माँ के सौंदर्य को उसमें सराहा जाएगा।

रतलाम में मालवी मेला यहां के प्रेमी जनों ने, सुहृदों ने, रसिकों ने और संस्कृति प्रेमियों ने आयोजित कर यज्ञ की वेदी प्रज्वलित की है। मैं अध्यक्ष के रूप में आव्हान करना चाहता हूँ कि वे इस वेदी की अग्निशिखा को सतत् प्रज्वलित रखें।

आज के ही दिन मालवी के मूर्धन्य साहित्यकार साधुमना डॉ. चिंतामणि की आयु की अर्द्ध शताब्दी पूरी होती थी, अतः उनका अभिनन्दन इस मेले की विशिष्ट उपलब्धि थी। मालवी मेले के अध्यक्ष ने उन्हें अभिनन्दन-पत्र अर्पित करते हुए कहा 'आज का स्वर्णिम पावन दिवस हमारे लिए अत्यन्त ही गौरवपूर्ण है। आपके महिमामय जीवन की पचासवीं वर्ष ग्रंथि के मंगल पर्व की इस पुण्य वेला में हमें आपके तपःभूत यशोमय सारस्वत कर्तत्व के अभिनन्दन का सौभाग्य प्राप्त हो रहा है, आप केवल उज्जैन या मालवा के ही नहीं अपितु सम्पूर्ण हिन्दी भाषी क्षेत्र के लिए गौरवमय आलोक स्तम्भ हैं। आपने एक निष्ठ जीवन के विगत तीस वर्षों से मालवी की मशाल के द्वारा जो साहित्य ज्योति प्रज्वलित कर रखी है वह शत सहस्त्रों प्रतिभाओं को आलोकदान दे चुकी है। आज यह मालवी मेले का मण्डप धन्य हो गया है जहां राष्ट्रकवि दिनकर, कुलपति डॉ. सुमन एवं आचार्य विनयमोहन शर्मा जैसे सारस्वत पुत्रों का हमें सानिध्य प्राप्त हो रहा है। यह सुयोग रतलाम के इतिहास में स्वर्णाक्षरों में अंकित रहेगा।

अपने अभिनन्दन के उत्तर में मालवी गंगा के भागीरथ डॉ. चिन्तामणि ने इसे सभी गुरुजनों का प्रसाद स्वीकार किया और जीवन निर्माण की दिशा में उसी प्रसाद को पाथेय मानते हुए अभिनन्दन-पत्र ग्रहण किया।

इस मालवी मेले की प्रथम संगोष्ठी अपरान्ह में ३ से ५-३० के मध्य आयोजित हुई। गोष्ठी का विषय था "मालवी शोध संस्थान"। डॉ. शिवसहाय पाठक ने विषय का प्रवर्तन करते हुए मालवी शोध कार्य के परिप्रेक्ष्य में मालवी शोध संस्थान की आवश्यकता पर जोर दिया। डॉ. राममूर्ति त्रिपाठी ने शोध की दिशाएँ एवं तद् सम्बन्धी कार्य की गुरुता पर प्रकाश डाला। डॉ. उदयसिंह भटनागर ने अपने महत्वपूर्ण शोध निबन्ध "मालवी के सन्दर्भ में" का वाचन किया। अन्त में इन्दौर के शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय के हिन्दी विभाग के अध्यक्ष प्रो. परमेश्वरदत शर्मा ने शोध संस्थान की रूपरेखा एवं सम्पूर्ण कार्य योजना भी प्रस्तुत की। प्रथम दिवसीय यह गोष्ठी अत्यन्त ही सफल सिद्ध हुई।

रात्रि को ९ बजे से सांस्कृतिक कार्यक्रम के अन्तर्गत मालवी लोकगीत, लोकनृत्य आदि के सफल मनोरंजक कार्यक्रम सम्पन्न हुए।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

द्वितीय दिवसीय कार्य गोष्ठी का विषय था "मालवी भाषा एवं साहित्य।" आचार्य विनयमोहनजी की अध्यक्षता में इस कार्य गोष्ठी का कार्यारम्भ हुआ। विषय प्रवर्तन 'वीणा' के सम्पादक श्री मोहनलाल उपाध्याय 'निर्मोही' ने किया। श्री 'निर्मोही' ने 'मालवी-कोश' की संरचना प्रक्रिया पर व्यापक प्रकाश डालते हुए कहा कि इस विशाल कोश के निर्माण कार्य के लिए मालवी भाषा-भाषी विद्वान एवं प्रबुद्ध वर्ग इस कच्चे माल के संग्रह में योगदान दें। राष्ट्र भाषा के विपुल भण्डार की संपूर्ति हेतु यह कार्य अत्यावश्यक है। डॉ. बन्शीधर ने अपने शोधपूर्ण निबन्ध में मालवी भाषा और उसके साहित्य पर प्रकाश डालते हुए इस बात पर अधिक बल दिया कि पुरानी मान्यताओं को छोड़कर हमें मालवी के सन्दर्भ में अब नई मान्यताओं की खोज करना पड़ेगी। खण्डवा के लोक साहित्य मर्मज्ञ भाई रामनारायण उपाध्याय ने अपने सारगर्भित निबन्ध में मालवी और निमाड़ी के सम्बन्धों पर तुलनात्मक दृष्टि से प्रकाश डाला। डॉ. पवनकुमार मिश्र ने "मालवी काव्य की दिशाएँ" विषय पर अपना महत्वपूर्ण निबन्ध वाचन किया। आपने बताया कि आधुनिक मालवी काव्य अपनी प्रवृत्तियों में अधिकतर लोक अंचल की सौंधी और सरल अनुभूतियों का ही आगार है और इसी कारण उसकी भाव-भूमि का अधिकांश श्रृंगारपरक अथवा परिवार प्रधान या और भी सीमित शब्दों में कहें तो नायिका प्रधान है, जिसमें सास–बहू, ननद, जेठानी और सायबा की भूमिकाएँ प्रमुख हैं। इन श्रृंगारपरक रचनाओं का रूप गीतिकाव्य का तथा इनमें नायिका के मनोभावों का, उसकी विराट व्यथा का तथा उसके सौन्दर्य आदि का ग्राम सुलभ वर्णन अधिक है। जिसकी पृष्ठ भूमि रोमांटिक है और आधुनिक संस्पर्श से कोसों दूर है। आधुनिक मालवी कविता त्यौहारों तथा ऋतु गीतों एवं वन्दना गीतों ही से अधिक सम्बद्ध है। पाक, चीन संयुक्त हमले के समय कुछ ओजपूर्ण गीत लिखे गए। इसके अतिरिक्त कुछ कथा परक काव्य भी उपलब्ध होता है। कविता का अच्छा स्वरूप व्यंग्य में उभरा है। योजना, मंच, परिवार–निप्रोजन आदि पर भी रचनाएँ लिखी गई है। आपने अपने निबन्ध में इस बात पर जोर दिया कि आधुनिक मालवी काव्य की दिशाएँ अधिक स्पष्ट नहीं हैं। कवि सम्मेलनों की ललक ही इन रचनाओं की दिशा है। उसे इस घरू परिवेश, मंचीय परिवेश से ऊपर उठने की आवश्यकता है।

श्री रमेश 'चातक' ने 'मालवी कविता में युगबोध' पर अपना निबन्ध वाचन करते हुए कई महत्वपूर्ण पहलुओं और कमजोरियों पर प्रकाश डालते हुए अन्त में आशा व्यक्त की कि, "मालवी काव्य-साहित्य उसके भाषा रूप की रक्षा कर सकेगा, युगीन काव्य प्रवृत्तियों को आत्मसात कर स्तर विशेष की रेखाएँ छू सकेगा। उसका प्रयोजन सामान्य न होकर विशिष्ट होगा जो लोक जीवन की चेतना को व्यक्त कर सकेगा।" अन्त में डॉ. श्यामसुन्दर व्यास ने 'आधुनिक मालवी कविता' की प्रगति पर संतोष प्रकट करते हुए कहा "मालवी का गौरव आँगन का तुलसी चौरा बनने में अधिक है, किसी अधुनातन बैठक की शोभा बढ़ाने वाले केम्टस बनने में कम। अपने संस्कारो एवं परिवेश में उभरकर नवीन दृष्टि रखना एक बात है और अपने संस्कारों एवं परिवेश को खुरचकर फेंक देना दूसरी बात। प्रथम उसका जीवन है, द्वितीय मृत्यु।"

कुल मिलाकर यह द्वितीय गोष्ठी अत्यन्त ही सफल रही जिसमें कुछ तेज तल्ख बातें भी कही गई और सहज स्नेह की रस वर्षा भी हुई। भाई बालकवि बैरागीजी ने मालवी कविता और मंच पर प्रकाश डालते हुए लोकधुनों की रक्षा पर जोर दिया और स्वतः निर्मित लोक धुनाधारित गीतों की पंक्तियाँ भी सुनाईं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गोष्ठी के अन्त में आचार्य विनयमोहनजी ने अपने सारगर्भित भाषण में मालवी की कई ज्वलन्त समस्याओं को उठाते हुए गोष्ठी का अत्यन्त ही सफल समापन किया।

द्वितीय दिवस की तृतीय संगोष्ठी डा. भागवतशरण उपाध्याय के सभापतित्व में आयोजित हुई। प्रो. दलाल ने गोष्ठी के विषय "मालवी-लोक-कला एवं संस्कृति" का प्रवर्तन करते हुए कला का संक्षिप्त इतिहास प्रस्तुत किया। आपने इस प्रवर्तन भाषण में मालवा के शिलालेखों के अध्ययन पर अधिक बल दिया। मालवी के लोक प्रिय कवि श्री नरहरि पटेल ने मालवी लोक संगीत एवं धुने निबन्ध का वाचन करते हुए इस बात की ओर ध्यान आकर्षित किया कि मालवा का आदमी जितना बोलता नहीं उतना गाता है। मालवी लोक धुनों में अन्तरे नहीं, सम है। यही इसकी सांस्कृतिक विरासत है। आपने इसी सन्दर्भ में अमीरखां की नायकी के स्थायी रूप की ओर भी संकेत किया। श्री तेजसिंह गौड़ ने 'मालवी-लोक-कला के विभिन्न रूप और संजा', श्री लक्ष्मीकान्त मण्डलोई ने 'मालवा का सांस्कृतिक जीवन' और श्री कन्हैयालाल गौड़ ने 'मालवी लोक गीतों' पर अपने शोधपूर्ण निबन्ध पढ़ें। अन्त में भारतीय इतिहास एवं कला के मर्मी, अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त विद्वान डॉ. भगवत शरण उपाध्याय ने अनेकों उदाहरणों द्वारा कला के स्वरूप एवं दिशाओं पर व्यापक प्रकाश डाला। द्वि दिवसीय बौद्धिक चर्चाओं से संयुक्त ये गोष्ठियां अत्यन्त ही सफल रहीं। रात्रि को मालवी कवि सम्मेलन का सफल आयोजन हुआ जिसमें मालवा के अंचल से आए नए एवं पुराने कवियों ने अपनी विविध रसों से पूर्ण कविताओं की रस वर्षा की।

कुल मिलाकर मालवी मेला अत्यन्त ही सफल रहा। बोलियों और लोक भाषा के क्षेत्र में यह मेला प्रथम दस्तावेज है। इधर वर्षों के बाद एक मुझे ऐसे आयोजन में भाग लेने का अवसर मिला जिसकी छाप हृदय पर अमिट बनी रहेगी। अब देखें कब, निमाड़ी, बघेली तथा प्रदेश की अन्य भाषाओं के मेले जुड़ेंगे और फिर वही रस-वर्षा और उसी आल्हादपूर्ण वातावरण में डूबने का सौभाग्य प्राप्त होगा। इस दिशा में रतलाम में लोकभाषा यज्ञ की जो मशाल प्रज्ज्वलित हुई है उसे प्रदेश के कोने-कोने में ले जाने का कार्य लोकांचल के सजग प्रहरुओं का ही है।

—'निर्मोही'

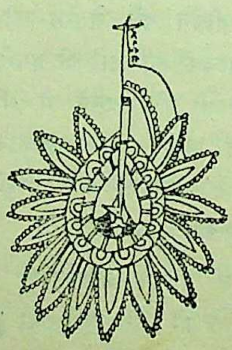

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रतलाम को मालवी मेलो

या तो आप भी मानोगा के हाल में हुवो तारीख ८, ९, जून को मालवी मेलो आखा सन्सार को एक अनोखो मेलो थो जिनमें दिनकरजी, सुमनजी..... विगेरे देश का जाण्या ने मान्या हुआ महारथी होण ने मालवी के उठावा की ऊँची से ऊँची बात दो दन तक अपणा अनुभव, अध्ययन ने सूझबूझ का मान से घणाज सुन्दर ढंग से समझई । आज का मालवी कवि होण का मन में गंगा-जमना की निर्मल जलधारा वेवई दी ।

भाई मदनमोहनजी व्यास ने ता. २१-६-७१ में वीना मेला का कामकाज को सुन्दर मालवी बोली में हूबहू चित्र खींची ने, जो नी जाई सक्या था विनके भी वीनाज आनन्द को भास करई दियो, ईके वास्ते भाई व्यासजी के घणो घणो धन्यवाद, पर इनके धन्यवाद देवा के पेलां मां सरसत का वीना सपूत सन्त, मालवी मेला का विधाता भाई वैरागी के धन्यवाद दिया विगर नी रूंगा, जी ने बात की बात में इतरो मोटो मेलो अच्छी से अच्छी व्यवस्था के साथे बड़ा से बड़ा विद्वान होण से भरीने बतईद्यो, ने हरीश निगम जैसा सूझबूझ वाला संयोजक ने काम करवा वाला होण का सहयोग से विन में कोई कसर नी रेवा दी ।

आखा संसार में भारत इतिहास, भूगोल, सभ्यता ने मानवता की गिणती में मान्यो हुओ देखे है जिनमें मालवा को भू-खण्ड हिरदा की तरे महत्वपूर्ण है, जीकी बोली मालवी है, जिनमें लोच है, मिठास है, सागर में गागर भरवा की शक्ति है, ने जीकी रचना में जादू की तरे चटपट चमत्कार बतई देवा की खूबी है ।

पच्चीस तीस बरस से म्हारे भी ई को घणो अनुभव हुयो है । २०-२२ बरस पेंला की बात है के शाजापुर तुलसी-जयन्ति पर हमने एक राजस्थानी कवि के बुलाया था विनने राजस्थानी रचना होण सुणई । ऐसो आनन्द बरसायो के म्हारे पास एक विद्वान वडोल अपणा पड़ोसी से बोल्या के मालवी में आज का हिन्दी कविहोण कविता करवा लागे तो मालवी भाषा राजस्थानी से भी ज्यादा आनन्द बरसावे, या बात म्हारा गले उतरी ने अपणी हिन्दी रचना सुणावा को विचारा छोड़ी वांज मालवी में एक रचना लिखि ने जो सुणई तो सभी दंग हुईग्या ने चारीमेर की वाहवाही ने म्हारी हिम्मत सौ गुणी बढई दी वी का दो चार बोल ईने परमाणे था:—

को तो भिडू ऐसो कूण कवि हुओ धरती पर
जी की रामचरित मानस आज घर घर में छाई है ।
जी की रामचरित माणस भण्या, वे भण्या सब में,
बातचीत रोज की में केणावत बण आई है ॥
जी की कविता को अरथ मूरख भी समझीले,
ने बड़ा बड़ा भण्या, के भी चक्कर नत दईरी है ।
जी की काव्य रचना ने अलंकार, रस सघला,
जगत भर की कविता होण से टक्कर नत लईरी है ॥
जीने राजनीत, धरम, भक्ती का मारग के,
घणी सूदी सादी सरल रीत से सिखायो है ॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीने आखा सागर के भरद्यो है, गागर में,
ऐसो रत्न तुलसी मां हुलसी ने जायो है ।।
पर पेंला तो होणी हुलसी सरीखी माय,
फेर रत्नावली सरखी होय लुगई श्याणी ।।
विषयान्ध मस्ती जी ने बदली दी भक्ती में,
अपणा संसार को सुख करके धूल घाणी ।।

(अपूर्ण जुगल-विनोद से)

फेर तो मालवी पर जो कलम चली तो घड़ल्ला (कुंवारी कन्या होण का मौसमी गीत) छल्ला (छोरा होण का लोकगीत) बईरा होण का सब तरे का गीत बखत-बखत की रचना होण जैसी जैसी सुणातो गयो म्हारो ने जनता को मोह ने आनन्द बड़तोज गयो फेर आठ दस रचना होण 'जुगल विनोद' पुस्तक रूप में छपई । म्हारो परिचय शीर्षक रचना में मालवा का सघला कवि भाई होण से निवेदन कर्यो के:—

मालव पति विक्रम, कालिदास की तरसीरी क्यों बोली आज ?
वीनी मालवी के क्योंनी ? साहित्य जगत में भेजां आज ?
घडल्या, छल्ला भोला सा जो थोथा गीत गवईर्या है ।
ने रूढ़ीवाद का चक्कर में, नत भोला लोग लुटईर्या है ।।
सघली धुन में नत नवा गीत, विनको बोली में देवां हम,
सांचा कवि, सांचा जन सेवक को, काम योज करलेवां हम ।।

म्हारा छल्ला भोला होण भी आसपास के केई गांव होण में गवईर्या है, जिनको नमूनो बांचो:—

१ भारत मां की वेड़ी टूटी रे, अपणा जाग्या भाग,
अब तो कोई परदेसी को, नी लागवा दां लाग, छल्लो भोलो—

२ छल्ला, घरीरी थारी तोपांरे, बन्दूकां, तरवार,
हमने आन्दोलन बम फेकी, थारे कर दियो देस बाहर । छल्लो—

३ छल्ला, स्वराज तो लईल्यो रे, पर करनो नी याद,
ऐसा पड़ीरिया चक्कर में, के दन पर दन बरबाद । छल्लो—

४ छल्ला, त्याग ने तपस्या का, अबनी भुनावां चेक,
ईसे कांई भी फल नी पायो, हुईग्या एक का अनेक । छल्लो—

चाय का बनड़ा ने केई की चाय छोड़इदी, छाछ का गीत ने केइ को दूध बेचाणो बन्द करी पाछा छाछ का घमड़का सुणवा में आया, मामेरा की रचना ने केई मामेरा फेरीद्या, विगेरे-विगेरे ऐसी घणी थोड़ीक रचना देखवा में आई जिनने तुरत ज चमत्कार नी बतायो होय ।

मालवी रचना ऐसी प्यारी भी लागे है कि मालवी समझवा वाला ने नी समझवाला सघलाज सुणी ने झूमवा लागे ने वाह-वाह करी उठे । होणो चइये हाव-भाव से केवा को ढंग ने कंठ, ईनीज खूबी से भाई बालकवि बैरागीजी, हरीश निगमजी, सुलतान मामा, भाई गिरवरसिंहजी भँवर की रचना होण भारत की सीमा पर पोंची गी है । महिदपुर वाला घतूराजी भी मामूली कवि नी है । ऐसा रुस्तम होण से मालवो भरपूरज है, चइये जाणकार ढूंडवा वालो ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जुगल विनोद के पीछे म्हने मालवी में होली रचना ने 'कंस-वध' छपाया जो छपते देर लगी थी पर बिकते देर नी लगी। पर अपणी पुस्तका को मोल लेते भी लेखक के घणों अटपटो लागे ईना सबब दूसरी बखत जनता की जोरदार मांग होते भी म्हने नी छपई ने किसी तरे 'चाय की प्याली', 'सत्यनारायण की कथा', 'कलियुग राणी (चाय)की कथा' मालवा का लोकगीत, श्रीमद्भगवतगीता को मालवी भावानुवाद विगेरे १३-१४ पोथी ने तीन नाटक कापी होण मेज सड़ीरिया है, कथा जिनके छपवा की केई लोग बाटज देखीरिया है। हिन्दी में भी दो तीन नाटक है, नवीन मिटरिक प्रणाली भी छपाई थी जो हाथे हाथ बिकी गई।

रतलाम का मालवी मेला में सब काम हिन्दी मेंज हुवो, यो म्हारे थोड़ोसो अखर्यो थो, ने वेसे भी वा बात घणी अखरी थी जदे मंच पर से एक मोटा महारथी मिजमान बोल्या के मालवी में अभी तक कोई ठोस रचना नहीं लिखी गई। खास कर विनका मरम के मिटवानेज म्हने थोड़ासा नमूना ऊपर दिया है, शायद विनसे विनके सन्तोषज होगा ने ऐसा केई नमूना होण म्हारा दूसरा भाई होण के पास भी होगा जो समय-समय पर सामने आता रहेगा। मालवी के उठावा वास्ते ईको व्याकरण ने शब्दकोष तो वणनोज चईये पर लाखों रुपया खरच करवा को ने वा भी शासकीय स्तर पर होवा की योजना भी म्हारी समझ में कम आई क्यूं के कदे नो मण तेल होगा ने कदे राधाजी नाचेगा, ने अपणा घोड़ा की लगाम अपणाज हाथ में रखवा की नीत पर हूं भरोसो करूं हूं। ऐसे तो म्हारा कर्मठ भाई श्री बैरागीजी ने विनका साथी होण के वास्ते कोई काम कठण नी है। आम का आम ने गुठली का दाम की बात मुजब म्हारे तो या योजना जँची के मालवी में अभी तक लिख्या हुआ गीत, कविता, कथा, नाटक कवि होणसे मंगई ने एक चुनाव कमेटी विनमें से चलवा जैसी पुस्तक होण के छपावे ने शासन की मदद से सरपंच ग्राम-पंचायत, पटवारी, अध्यापक, बुकसेलर विगेरे से विनके बेचई मुनाफा में से १-२ अथवा १-४ लिखवा वाला के दई बाकी मालवी प्रचार समिति का कोष में जमा होय, इसे गामे-गाम, नगर-नगर मालवी को प्रचार हुई अच्छो से अच्छो मालवी साहित्य सामने आतो रेवेगा, ने विनके बाँचवा से गामड़ा होण से भी निरक्षरता मिटी राष्ट्रभाषा की उन्नति होगा। सभी लेखक होण तो आज का जमाना में अपणों अच्छो से अच्छो साहित्य भी नी छपई सके, ने जैसे तैसे छपई भी दे तो अपणीज लिखी हुई पोथी को मोलनी मांगी सके। ईके कारण म्हारी पेटी में कोई बीसेक पोथी होण की मांग होते हुवे भी कापी होण मेंज सडीरी है, ने ऐसी केई की पेटी होण में सड़ीरी होगा। तो मालवी मेला के अमर करवां वाला विद्वान, होण के ईने योजना पर विचार करनो हैं, ने देखते-देखते मालवी बोली के भाषा को रूप दई मालवी कवि ने लेखक होण को परिश्रम सफल करनो है, ईसे मालवी के साथे राष्ट्र भाषा भी चमकेगा ने गणतंत्र राज को एक किरसाण भी राजनीति को ज्ञान सीखी स्वतंत्रता को साचो सुख उठई सकेगा।

• •

—जुगलकिशोर द्विवेदी
शाजापुर (म. प्र.)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मालवी मेले में प्रस्तुत मालवी शोध-संस्थान की योजना

१ प्रस्तावना:—

इन्दौर विश्वविद्यालय के अन्तर्गत मालवी भाषा और साहित्य, के संग्रह अनुसंधान तथा संरक्षण हेतु एक मालवी शोध संस्थान की स्थापना की आवश्यकता है। इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु इस संस्थान का कार्यान्वियन आगामी सत्र से प्रारंभ किया जाय, जिसकी योजना इस प्रकार है:—

२ उद्देश्य:—

(१) मालवी भाषा और साहित्य का संग्रह तथा प्रकाशन।

(२) संकलित सामग्री के आधार पर मालवी भाषा व साहित्य पर अनुसंधान।

(३) मालवी और उसकी उपबोलियों का भाषा वैज्ञानिक दृष्टि से सर्वेक्षण तथा अनुशीलन।

३ कार्य विधि:—

(१) मालवी भाषा और साहित्य के संग्रह के लिये प्रशासनिक इकाइयों, भौगोलिक सीमाओं, वर्गों तथा जातियों का आधार लिया जायगा।

(२) उपर्युक्त सामग्री का वैज्ञानिक संपादन तथा प्रकाशन किया जायगा।

(३) वैज्ञानिक विधि से संपादित तथा प्रकाशित सामग्री पर अनुसंधान कार्य कराया जायगा। शोध-निर्देषक, शोध-सहायक तथा शोधार्थियों के परस्पर सहयोग से भाषा और साहित्य का अनुशीलन किया जायगा।

(४) मालवी के मौलिक साहित्य का टेप-रिकार्डर द्वारा तथा लिखित साहित्य और पांडुलिपियों का अनुसंधित्सु सभी कार्यकर्ताओं द्वारा संग्रह किया जायगा।

(क) भाषिक अध्ययन की दृष्टि से मालवी के व्याकरण का निर्माण, शब्द-कोष का निर्माण, तथा मालवी की भाषिक दिशाओं का अध्ययन किया जायगा।

(ख) साहित्य के अनुसंधान के अन्तर्गत पांडुलिपियों का वैज्ञानिक अध्ययन, मौलिक परम्परा से प्राप्त गीत, कथा, वार्ता, नाट्य-गीत, लोकोक्ति आदि पर अनुसंधान कराया जायगा।

ग्राम, तहसील तथा जिले के आधार पर मालवी तथा इसकी उपबोलियों का सर्वेक्षण तथा अध्ययन किया जायगा। टेप-रिकार्डर के आधार पर बोलियों का सूक्ष्म अनुशीलन किया जायगा। भाषा भूगोल के तत्वों के आधार पर मालवी बोली का क्षेत्रीय अनुशीलन भी किया जायगा।

४ संचालन एवं कार्यान्वयन:—

इस योजना को निम्नलिखित ढंग से कार्यान्वित किया जाय

(१) शोध निर्देशक	(एक)	८५०-५०-१२५०
(२) शोध सहायक	(दो)	४००-३०-८५०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(३) सर्वेक्षक	(चार)	२५०–२५ – ४५०
(४) लिपिक	(दो)	१५०–१० – २५०
(५) टंकण मुद्रक	(दो)	
अंग्रेजी एक हिन्दी एक		१५०–१० – २५०
(६) भृत्य	(चार)	८०– ५ – १५०
(७) ड्रायवर	(एक)	१५०–२५०–३००
(८) क्लीनर	(एक)	८०– ५ –१५०
(९) टेप-आपरेटर	(एक)	१५०– १० –२५०

विश्वविद्यालय के नियमानुसार मँहगाई भत्ता दिया जायगा।

६ उपकरण:—

(१) टेप रेकार्डर	(दो)	२,५००–००	रुपये
(२) यात्रा वाहन जीप	(एक)	२०,०००–००	,,
(३) टाईप मशीन	(दो)	१,३००–००	,,
अंग्रेजी–एक		१,२००–००	,,
हिन्दी–एक		२,५००–००	,,
(४) भाषिक भूगोल के समस्त उपकरण		२,५००–००	,,
(५) कार्यालयीन फरनीचर तथा स्टेशनरी		१५,०००–००	,,

७ ग्रन्थालय:—

पुस्तकालय	२५,०००–००	,,
पुस्तक प्रकाशन	२०,०००–००	,,
आकस्मिक व्यय (यात्रा भत्तादि)	२५,०००–००	,,

८ अर्हताएँ:—

शोध-निर्देशक

(क) किसी मान्य विश्व-विद्यालय द्वारा एम. ए. हिन्दी, कम से कम द्वितीय श्रेणी।

(ख) स्नातक और स्नातकोत्तर कक्षाओं के अध्यापन का कम से कम १२ वर्ष का अनुभव जिसमें कम से कम स्नातकोत्तर कक्षाओं का ५ वर्ष का अनुभव।

(ग) मालवी भाषा और साहित्य का विशिष्ट ज्ञान, मालवी भाषा साहित्य पर शोध-कार्य करने वाले को प्राथमिकता दी जायगी।

(ग) मालवी भाषा और साहित्य पर शोध कार्य निर्देशन का कम से कम ५ वर्ष का अनुभव।

शोध सहायक :—

(क) किसी मान्य विश्वविद्यालय द्वारा कम-से-कम द्वितीय श्रेणी में एम. ए.

(ख) भाषा-विज्ञान पर शोध-कार्य का दो वर्ष का व्यावहारिक ज्ञान।

(घ) साहित्य के शोध का दो वर्ष का अनुभव।

सर्वेक्षक :—

मालवी भाषा-भाषी स्नातक हो, जिसे व्याकरण का समुचित ज्ञान हो।

अन्य कर्मचारियों की अर्हतायें विश्वविद्यालयीन नियमों के अनुसार हों।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कार्तिक मेला एवं प्रदर्शनी १९७१

३१ अक्टूबर १९७१ से प्रारम्भ

[१] *प्रदर्शनी*–कृषि, शिक्षा एवं कला, विदेशी दूतावासों की प्रदर्शनियां, औद्योगिक, स्वास्थ एवं परिवार नियोजन, सुरक्षा, पशु, अन्य आकर्षक प्रदर्शनियाँ, शतरंज, कैरम, टेबल टेनिस आदि प्रतियोगिताएँ, अन्य सांस्कृतिक कार्यक्रम।

[२] *कार्यक्रम*–हिन्दी कवि सम्मेलन, मुशायरा, लोकभाषा कवि सम्मेलन, नाटक, प्रहसन व लोक नृत्य, माच, महिला सम्मेलन, अ. भा. कबड्डी प्रतियोगिता, संगीत प्रतियोगिता।

व्यापारियों को सब प्रकार की सुविधा चुंगी में ५० प्रतिशत छूट—

व्यापारी वर्ग स्वर्ण अवसर का लाभ उठावें, बिजली, पानी आदि की समुचित व्यवस्था, तुरन्त अपनी दुकानें सुरक्षित करवाइये। साथ ही लायन्स क्लब उज्जयिनी द्वारा प्रदत्त नेत्र व दन्त की निःशुल्क चिकित्सा का लाभ उठाइये। कार्तिकी पूर्णिमा के स्वर्णावसर पर शिप्रा स्नान का लाभ उठाइये।

उज्जैन नगर निगम आपका हार्दिक स्वागत करता है

एच. पी. अग्निहोत्री
कार्तिक मेला अधिकारी

सत्यनारायण जोशी
अध्यक्ष

कार्तिक मेला समिति, उज्जैन नगर पालिक निगम, उज्जैन (म. प्र.)

(मालवी शोध संस्थान.....)

इस योजना से मालव जनपद की भाषा, साहित्य और संस्कृति का सम्यक् निरूपण होगा और अतीत परम्परा का संरक्षण सम्भव हो सकेगा, जिससे मालवा का इतिहास अपने अविकल रूप में सुरक्षित रह सके।

विशेष – क्षेत्रीय बोलियों का भाषा वैज्ञानिक अध्ययन मध्यप्रदेश के विभिन्न विश्व-विद्यालयों में विभक्त किया जा सकता है। उदाहरणार्थ विक्रम में निमाड़ी, सागर में बुन्देली, रीवा में बघेली, ग्वालियर में ब्रजी–खड़ी बोली, जबलपुर में बुन्देली-बघेली, रायपुर में छत्तीसगढ़ी तथा भोपाल में खड़ी बोली के शोध-संस्थान संस्थापित किये जा सकते हैं। यदि विश्व-विद्यालयों में यह कार्य संभव न हो तो प्रतिष्ठित साहित्यिक संस्थाओं को यह कार्य सौंपा जाय और उन्हें पर्याप्त अनुदान देकर विकसित किया जाय। इस योजना से मध्य-प्रदेश का जन जीवन अपनी मूल-प्रकृति को अभिव्यक्त कर सकेगा और साहित्य की स्थायी निधि का अंग बन सकेगा।

—प्रस्तोता

प्रो० परमेश्वरदत्त शर्मा

अध्यक्ष, हिन्दी-विभाग
शा. कला एवं वा. म. विद्यालय, इन्दौर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मालवी मेले की अन्तरंग झलकियाँ

•

रामनारायण उपाध्याय

दिनांक ८ और ९ जून को रतलाम में शानदार ढंग से मालवी मेला सम्पन्न हुआ। मंच के पीछे की दीवार पर यदि गोबर एवं फूल पत्तियों से मालवा की लोककला अंकित थी, तो श्रम-शिविर के सभा-कक्ष की दीवारें सुप्रसिद्ध कलाकार श्री जयन्त की कलाकृतियों से सुसज्जित थीं। सुबह १० बजे जब मेले के प्रमुख अतिथि श्री रामधारीसिंह 'दिनकर' सभा-भवन में पधारे तो बादलों के घूंघट से लुका छिपी खेलने में व्यस्त सूरज भी शरारत से मुस्कराता पाया गया। प्रमुख दरवाजे पर पीले रंग की चुनरिया ओढ़े मालवी बालाओं ने अपने सिर पर मंगल कलश और हाथ में आरती लेकर, दिनकरजी का स्वागत किया। श्री नरेन्द्रसिंह तोमर के एकतारे पर मालवी गणेश-वन्दना के साथ, सम्मेलन प्रारम्भ हुआ।

एक बहन जब वन्दे मातरम् गाते समय, सुजलाम्, सुफलाम् कह कर एक क्षण ठिठक गई, तो अपने भाषण में उसका जिक्र करते हुए, श्री शिवमंगलसिंह 'सुमन' ने कहा कि "मुझे लगा कि, "सुजलाम्, सुफलाम्," के बाद यह बहन "रतलाम" कहती ही है।" और हँसी का एक ठहाका गूंज उठा। श्री हरीश निगम के द्वारा मेले की सफलता के लिए प्राप्त श्री हरिभाऊ उपाध्याय, श्री अगरचन्द नाहटा, श्री सूर्यनारायण व्यास, एवं डॉ. सत्येन्द्र आदि के संदेश पढ़े गये। मालवी के विद्वान श्री श्याम परमार का संदेश पढ़ा नहीं जा सका। क्योंकि उनके तार में नव दम्पति के प्रति शुभ कामना व्यक्त की गई थी। हो सकता है उसी दिन किसी नव दम्पति को मेले की सफलता के लिए श्याम भाई का तार मिला होगा।

श्री शिवमंगलसिंह 'सुमन' की अध्यक्षता एवं श्री रामधारीसिंह 'दिनकर' की उपस्थिति में मालवी लोक साहित्य के विद्वान श्री डॉ, चिन्तामणी उपाध्याय का, समारोह समिति के अध्यक्ष श्री बी. एम. कोठारी के द्वारा मानपत्र एवं पुष्पहार से सम्मान किया गया। साथ ही विभिन्न संस्थाओं और व्यक्तियों की ओर से उन्हें इतनी मालाएँ पहनाई गईं कि श्रीउपाध्याय का गला पुष्पहार से भर आया। पश्चात् श्री शिवमंगलसिंह 'सुमन' और बाल-कवि बैरागी के द्वारा, श्री उपाध्याय के व्यक्तित्व और कृतित्व पर मार्मिक ढंग से प्रकाश डाला गया।

श्री दिनकरजी ने मेले का उद्घाटन करते हुए अपने भाषण में कहा कि—'हमारी उपभाषाओं के साहित्य से हिन्दी की हानि नहीं होगी। वरन उपभाषाओं के विकास से राष्ट्र भाषा हिन्दी समृद्ध होने वाली है।' राज्य के सूचना प्रकाशन मंत्री, जो मन्त्री कम कवि अधिक हैं, ने कहा कि—'मालवी साहित्य को बढ़ा दिया [illegible] है, यह सोचने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समझने के लिये हम यहाँ एकत्र हुए हैं। मालवी में लोच है, संवेदना है, संप्रेषणा है इसीसे मालवी का भविष्य उज्ज्वल है।"

श्री दिनकरजी के सम्मान समारोह के पश्चात् 'सुमन'जी ने अपने दोनों हाथ जोड़कर कहा कि—मैं "सेन्डविच" बन कर आपके सामने खड़ा हूँ, कृपया आप अपनी कुछ कविताएँ सुना कर हमें उपकृत करेंगे। और जब एक कवि दूसरे कवि से कविता सुनाने का आग्रह करता है, तो सहज है कि जनता को दोनों कवियों की दो-दो रचनाएँ सुनने का सौभाग्य मिल जाता है।

चूंकि मेले के आयोजन में नगर पालिका का हाथ था, अतएव स्थानीय राजनीति, विशुद्ध साहित्यिक समारोह में भी अपना रंग दिखाने से नहीं चूकी। कुछ लोग अपने सीने पर "विरोध" का काला बिल्ला लगाकर प्रवेश द्वार पर खड़े थे। पता नहीं वह विरोध था या बुद्धि का निरोध।

दोपहर की गोष्ठी संत परम्परा के साधनाशील साहित्यकार श्री डा० विनयमोहन शर्मा की अध्यक्षता में, श्री डा० राममूर्ति त्रिपाठी के निबन्ध वाचन से शुरू हुई। पश्चात् विषय का प्रवर्तन करते हुए प्रो० शिवसहाय पाठक ने मालवी शोध संस्थान की आवश्यकता पर प्रकाश डालते हुए कहा कि—'हमें सबसे पहले मालवी के विस्तार क्षेत्र का निर्धारण कर लेना चाहिए, साथ ही भोपाल इन्दौर और उज्जैन विश्व-विद्यालय के लिए शोध के विशिष्ट क्षेत्र भी निर्धारित करने चाहिए।' प्रो० पी. डी. शर्मा से मालवी शोध संस्थान के लिए ७५००० (पिचहत्तर हजार) की एक टाइप्ड योजना रखी। जिसमें निर्देशक से लेकर भृत्य और टेप रिकार्डर से लिपिक तक का प्रावधान था। श्री विनयमोहन शर्मा ने कहा—"कि 'जब हम मालवी की बात करें, तो हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि मध्यप्रदेश में चार और बोलियाँ हैं, उन सबको ध्यान में रखकर ही हमें अपनी योजना शासन के सामने रखना चाहिए।' विषय को स्पष्ट करते हुए श्री बालकवि बैरागी ने कहा कि—हमारा काम सिर्फ मालवी तक सीमित नहीं है, हम मध्यप्रदेश की पांचों बोलियों, मालवी, निमाड़ी, बुन्देली बघेली और छत्तीसगढ़ी का समान विकास चाहते हैं। और शीघ्र ही शेष चार जनपदों में भी जनपदीय बोलियों के मेले आयोजित किए जायेंगे।

दिनांक ९ जून को ९ बजे से श्री विनयमोहन शर्मा की अध्यक्षता में मालवी भाषा और साहित्य पर एक अत्यन्त ही विचारोत्तेजक गोष्ठी हुई। गोष्ठी का आरम्भ करते हुए "वीणा" के सम्पादक श्री मोहनलाल उपाध्याय 'निर्मोही' ने मालवी शब्द कोष निर्माण की आवश्यकता पर जोर दिया, और इसके लिए एक विषद योजना प्रस्तुत की। बड़ोदा विश्व-विद्यालय के डा. बंसीधर ने मालवी भाषा के वैज्ञानिक अध्ययन पर एक शोध पूर्ण निबन्ध पढ़ा। निमाड़ी और हिन्दी के साहित्यकार एवं व्यंग्यकार श्री रामनारायण उपाध्याय ने निमाड़ी और मालवी की तुलनात्मक अध्ययन चर्चा करते हुए कहा....कि "जब मैं मालवी की याद करता हूँ तो मुझे लगता है कि जैसे एक ही विन्ध्य का सिरहाना लेकर निमाड़ी और मालवी जैसी दो सगी बहनें लेटी हों। यह एक संयोग की बात है कि मालवी को यदि शकुन्तला की तरह मालवा की हरीभरी भूमि मिली है तो निमाड़ी को सीता की तरह वन पत्तों में से अपना मार्ग बनाना पड़ा है। राजनीति सदा तोड़ने का और भाषा जोड़ने का कार्य करती आई है। हमारा कार्य यह नहीं है कि सिंगाजी निमाड़ के थे या मालवा के, इसको लेकर विवाद खड़ा करे। उन पर हम दोनों को ही कार्य करना है। शासन के भरोसे भी यह काम होने वाला नहीं है। कारण वहाँ तो यह स्थिति है कि जब सिंगाजी पर टॉक दिया जाता है तो पूछते हैं "क्या सिंगाजी गव्हर्नमेंट या नान गव्हर्नमेंट सरवेन्ट हैं" ?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मालवी के आधुनिक काव्य की आलोचना करते हुए डॉ. पवनकुमार मिश्र ने कहा कि 'मालवी में ठहराव आ गया है वह सस्ते मंच की कविता बनती जा रही है । मालवी कवि जब तक इससे हट कर नई जमीन नहीं तोड़ेंगे, तब तक काव्य की दृष्टि से विशेष उपलब्धि होने वाली नहीं है । श्री डॉ. श्यामसुन्दर व्यास ने आधुनिक मालवी काव्य का सबल पक्ष प्रस्तुत करते हुए कहा कि यह काव्य-यात्रा, अनुभूतियों और अभिव्यक्ति की ईमानदार कोशिश है । जरूरत है उसे स्नेह से दुलराकर, प्यार से आगे बढ़ाने की । श्री रमेश गुप्त 'चातक'ने भी मालवी कविता पर अपना अध्ययन पूर्ण निबन्ध पढ़ा । श्री बालकवि बैरागी ने कहा कि 'हमें खुशी है आज पहली बार मालवी को आलोचक मिले हैं, हिन्दी के सजग साहित्यकारों का मालवी की ओर ध्यान गया, यह उसकी प्रगति का लक्षण है । अध्यक्ष पद से श्री डॉ. शर्मा ने गोष्टी का समापन करते हुए कहा कि 'मालवी भाषा मे ओज और लालित्य दोनों हैं यद्यपि इसका काव्य अभी सीमित है, फिर भी इस भाषा की संभावनाएँ व्यापक हैं, हिन्दी में विभागाध्यक्षों को पाठ्यक्रम में लोक-साहित्य का अधिक से अधिक समावेश करना चाहिए ।

'मालवी लोक कला और संस्कृति' पर तृतीय गोष्ठी इतिहास और पुरातत्व के विद्वान श्री डॉ. भगवतशरण उपाध्याय की अध्यक्षता में सम्पन्न हुई । बैरागीजी ने कहा 'कि हमें इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि लोक धुनें ही लोकगीत और लोक-काव्य की आत्मा हैं । हमारी असावधानी से ये लुप्त न होने पायें । इनका संरक्षण करना हमारा पुनीत कर्तव्य है । 'स्वास्थ्य-मंत्री श्री देवीसिंहजी ने मालवी भाषा, में उपस्थित साहित्यकारों का स्वागत करते हुए हर्ष प्रकट किया । श्री नरहरी पटेल, श्री लक्ष्मीकांत मंडलोई श्री मनोहरलाल दलाल, श्री कन्हैयालाल गौड़ और श्री झलक निगम में मालवी कला एवं साहित्य पर निबन्ध वाचन किये । अध्यक्ष पद से बोलते हुए श्री डॉ. भगवतशरण उपाध्याय ने कहा कि, 'जनपदीय साहित्य ही वास्तव में साहित्य है । नगर संकृति विचारकों, दार्शनिकों को पैदा करती हैं । जब कि ग्राम संस्कृति संतो को जन्म देती है । ये संत ही सही अर्थो में जन-जन की वाणी को मुखरित करते हैं । रामचरितमानस उसका जीवन्त प्रतीक है । लोक-कलाएँ कभी भी समाप्त नहीं होती । वे निरन्तर बढ़ती रहती हैं । आज की कला पुनः पुराने प्रतीकों को अपना रही हैं । यह लोक-कला की प्रगति का ही परिचायक है ।

पश्चात् प्रो. बंम के द्वारा एक प्रस्ताव के रूप में बंगला देश में हो रहे नरसंहार की भर्तस्ना की ओर भारत सरकार में मांग की गई कि वह बंगला देश को मान्यता प्रदान करें । रात्रि को श्री गिरिवर सिंह भँवर की अध्यक्षता में एक विशाल मालवी कवि सम्मेलन सम्पन्न हुवा । श्री रामेश्वर अग्रवाल और प्रो. चन्द्रकांत देवताले के द्वारा आभार प्रदर्शन के पश्चात् मेला समाप्त हुआ ।

मेले में पहले दिन 'बफे डिनर' का आयोजन था । नेताओं को तो खड़े खड़े खाने की आदत है लेकिन साहित्यकारों ने शिकायत की कि 'बफे' से 'बाफला-दाल' बढ़िया होता है । अतएव दूसरे दिन बाफला-दाल का कार्यक्रम सम्पन्न हुआ । नगर पालिका भवन में साहित्यकारों के सम्मान के समय सुमनजी ने कहा कि श्री दिनकरजी का कहना है कि यदि उन्हें रिटर्न टिकिट दिया जाय तो वे कभी भी मालवा आने को तैयार हैं । लेकिन हम तो दिनकरजी को इसलिए जाने देते है कि दूसरी जगह भी सुबह हो सके । और जब भी आप यहाँ आना चाहेंगे हमारी ओर से आपके लिए एक नहीं दो-दो रिटर्न टिकिट मिलते रहेंगे आप ताकि बार-बार आ सकें ।

• •

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हर जगह मिलती है
जालिम लोशन
दाद खुजली की पेटेन्ट दवा

प्राण सुधा
पेटदर्द, हैजा, उल्टी (कै), दस्त आदि अनेक रोगों की हाजिर जवाब घरेलू दवा।

ओरिएन्टल केमिकल वर्क्स, राऊ (इन्दौर)

प्राण सुधा कैपसूल

खाने में आसान

सम्पूर्ण भारत में लोकप्रिय
एक आदर्श पाचक औषधि

हवाबाण हरडे

गेस तथा
पाचन के लिये

हवाबाण हरडे डिपो
इन्दौर

—: प्राप्तिस्थान :—
हवाबाण हरडे डिपो,
जवाहर मार्ग, इन्दौर

दूरभाष : ३४३६५
सभी प्रकार के सुन्दर,
शुद्ध एवं सुरुचिपूर्ण
टिपटॉप
मुद्रण के लिए
हमें सदैव स्मरण रखें।
एक बार
सेवा का अवसर दें।

सर्वोत्तम
प्रिन्टिग प्रेस
८, खातीपुरा इन्दौर—१

मालवा के श्रेष्ठ प्रकाशक
विश्वविद्यालयीन स्तरीय
पुस्तक खरीदी के समय
* साहित्य * इतिहास
* राजनीति * अर्थशास्त्र
* समाजशास्त्र * मनोविज्ञान
* शिक्षाशास्त्र।
आदिविषयों के उच्च स्तरीय
साहित्य क्रय हेतु
सदैव स्मरण रखें !

कमल प्रकाशन
४३३, महात्मा गांधी मार्ग, इन्दौर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मालव-गंगा के भगीरथ डॉ. चिन्तामणि उपाध्याय

जिनके व्यक्तित्व में साधना, मनस्विता, औदार्य एवं कर्मठता का इन्द्रधनुषी समावेश है, उन्हीं साधुमना चिन्तक डॉ. उपाध्याय की ५१ वीं वर्ष ग्रन्थि के अवसर पर रतलाम में आयोजित मालवी मेले में उनके अभिनन्दन पर अर्पित भावाञ्जलियाँ।

उज्जयिनी के सामान्य विद्यार्थी से लेकर प्राध्यापक मित्र तक जिन्हें 'दादा' के नाम से सम्बोधित करते हैं—वह हैं साधुमना मौन साधक डॉ. चिन्तामणि उपाध्याय।

उपाध्यायजी का व्यक्तित्व लोक साहित्य एवं शिक्षा-क्षेत्र में अपनी अनोखी विशेषता एवं महत्ता रखता है। वे मानव हृदय मर्मज्ञ, भाव-धनी कवि, प्रबुद्ध लेखक-चिंतक एवं कुशल प्राध्यापक हैं। उनके लेखन अध्यापन में सादगी, स्वच्छता एवं मौलिकता है। वे लिखने पढ़ने व बोलचाल में जैसे पटु हैं, वैसे ही तीक्ष्ण बुद्धि प्रत्युत्पन्नमतित्व और विलक्षण स्मरण शक्ति के स्वामी भी हैं।

उपाध्यायजी वेशभूषा में नई फेशन परस्ती से कोसों दूर हैं। खादी का कुरता पायजामा, होठों पर स्थित मुसकान और पैरों में चप्पल, सामान्य रंग और कद, हृदय में अदम्य धैर्य, एवं आत्मविश्वास। बाल्यकाल एवं शिक्षणकाल ऐसी विषम परिस्थितियों, समस्याओं एवं विपन्नताओं के मध्य व्यतीत हुआ। जिनसे आज का सामान्य मनुष्य संघर्षरत रहते हुए भी विलग नहीं हो सकता। इसलिये उनकी उदारता व सहिष्णुता का उदधि भी अपना प्रेम जल वितरित करने में हिचकिचाहट नहीं करता।

उपाध्यायजी ने 'स्वतः दीपो भव' के आदर्शानुरूप अपने व्यक्तित्व एवं कृतित्व का निर्माण एवं विकास स्वयं ही किया है। किसी साहित्य-महारथी या नेता के सानिध्य में वह पल्लवित एवं पुष्पित नहीं हुए। एक सामान्य उच्च ब्राह्मण कुल में प्रादुर्भूत होकर किशोरावस्था से ही परिवार के भरण पोषण की गाड़ी का भार उन्हें ढोना पड़ा फिर भी वे अध्यवसायपूर्वक टिमटिमाते हुए दीपक की लौ में साधना करते रहे। अपने उद्देश्य के प्रति सजग एवं अथक परिश्रम के बल पर उठते चले गये और आज माधव महाविद्यालय में हिन्दी-विभाग के अध्यक्ष पद को सुशोभित कर रहे हैं। उपाध्यायजी ही पहले व्यक्ति हैं,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिन्होंने हिन्दी के मूर्धन्य साहित्यकार और विक्रम विश्व-विद्यालय के कुलपति डॉ. शिवमंगलसिंह सुमन के निर्देशन में सबसे पहले 'मालवी-लोक-गीत' विषय पर सन् १९६५ में शोध कार्य कर नागपुर विश्व-विद्यालय से पी.-एच. डी. की उपाधि प्राप्त की।

उपाध्यायजी के व्यक्तित्व से अधिक निश्चल, निष्कपट, आशाप्रद एवं प्रफुल्लतामय व्यक्तित्व मालव माटी के साहित्यिकों में विरल हैं। निराशा एवं विपन्नता उनके जीवन में स्थायित्व नहीं पा सकी। वे हृदय से जैसे विनम्र व सरल हैं वैसे ही उदार भी। उनकी उदारता की कोई सीमा नहीं। नवोदित साहित्यकारों को आगे लाने में उपाध्यायजी से जो कुछ बन पड़ता है करते हैं। उनकी उदार वृत्ति का लाभ उठाने वाले ऐसे अनेक साहित्यकार हैं, जो प्रांत के साहित्यकारों में अपना महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। इतना ही नहीं विद्यार्थियों की बहुमुखी प्रतिभा के प्रोत्साहन के लिये वे सदैव तत्पर रहते हैं।

उपाध्यायजी मालवी लोक साहित्य की गंगा के भगीरथ हैं। साहित्याकाश में उदय होते ही उन्होंने मालवी को अपना महिमामय स्थान दिलाकर उसे शोध का विषय बनाया। आपके पश्चात ही मालवी लोक साहित्य पर अन्य शोध कार्य हुआ है।

उपाध्यायजी के बिना लोक-साहित्य का एक बहुत बड़ा अंतरंग अंग (मालवी) अधूरा ही रह जाता। मालवी के शोध कार्य, कवि-सम्मेलनों, माचों, संगोष्ठियों एवं मेलों की पुर्नस्थापना का कार्य भी आपने जीवट से किया, जो स्तुत्य व श्लाघनीय है। उपाध्यायजी की भाषा शैली एवं कृतित्व के विषय में प्रकाश डालते हुए डॉ. देवराज उपाध्याय ने लिखा है कि 'लोक साहित्य की मूल अभिव्यक्तियों का निरूपण और विवेचन बड़ी वैज्ञानिक रीति से ओजस्वी प्रवाहमयी भाषा में प्रस्तुत करना डॉ. साहब जैसी मनीषा का ही कार्य है।..... उपाध्यायजी लोक जीवन के हमराही हैं। लगता है, उन्होंने उसकी प्रत्येक गतिविधि पर वैज्ञानिक की आँख रखी हैं। मार्ग का कोई भी अणु अथवा नग उनकी पैनी दृष्टि से नहीं बचा है। इतना ही नहीं उनकी लेखनी भी सशक्त हैं। उनके पगों में बालिसुत की अडिगता और दृष्टि में धनंजय की लक्ष्यनिष्ठा है।

मालवी लोक साहित्य के अन्वेषक, प्रतिष्ठाता तथा उन्नायक डॉ. चिन्तामणि उपाध्याय अपने अतुल गरिमामय जीवन के ५० वसंत पूरे कर ८ जून १९७१ को ५१ वें वर्ष में प्रविष्ट हुए हैं अतएव 'मृत्योर्मा अमृतंगमय', के वैदिक आदर्श के अनुसार मैं उनके शतायु होने की कामना के साथ हार्दिक अभिनन्दन तथा मालवी लोक साहित्य के उन्नयन की शुभाकांक्षा करता हूँ।

● ●

पुरुषोत्तम सत्यप्रेमी

सहज व्यक्तित्व के धनी

माधव महाविद्यालय उज्जैन में 'हिन्दी-विभागाध्यक्ष'.....मात्र विभागाध्यक्ष ही नहीं माधव-कॉलेज के एक अभिन्न-अंग जिनके बिना उक्त महाविद्यालय के किसी भी छोटे-बड़े कार्य की कल्पना अपूर्ण है....विश्व विद्यालय से लेकर अन्तिका के हर प्रकार के ओर-छोर तक विस्तृत व्यक्तित्व सदैव मंद-मंद मुस्कातासा, एकदम सरल, सहज व्यक्तित्व। बड़ा सुखद आश्चर्य रहा कि लोक-साहित्य विशेषकर मालवा जनपद एवं मालवी के इस मर्मज्ञ के अभिनन्दन के अवसर पर सहज ही वे सारे महत्व के साधन-स्रोत अभिनन्दनार्थ सम्पूर्ण तल्ली-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नता से, पूर्ण आन्तरिक उल्लास से बरबस ही उमड़ पड़े थे....और क्यों न उमड़ते ! लोक-साहित्य एवं हिन्दी-साहित्य के समान रूप से विज्ञ इस वट-वृक्षी-व्यक्तित्व की शीतल-छाँह के तले, सुखद सानिध्य में मालवी, हिन्दी एवं अन्य क्षेत्रों की प्रतिभाओं ने विकास, उन्नयन एवं दिशा प्राप्त की है।

दादा केवल प्रबुद्ध-वर्ग के ही नहीं हैं अपितु विविध कार्य-क्षेत्रों एवं रुचियों वाले लोग भी उन्हें अपने अत्यन्त निकट पाते हैं। दादा का सहयोग, सौजन्य एवं स्नेह जीवन के हर क्षेत्र में सहज उपलब्ध होता है। किसी की पारिवारिक परेशानियों में, तो किसी की आजीविका के प्रश्न पर, तो किसी की रुग्णावस्था में, कभी स्वास्थ के सुधार की नेक सलाह देते हुए, अपनत्व से....। 'दादा' जहाँ 'गुरु' हैं वहाँ पूरे 'गुरू', जहाँ मित्र हैं वहाँ पूरे मित्र। गुरू के रूप में किसी भी प्रकार की धृष्टता, उच्छृंखलता उनकी ओर से असह्य है, अक्षम्य है....जहाँ मित्र हैं वहाँ मित्रता की सार्थकता भी चरितार्थ होती है....वे लोग वस्तुतः सौभाग्यशाली हैं जिन्हें दादा के इन दोनों स्वरूपों का सानिध्य प्राप्त हुआ है....।

मैंने दादा के सम्बन्ध में लिखते हुए एकाधिक बार 'सहज' शब्द का प्रयोग जान-बूझकर किया है क्योंकि मैं उन्हें एक 'आधुनिक-सन्त' के रूप में देखता-पाता हूँ....सहज साधना वाले सन्तों की परम्परा में जिनका लक्ष्य था—"दादू सरवर सहज का, जामें प्रेम तरंग। तँह मन झूले आपनो न आपने सांई संग॥" दादा डॉ. चिन्तामणि उपाध्याय की वस्तु स्थिति भी यही है। पूर्णतया सहज, बहुत कुछ निश्छल 'सन्त हृदय नवनीत समाना' के सदृश सहज ही द्रवित होने वाले....। देश के प्रथम-पंक्ति के साहित्यकारों की उपस्थिति में दादा का अभिनन्दन हुआ जोकि हर साहित्यिक के लिए "हृदय-महोत्सव" की बेला थी.... हर साहित्यकार की, निराला की पीड़ा भी यही थी कि "साहित्यकार को पैसा मत दो, सुख-सुविधा मत दो, पर उसे उचित सम्मान तो दो....।" रतलाम में यही भावना अपने आंशिक रूप में ही सही मूर्त हुई। अस्तु वे सभी बन्धु धन्यवाद के पात्र हैं जिनने यह स्तुत्य पुण्य-कार्य कराया एवं जिनका यह पुरश्चरण अभी पूरा नहीं हुआ है। ऐसा भी संकल्प है एतदर्थ आशा की जा सकती है कि भविष्य में अन्य लोक-भाषाओं के विद्वानों, विभिन्न बोलियों के उन्नायकों एवं हिन्दी के साहित्यकारों का भी डा. चिन्तामणि उपाध्याय की तरह सम्मान सम्भाव्य होगा....प्रकाशन आदि अन्य शाश्वत एवं ठोस मूल्यों के समाहार के साथ।

●

बालमुकुन्द गर्ग "मुकुन्द"

सच्चा मानव

उनका व्यक्तित्व अकृत्रिम, सरल, उदार आत्मलीन एवं आकर्षक है। उनके अधरों पर सदैव एक मृदु मुस्कान थिरकती रहती है। जो उनके सम्पर्क में एक बार आता है वह उन्हें कभी विस्मृत नहीं कर सकता। वे स्पष्ट वक्ता, चिन्तक, फक्कड़ मस्तमौला और मौलिक प्रतिमा के धनी हैं। उनके हृदय में छलछिद्र, कुटिलता का कहीं स्थान नहीं अच्छे अर्थों में वे एक सच्चे मानव हैं।

—मदनकुमार चौबे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मालवी-मेला : कुछ उपलब्धियाँ और आवश्यकता

एक इतिवृत्त:—बालकवि बैरागी की तपोनिष्ठ प्रेरणा, डा० चिन्तामणि उपाध्याय की सतत साधना, मालवी हस्ताक्षरों की अटूट आराधना, एवं महाप्राण दिनकर, साहित्यर्षि विनयमोहन शर्मा, शीर्ष सारस्वत 'सुमनजी' एवं महाभाग भगवतशरण उपाध्याय की आत्मजयी शुभ कामनाओं से रत्नपुरी रतलाम का मनोहारी मेला सफलता के चरमोत्कर्ष को स्पर्श कर एक इतिवृत्त बन चुका है, इसमें सन्देह नहीं।

आरती के दीप:—रतलामी सेव की तरह रतलामी मेले को भी ख्याति प्राप्त है। वर्ष भर वहाँ विविध मेलों की शृंखला चलती रहती है और कोई साल ऐसा नहीं, जिसमें मालवी का ठेठ ठाठ न दिखे। मालवी के कवियों और कलाकारों की जितनी आरती रतलाम में उतारी जाती है उतनी अन्यत्र नहीं, रतलाम पश्चिमी मालवा का सिंहद्वार है। और सिंहद्वार पर ही तो आरती के द्वीप प्रज्ज्वलित किये जाते हैं।

मालवा की संस्कृति—मालवा की मदिरता, मोहकता, मन्जुलता और मस्ती रतलाम में सर्वाधिक मिलती है। "मालवा की संस्कृति सोमरस, श्रीखण्ड और सिनेमा की संस्कृति है। मस्ती, माधुर्य और मनरंजन का मिलन ही तो मालवा है ! शबे मालवा पर शाहजहाँ भी मुग्ध था—'डग-डग रोटी पग-पग नीर'—से आकण्ठ तृप्त मालवा, मेलों की मस्ती नहीं छानेगा तो क्या अरण्य-रोदन करेगा ?

मालवी ऋतु:—रतलाम की रसवन्ती धरा पर गत ८-९ जून १९७१ को ऐसा ही अभिनव मेला जुड़ा था जिसमें मालवी के अधिकांश स्वर एवं व्यंजन अगाध श्रद्धा, अनूठी आस्था और अमिट भक्ति भावना लेकर जमा हुए थे। वहाँ बालकवि बैरागी के स्वर मुखरित हुए थे:—

"चटख म्हारा चम्पा, आई-आई रे ऋतु थारी"

और हमें वहाँ लगा कि चम्पा ही मालवी है।

"चटख म्हारी मालवी, आई रे रितु थारी"

और मालवी मेले में मालवी रितु भी खूब आई।

संस्कृति के सुमन हँसे, गीतों के भ्रमर गूंजे। काव्य के कोकिल कूजे, भावों की सुरभि बौराई, रसिकों की रस-पिपासा बढ़ी, चिन्तकों की चिन्तन-धारा ने दिशा पाई। लोक-कला की कलियाँ महकीं, लोक-नृत्यों के घुंघरू खनके, लोक-गीतों की धुनें अलगूंजे के स्वर में धुलीं और सभी सुहृदयों ने शासक-शासित का भेद-भाव भूलकर, सूचना मन्त्री सहित एक ही जाजम पर जम कर हिन्दी के दिनकर, मालवा के सुमन, और मालवी के चिन्तामणि को सम्मान का अर्घ दिया। पूजा की आरती उतारी और दो दिन तक मालवी की मन्दाकिनी में गहन अवगाहन कर जीवन और आयोजन को सार्थक बनाया।

उपलब्धियाँ:—मालवी मेला विशुद्ध साहित्यिक मंच रहा। राजनीति उसकी देहरी से मीलों दूर रही। मंगलाचरण वेला में यह बात सुस्पष्ट करदी गई कि मालवी मेला और इसी के तारतम्य में भविष्य में आयोजित निमाड़ी, बुन्देली बघेली, छत्तीसगढ़ी आदि म. प्र. की विविध आंचलिक उपभाषाओं के मेले राजनीति से नितांत परे रहेंगे। प्रेरक श्री बैरागीजी ने मार्मिक वाणी में जो कहा उसका तात्पर्य यही है कि 'हमारे इन आंचलिक भाषाओं के मेलों का एक मात्र ध्येय यही है कि हम लोक-भाषाओं के कलम सेवी, कलाकार गीतकार, चिन्तक एक मंच पर बैठकर सुनें सुनायें और जो कुछ कला-साहित्य हमारे प्रदेशीय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अंचलों में यत्र-तत्र बिखरा है उसे सहेजें-समेटें और उसका रसानन्द इस मंच के माध्यम से सर्वसुलभ बनावें। महा-मालव जैसे कथित नारों से या इसी प्रकार के अन्य प्रयोजनों से, जिनसे राजनीति की गन्ध आती है, हमारे ये मंच कभी प्रभावित नहीं होंगे। 'इसी प्रकार मालवी-मेला आगत आंचलिक मेलों का प्रथम चरण था जिसने म. प्र. में विशुद्ध सांस्कृतिक साहित्यिक आयोजनों का द्वार उद्घाटित कर एक श्रेष्ठ उपलब्धि का सृजन किया। निमाड़ी मेला इसी वर्ष खंडवा में होगा। और अन्य मेलों की रूप रेखा भी अपने अपने क्षेत्रों में तैयार हो रही है।

२ **मालवी शोध-संस्थान:**— द्वितीय उपलब्धि थी मालवी शोध-संस्थान की। प्रथम गोष्ठी केवल इसी विषय पर हुई। जो बोले; हृदय से बोले; चिन्तन और अनुभूति की छाप उनके कथन में निहीत थी। शोध-संस्थान में क्यों, कहां, कैसे आदि का उत्तर इस गोष्ठी ने दिया। मालवी शोध-पीठ शासन, विश्व-विद्यालय एवं लोक-क्षेत्र में प्रतिष्ठित हो सकेंगे, जो इस मेले की महत्वपूर्ण उपलब्धि मानी जायेगी।

३ **भावात्मक एकता:**—मालवी के अध्येता, अधिष्ठाता, आराधक और अभिसर्जक एक जाजम पर बैठकर मालवी-प्रसाद पा सकते हैं एवं समता के धरातल पर कंधे से कंधा मिलाये और हाथ में हाथ डाले एक स्वर में गा सकते हैं।

"एक हृदय हो मालवी माता, जय हिन्दी जय नागरी"!

भव्य भावुकों की यह भावात्मक सांस्कृतिक एकता क्या कम उपलब्धि मानी जावेगी?

शीर्ष आशीर्वाद—मालवी मेले को म० प्र० के अरुण-तरुण मुख्यमंत्री पं० श्यामाचरण शुक्लजी का आशीर्वचन प्राप्त हुआ। उन्होंने अन्य आंचलिक भाषाओं (निमाड़ी, बुन्देली, छत्तीसगढ़ी (एवं ऐसी ही अन्यान्य) के मेलों का भी स्वागत करते हुए भरपूर आशीर्वाद दिया जो एक व्यक्ति का नहीं, अपितु एक युग, एक परम्परा, एक समष्टि एवं एक शीर्ष-सशक्त नेतृत्व का आशीर्वाद है। यह आशीर्वाद हमारी पुनीत थाती एवं गौरवमयी उपलब्धि है। यह हमारे लिये एक दिव्य आलोक स्तम्भ है जो निरन्तर हमारा पथ प्रकाशित करता रहेगा।

आवश्यकता—मालवी मेले ने इस बात को उजागर कर दिया कि शोध-पीठ के साथ ही मालवीय-साहित्यकारों की एक अपनी संस्था हो, जो शासन से अनुदान लेकर चिर कर्मरत रहे। वर्षों पूर्व "मालव लोक-साहित्य परिषद् उज्जैन" में स्थापित हुई थी। उसने मालवी का प्रथम अभिषेक किया था। मालवी स्वरों को उसने दीक्षा दी थी। वर्तमान मालवी-मेला उसी की देन है। उसके पश्चात चाहे संस्था रूप में परिषद् अधिक सक्रिय न रही हो, उसके नाम-पट्ट की धूलि भी नहीं पोंछी गई हो, किन्तु उसके संस्थापक, संचालक, और सदस्य इग्लेण्ड के अखिलित से विधान की तरह बिना किसी लिखित विधान के मालवी के प्रति सहज आत्मार्पित रहे; जो संकल्प उन्होंने परिषद् के मंच पर बैठ कर अंगीकार किया था, उसका निर्वाह नेक-नियती इमानदारी और निच्छलभाव से वे आज तक कर रहे हैं। मालवी मेले का सन्देश है कि मालवी की संस्था अवश्य बने जिसकी छत्रछाया में अनेक बार अनेक नगरों में मालवी मेले हर वर्ष जुड़ें और हम सब झूम-झूम कर गा सकें:—

"चटख म्हारी मालवी, आई आई रे रितु थारी"

—मदनकुमार चौबे

—मन्दसोर (म. प्र.)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तस्मै स्वधा !

(जन्म सन् १९०० ई०)
माचलपुर, (रामपुरा)
(निधन सन् १९७१)

तस्मै स्वधा ! !

अध्यक्ष
हिन्दी विभाग होलकर
कॉलेज, इन्दौर, माधव-
कॉलेज, उज्जैन
सेवा निवृत्त–सन् १९५५ ई.

आचार्य पं. कमलाशंकर मिश्र

श्रीमध्यभारत हिन्दी साहित्य समिति, इन्दौर के पूर्व प्रधान-मन्त्री एवं नगर की साहित्य साधना के लिए पूर्णरूपेण समर्पित 'शीलंपरम् भूषणं' के प्रतिमूर्ति पं. कमलाशंकरजी मिश्र का दिनांक २५ सितम्बर ७१ को एक लम्बी बीमारी के पश्चात स्वर्गारोहण हो गया। श्रीमध्यभारत हिन्दी साहित्य समिति, इन्दौर के निर्माणकाल से ही आपने अपने जीवन की प्रत्येक सांस प्रदेश की इस प्राणवान संस्था को समर्पित की। आपही ऐसे व्यक्ति थे जो सन् १९४७ से सन् १९६५ तक, सतत् अठारह वर्षों तक समिति के प्रधानमन्त्री एवं 'वीणा' के प्रमुख सम्पादक के पद को सुशोभित करते रहे। पण्डितजी इस साहित्य साधना मन्दिर की नींव के पहले पत्थरों में से एक थे। उनका सीधा, सरल एवं निरभिमानी व्यक्तित्व उनके स्वावलम्बी जीवन वाटिका का वह सुरभित पारिजात था जो उनके शाश्वत यश की सुरभि को मुक्त हस्त वितरित करता रहा। सन् १९१८ के अ. भा. हि. सा. सम्मेलन के अवसर पर राष्ट्र नायक गाँधीजी के आवाहन पर आपने राष्ट्रभाषा हिन्दी की प्राणप्रतिष्ठा एवं उसके प्रचार-प्रसार के लिए अपना एकान्तिक जीवन अडिग निष्ठा के साथ समर्पित करने का मन ही मन संकल्प लिया था, तबसे एक सच्चे कर्मयोगी की तरह वे साहित्य साधना के महायज्ञ के अध्वर्यु बने रहे।

दो वर्ष पूर्व उनकी साहित्य साधना, निस्वार्थ सेवा एवं हिन्दी के प्रति अविचल निष्ठा से प्रभावित होकर उनकी उनसत्तरवीं वर्ष ग्रंथि के अवसर पर श्रीमध्यभारत हिन्दी साहित्य समिति, इन्दौर ने उनके दीर्घायुष्य एवं मंगल कामनाओं से अभिप्रेरित होकर 'अमृतोत्सव' आयोजित कर उनका सम्मान किया था और उन्हें अभिनन्दन-पत्र एवं श्रद्धनिधि अर्पित की थी। 'वीणा' ने इसी अवसर पर "अमृतोत्सव-अंक" प्रकाशित कर उनके व्यक्तित्व एवं कृतित्व के अनुरूप प्रदेश की साहित्य साधना का लघु संकलन उन्हें अर्पित किया था।

आज पंडितजी हमारे मध्य में नहीं हैं, किन्तु साहित्य साधना एवं हिन्दी के प्रति समर्पण की जो मशाल वे प्रज्ज्वलित कर गए हैं उसे न बुझने देने और उनके द्वारा प्रेरित कार्यों को आगे बढ़ाने की दिशा में श्री मध्य भारत हिन्दी साहित्य समिति इन्दौर पूर्ण रूपेण संकल्पित है।

हम इस साधुमना, यशः काय कर्म योगी की आत्मा की शांति के लिए प्रभु से प्रार्थना करते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समिति-समाचार

प्रधान मंत्रीजी सम्मेलन में

अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग की स्थायी समिति की बैठक में श्री म. भा. हि. सा. समिति इन्दौर के प्रधान मंत्री श्री वैंकटाचार्य स्वामी ने ३१ अक्टूबर को भाग लेकर प्रदेश की साहित्यिक प्रगति, गतिविधियों एवं सम्मेलन की परीक्षा व्यवस्था के सम्बन्ध में चर्चा की।

श्री मोहनलाल भट्ट समिति में

राष्ट्र भाषा प्रचार समिति, वर्धा के प्रधान-मंत्री एवं अ. भा. हि. सा. सम्मेलन की स्थायी समिति के सदस्य पं. मोहनलाल भट्ट अपने इन्दौर आगमन पर श्री म. भा. हिन्दी साहित्य समिति में रात्रि को लगभग ८ बजे पधारे। समिति की ओर से समिति के प्रचार मंत्री श्री शेषनारायण चौहान, प्रबन्ध-मंत्री श्री बंशीधर उपाध्याय एवं 'वीणा' के सम्पादक श्री मोहनलाल उपाध्याय 'निर्मोही' ने 'वीणा' कार्यालय में आपका स्वागत किया। आपके साथ 'समाचार भारती' के स्थानीय संचालक श्री अक्षय मुद्गिल भी थे। आपने 'वीणा' एवं श्री म. भा. हि. साहित्य समिति, इन्दौर की प्रगति पर संतोष प्रकट किया।

शेषनारायण चौहान
प्रचार मन्त्री

प्राप्ति स्वीकार

'वीणा' मालवी अंक (उत्तरार्द्ध) में समीक्ष्य कृतियाँ

भोली का भाषा शास्त्रीय अध्ययन—डॉ. नेमीचन्द जैन। इन्दौर विश्वविद्यालय, इन्दौर
बघेली भाषा और साहित्य—डॉ. भगवतीप्रसाद शुक्ल : साहित्य भवन, इलाहाबाद
भोजपुरी लोकोक्तियाँ और मुहावरे—डॉ. मुक्तेश्वर तिवारी : हिन्दी परिषद् चितवड़ा गांव, बलिया
लोकरंग—संपा. डॉ. महेन्द्र भानावत—भारतीय लोक कला मंडल, उदयपुर

अन्यकृतियाँ

१ **मन की मौज** : राजनाथ पांडेय-प्रका. राजपाल एण्ड सन्स दिल्ली
२ **कालाफूल** : ताराशंकर वन्द्योपाध्याय : (वही)
३ **किस्सा तोता पढ़ाने का** : हंसराज रहबर : (वही)
४ **नई राह पर** : शांति भट्टाचार्य : (वही)
५ **भारतेन्दु काव्यामृत** : चन्द्र : अग्रवाल : रविप्रकाशन, आगरा
६ **एकायन** : गुप्त : रुवाली : विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा
७ **ताखा अम्बारो भारत** : डॉ. महेन्द्र भानावत : भारतीय लोक कला मंडल, उदयपुर
८ **महाभारत** (६), ९ **खुदीराम बोस**, १० **धत्त तेरे की**, ११ **उस्तादों के उस्ताद**, १२ **शाबाश सरोवर**, १३ **जादू की गुड़िया** (प्रत्येक मूल्य १-०० रु.)
प्रकाशक : ज्ञान भारती बाल पाकेट बुक्स लखनऊ
१४ सुमन मनुष्य और स्रष्टा—डॉ. प्रभाकर श्रोत्रिय।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दीपावली के पुनीत पर्व पर

हार्दिक अभिनंदन

दि विनोद मिल्स

कम्पनी लिमिटेड

उज्जैन

दीपचन्द एवं विमल मिल्स सहित

तार : 'बिनोद' फोन : ९५ तथा ९६

दीपावली पर शुभ कामनाएँ

दी इन्दौर मालवा युनाइटेड मिल्स लिमिटेड, इन्दौर

हमारी विशेषताएं--

कोरा, धुला और रंगीन लट्ठा, शर्टिंग, कोटिंग, चेक शर्टिंग, पट्टा ड्रिल, धोती, खाकी जीन, पोपलीन, बुशर्टिंग, प्रिन्टस, बांधनी, कैंडी-क्लाथ, लिन्ट क्लाथ, फलालेन एवं ब्लाकेंटस।

तार-मालवामिल फोन-५६४१, ५६४२ ५६४३ एवं ७५५०

रजिस्टर्ड कार्यालय

सेक्सरिया चेम्बर्स १३८ मेडोज स्ट्रीट, फोर्ट, बम्बई-१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्या आप ऐसे गाय-बैल चाहते हैं

जिनसे प्रतिदिन

पर्याप्त दूध और श्रम शक्ति मिले ?

यदि हाँ तो

अपनी गाय को उन्नत नस्ल के सांड़ से फलाइए

गाय-भैंसों को कृत्रिम रेतन तथा प्राकृतिक गर्भाधान विधियों से फलाने के लिए विभाग की ओर से राज्य भर में ११०० केन्द्रों पर मुफ्त सुविधा उपलब्ध है।

नाटे सांडों द्वारा प्रजनन से—

* नस्ल खराब होती है
* उत्पादकता घटती है

उन्नत सांडों द्वारा प्रजनन से—

* नस्ल सुधरती है
* उत्पादकता बढ़ती है

नाटे सांड नस्ल सुधार के सारे प्रयास विफल कर सकते हैं

इसलिए

* नाटे सांडों को बधिया कराने में सहयोग दीजिए।
* गायों को उन्नत नस्ल के सांडों से ही फलाइए

परामर्श तथा सेवा के लिए

निकट के पशुचिकित्सक से अवश्य मिलें

[संचालनालय पशु चिकित्सा सेवायें, मध्यप्रदेश द्वारा प्रसारित]

मू०प्र०स०—१६८७—ब/७१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हम दो हमारे दो

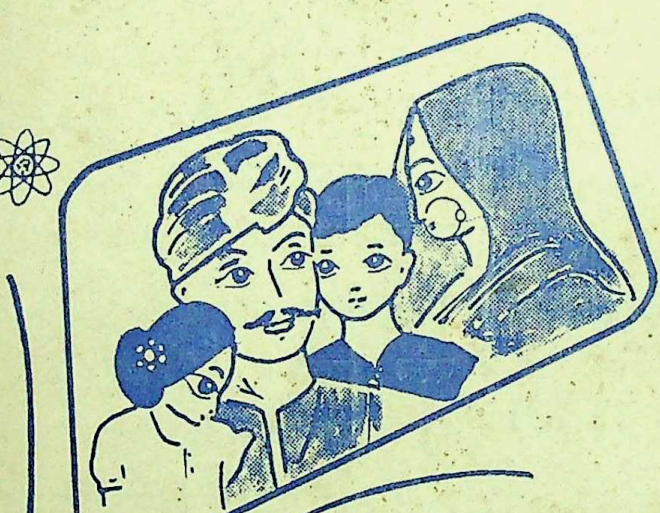

एक बेटा चन्द्रमा सा, एक बेटी
चान्दनी सी
एक आँगन में उजागर
एक बाहर जगमगाएँ।

राज्य परिवार नियोजन ब्यूरो मध्य प्रदेश द्वारा प्रसारित

मुद्रक एवं प्रकाशक : भागीरथ दुबे, प्रबन्धक—श्री मध्यभारत हिन्दी-साहित्य-समिति प्रेस, इन्दौर.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar